बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर

सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड–27

प्रारूप संविधान : खंड प्रति खंड चर्चा
(9.12.1946 से 31.7.1947)

हिंदी 27

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय
प्रारूप संविधान : खंड प्रति खंड चर्चा (9.12.1946 से 31.7.1947)

बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

जन्म : 14 अप्रैल, 1891 परिनिर्वाण 6 दिसंबर, 1956

बाबासाहेब

डॉ. अम्बेडकर

सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड 27

डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड : 27

प्रारूप संविधान : खण्ड प्रति खंड चर्चा (9.12.1946 से 31.7.1947)

पहला संस्करण : 2019 (जून)
दूसरा संस्करण : 2020 (अगस्त)

ISBN : 978-93-5109-135-6

आवरण परिकल्पना : डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी, पी.एच.डी.

पुस्तक के आवरण पर उपयोग किया गया मोनोग्राम बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के लेटरहेड से साभार

ISBN (सेट) : **978-93-5109-129-5**

रियायत के अनुसार सामान्य (पेपरबैक) 1 सेट (खंड 1–40) का मूल्य : रू 1073/-
रियायत नीति (Discount Policy) संलग्न है,

प्रकाशकः
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय,
भारत सरकार
15 जनपथ, नई दिल्ली – 110 001
फोन : 011–23320571
जनसंपर्क अधिकारी फोन : 011–23320588
वेबसाइट :http://drambedkarwritings.gov.in
Email-Id :cwbadaf17@gmail.com

मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स प्रा.लि., W-30 ओखला, फेज–2, नई दिल्ली–110020

परामर्श सहयोग

डॉ. थावरचन्द गेहलोत

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री, भारत सरकार

एवं

अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

श्री रामदास अठावले

सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री कृष्णपाल गुर्जर

सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री रतनलाल कटारिया

सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री आर. सुबह्मण्यम

सचिव

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय भारत सरकार

सुश्री उपमा श्रीवास्तव

अतिरिक्त सचिव एवं सदस्य सचिव, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार

डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी, पी.एच.डी.

निदेशक

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

डॉ. बृजेश कुमार

संयोजक, सी.डब्ल्यू.बी.ए.

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सकंलन (अंग्रेजी)

श्री वसंत मून

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री
भारत सरकार
MINISTER OF SOCIAL JUSTICE & EMPOWERMENT
GOVERNMENT OF INDIA
तथा
अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
CHAIRPERSON, DR. AMBEDKAR FOUNDATION

संदेश

स्वतंत्र भारत के संविधान के निर्माता डॉ. अम्बेडकर, बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे। डॉ. अम्बेडकर एक उत्कृष्ट बुद्धिजीवी, प्रकाण्ड विद्वान, सफल राजनीतिज्ञ, कानूनविद्, अर्थशास्त्री और जनप्रिय नायक थे। वे शोषितों, महिलाओं और गरीबों के मुक्तिदाता थे। डॉ. अम्बेडकर सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष के प्रतीक है। डॉ. अम्बेडकर ने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी क्षेत्रों में लोकतंत्र की वकालत की। एक मजबूत राष्ट्र के निर्माण में डॉ. अम्बेडकर का योगदान अतुलनीय है।

डॉ. अम्बेडकर के लेख एवं भाषण क्रांतिकारी वैचारिकता एवं नैतिकता के दर्शन–सूत्र है। भारतीय समाज के साथ–साथ संपूर्ण विश्व में जहां कहीं भी विषमतावादी भेदभाव या छुआछूत मौजूद है, ऐसे समस्त समाज को दमन, शोषण तथा अन्याय से मुक्त करने के लिए डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण और जीवन–संघर्ष एक उज्ज्वल पथ प्रशस्त करता है। समतामूलक, स्वतंत्रता की गरिमा से पूर्ण, बंधुता वाले एक समाज के निर्माण के लिए डॉ. अम्बेडकर ने देश की जनता का आह्वान किया था।

डॉ. अम्बेडकर ने शोषितों, श्रमिकों, महिलाओं और युवाओं को जो महत्त्वपूर्ण संदेश दिए, वे एक प्रगतिशील राष्ट्र के निर्माण के लिए अनिवार्य दस्तावेज है। तत्कालीन विभिन्न विषयों पर डॉ. अम्बेडकर का चिंतन–मनन और निष्कर्ष जितना उस समय महत्त्वपूर्ण था, उससे कहीं अधिक आज प्रासंगिक हो गया है। बाबासाहेब की महत्तर मेधा के आलोक में हम अपने जीवन, समाज राष्ट्र और विश्व को प्रगति की राह पर आगे बढ़ा सकते हैं। समता, बंधुता और न्याय पर आधारित डॉ. अम्बेडकर के स्वप्न का समाज–"सबका साथ सबका विकास" की अवधारणा को स्वीकार करके ही प्राप्त किया जा सकता है।

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है, कि सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय का स्वायत्तशासी संस्थान, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, "बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर : संपूर्ण वांग्मय" के अन्य अप्रकाशित खण्ड 22 से 40 तक की पुस्तकों को, बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के अनुयायियों और देश के आम जन–मानस की मांग को देखते हुए मुद्रत किया जा रहा है।

विद्वान, पाठकगण इन खंडों के बारे में हमें अपने अमूल्य सुझाव से अवगत कराएंगे तो हिंदी में अनुदित इन खंडों के आगामी संस्करणों को और बेहतर बनाने में सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

(डॉ. थावरचंद गेहलोत)

बाबासाहेब अम्बेडकर के सम्पूर्ण वाड्मय (Complete CWBA Vols.) का विमोचन

हिंदी और अंग्रेजी में CWBA / सम्पूर्ण वाड्मय, (Complete Volumes) बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के संग्रहित कार्यों के संपूर्ण खण्ड, डॉ. थावरचंद गेहलोत, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री, और अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा जारी किया गया है। साथ ही डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी, निदेशक, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान और श्री सुरेन्द्र सिंह, सदस्य सचिव भी इस अवसर पर उपस्थित थे। हिंदी के खंड 22 से खंड 40 तक 2019 में पहली बार प्रकाशित हुए है।

उपमा श्रीवास्तव, आई.ए.एस.
अपर सचिव
UPMA SRIVASTAVA, IAS
Additional Secretary

भारत सरकार
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
शास्त्री भवन, नई दिल्ली-110001
Government of India
Ministry of Social Justice & Empowerment
Shastri Bhawan, New Delhi-110001
Tel. : 011-23383077 Fax : 011-23383956
E-mail : as-sje@nic.in

प्राक्कथन

भारतरत्न डॉ. बी.आर. अम्बेडकर भारतीय सामाजिक–राजनीतिक आंदोलन के ऐसे पुरोधा रहे हैं, जिन्होंने जीवनपर्यंत समाज के आख़िरी पायदान पर संघर्षरत् व्यक्तियों की बेहतरी के लिए कार्य किया। डॉ. अम्बेडकर बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे इसलिए उनके लेखों में विषय की दार्शनिक मीमांसा प्रस्फुटित होती है। बाबासाहेब का चिंतन एवं कार्य समाज को बौद्धिक, आर्थिक एवं राजनैतिक समृद्धि की ओर ले जाने वाला तो है ही, साथ ही मनुष्य को जागरूक मानवीय गरिमा की आध्यात्मिकता से सुसंस्कृत भी करता है।

बाबासाहेब का संपूर्ण जीवन दमन, शोषण और अन्याय के विरुद्ध अनवरत क्रांति की शौर्य–गाथा है। वे एक ऐसा समाज चाहते थे जिसमें वर्ण और जाति का आधार नहीं बल्कि समता व मानवीय गरिमा सर्वोपरि हो और समाज में जन्म, वंश और लिंग के आधार पर किसी प्रकार के भेदभाव की कोई गुंजाइश न हो। समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के प्रति कृतसंकल्प बाबासाहेब का लेखन प्रबुद्ध मेधा का प्रामाणिक दस्तावेज़ है।

भारतीय समाज में व्याप्त विषमतावादी वर्णव्यवस्था से डॉ. अम्बेडकर कई बार टकराए। इस टकराहट से डॉ. अम्बेडकर में ऐसा जज़्बा पैदा हुआ, जिसके कारण उन्होंने समतावादी समाज की संरचना को अपने जीवन का मिशन बना लिया।

समतावादी समाज के निर्माण की प्रतिबद्धता के कारण डॉ. अम्बेडकर ने विभिन्न धर्मों की सामाजिक, धार्मिक व्यवस्था का अध्ययन व तुलनात्मक चिंतन–मनन किया।

मैं प्रतिष्ठान की ओर से माननीय सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री, भारत सरकार का आभार व्यक्त करती हूँ जिनके सद्परामर्श एवं प्रेरणा से प्रतिष्ठान के कार्यों में अपूर्व प्रगति आई है।

उपमा श्रीवास्तव

(उपमा श्रीवास्तव)
अतिरिक्त सचिव
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय,
भारत सरकार, एवं
सदस्य सचिव

प्रस्तावना

बाबासाहेब डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर एक प्रखर व्यक्तित्व, ज्ञान के प्रतीक और भारत के सुपुत्र थे। वह एक सार्वजनिक बौद्धिक, सामाजिक क्रांतिकारी और एक विशाल क्षमता संपन्न विचारक थे। उन्होंने सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों के व्यावहारिक विश्लेषण के साथ–साथ अंतःविषयक दृष्टिकोणों को अपने लेखन और भाषणों के माध्य से प्रभावित किया जो बौद्धिक विषयों और भावनाओं को अभिव्यक्त एवं आंदोलित किया। उनके लेखन में वंचित वर्ग के लोगों के लिए प्रकट न्याय और मुक्ति की गहरी भावना है। उन्होंने न केवल समाज के वंचित वर्गों की स्थितियों को सुधारने के लिए अपना जीवन समर्पित किया, बल्कि समन्वय और 'सामाजिक समरसता' पर उनके विचार राष्ट्रीय प्रयास को प्रेरित करते रहे। उम्मीद है कि ये खंड उनके विचारों को समकालीन प्रासंगिकता प्रदान कर सकते हैं और वर्तमान समय के संदर्भ में डॉ. अम्बेडकर के पुनःपाठ की संभावनाओं को उपस्थित कर सकते हैं।

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, भारत के साथ–साथ विदेशों में भी जनता के बीच बाबासाहेब डॉ. अंबेडकर की विचारधारा और संदेश के प्रचार–प्रसार हेतु स्थापित किया गया है। यह बहुत ख़ुशी की बात है कि सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री के नेतृत्व में प्रतिष्ठान के शासी निकाय के एक निर्णय के परिणामस्वरूप, तथा पाठकों की लोकप्रिय माँग पर डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, बाबासाहेब अम्बेडकर के हिंदी में संपूर्ण वांग्मय (Complete CWBA Volumes) का दूसरा संस्करण पुनर्मुद्रित कर रहा है।

मैं संयोजक, अनुवादकों, पुनरीक्षकों, आदि सभी सहयोगियों, एवं डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान में अपनी सहायक, कुमारी रेनू और लेखापाल, श्री नन्दू शॉ के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिनकी निष्ठा एवं सतत् प्रयत्न से यह कार्य संपन्न किया जा सका है।

विद्वान एवं पाठकगण इन खंडों के बारे में सुझाव से डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान को उसकी वैधानिक ई–मेल आई.डी. **cwbadaf17@gmail.com** पर अवगत कराएं ताकि, अनुदित इन खंडों के आगामी संस्करणों को और बेहतर बनाने में सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान हमेशा पाठकों को रियायती कीमत पर खंड उपलब्ध कराने के लिए प्रयास करता रहा है, तदनुसार आगामी संस्करण का भी रियायत नीति (Discount Policy) के साथ बिक्री जारी रखने का निर्णय लिया गया है। अतः प्रत्येक खंड के साथ प्रतिष्ठान की छूट नीति को संलग्न कर दिया गया है। आशा है कि ये खंड पाठकों के लिए प्रेरणा का स्रोत बने रहेंगे।

(डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी)
निदेशक, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार,

15, जनपथ,
नई दिल्ली

जिस समाज में कुछ वर्गों के लोग जो कुछ चाहें वह सब कुछ कर सकें और बाकी वह सब भी न कर सकें जो उन्हें करना चाहिए, उस समाज के अपने गुण होते होंगे, लेकिन इनमें स्वतंत्रता शामिल नहीं होगी। अगर इंसानों के अनुरूप जीने की सुविधा कुछ लोगों तक ही सीमित है, तब जिस सुविधा को आमतौर पर स्वतंत्रता कहा जाता है, उसे विशेषाधिकार कहना अधिक उचित होगा।

—डॉ. भीमराव अम्बेडकर

विषय सूची

रियायत नीति (Discount Policy)

अनुच्छेद 1

*माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर (बम्बई: जनरल):**

श्रीमान् उपाध्यक्ष महोदय, मुझे खेद है कि मैं प्रो. के.टी. शाह का संशोधन स्वीकार नहीं कर सकता। **संक्षेप में मेरी दो आपत्तियाँ हैं। पहली आपत्ति तो यह है, जैसा कि मैं प्रस्ताव के समर्थन में सदन में दिये अपने उद्घाटन भाषण में कह चुका हूँ कि संविधान राज्य के विभिन्न अंगों के कार्यों को विनियमित करने वाली एक क्रियाविधि मात्र है। यह कोई ऐसा तंत्र नहीं है जिसके माध्यम से किसी दल के किन्हीं सदस्यों को पदासीन कर दिया जाता है। राज्य की नीति क्या हो, समाज को सामाजिक व आर्थिक दृष्टि से किस प्रकार व्यवस्थित किया जाये, ये ऐसे मसले हैं जो स्वयं लोगों द्वारा समय तथा परिस्थितियों के अनुसार तय किए जाने चाहिएं। संविधान स्वत: यह निर्धारित नहीं कर सकता, क्योंकि ऐसा करना लोकतंत्र को पूरी तरह से नष्ट करने जैसा होगा। यदि आप संविधान में यह व्यवस्था करते हैं कि राज्य का सामाजिक स्वरूप एक विशेष प्रकार का होगा तो मेरी दृष्टि में, आप लोगों से अपने सामाजिक स्वरूप तय करने की आजादी छीन रहे हैं जिसमें वे रहना चाहते हैं। आज यह बिल्कुल सम्भव है कि अधिकतर लोग यह मान लें कि समाज की समाजवादी व्यवस्था समाज की पूंजीवादी व्यवस्था से बेहतर है। परंतु पूर्णत: यह भी संभव हो सकता है कि चिंतनशील लोग सामाजिक व्यवस्था के कुछ दूसरे स्वरूप ईज़ाद कर लें जो आज या कल की समाजवादी व्यवस्था से बेहतर साबित हो। इसलिए मैं नहीं समझता कि संविधान को लोगों को एक विशेष रूप में रहने के लिए बाध्य करना चाहिए और इसके बारे में तय करने का अधिकार लोगों पर ही छोड़ देना चाहिए जिसकी वजह से संशोधन का विरोध किये जाने का यह पहला कारण है।

दूसरा कारण है कि संशोधन बिलकुल अनावश्यक है। मेरे माननीय मित्र प्रो. शाह ने इस तथ्य का ध्यान नहीं रखा है कि संविधान में सम्मिलित मूल अधिकारों के अलावा हमने दूसरी धाराओं का भी प्रावधान किया है जो राज्य नीति निर्देशात्मक सिद्धांतों से संबंधित हैं। यदि मेरे माननीय मित्र भाग IV में समाविष्ट अनुच्छेदों को पढ़ें तो वह पायेंगे कि विधायिका और कार्यपालिका दोनों को ही संविधान द्वारा नीति के स्वरूप के बारे में कुछ जिम्मेवारियाँ सौंपी गई हैं। अब अनुच्छेद 31 को पढ़ें जो इस मामले से संबंधित है। इसमें कहा गया है–

"राज्य, विशेषकर निम्नलिखित बातों को संरक्षित करने हेतु अपनी नीति को निर्देशित करेगा –

---

* सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), खण्ड VIII, 15 नवम्बर, 1948, पृ. 401-02

** प्रो. के.टी. शाह का संशोधन डॉ. अम्बेडकर के भाषण के बाद प्रस्तुत किया गया।

(i) कि नागरिकों को, पुरुषों और स्त्रियों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन का अधिकार हो;

(ii) कि समाज के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व व नियंत्रण का इस प्रकार वितरण हो जिससे कि वे सभी के लिए उपयोगी हों;

(iii) कि आर्थिक तंत्र के संचालन से सम्पत्ति तथा उत्पादन के साधनों का संकेन्द्रीकरण न हो, जिससे सभी का नुकसान होता हो;

(iv) कि पुरुषों तथा स्त्रियों दोनों ही के लिए समान कार्य के लिए समान वेतन हो;

लगभग इसी प्रकार की कुछ अन्य बातें हैं। प्रो. शाह से मैं यह पूछना चाहता हूँ -

यदि ये निर्देशात्मक सिद्धांत जिनकी ओर मैंने ध्यान आकर्षित किया है, की दिशा और विषयवस्तु समाजवादी नहीं है तो मैं यह समझने में असफल हूँ कि इससे अधिक समाजवाद और क्या हो सकता है?

इसलिए मेरा कहना है कि ये समाजवादी सिद्धांत संविधान में पहले ही प्रस्तुत किए जा चुके हैं और इस संशोधन को स्वीकार करना अनावश्यक है।

* * * *

[प्रो. के.टी. शाह का संशोधन जैसा अधोलिखित है, पर लिया गया।]

* **श्रीमान् उपाध्यक्ष :** प्रश्न है-

"कि अनुच्छेद 1 की धारा (1) में 'होगा' शब्द के पहले 'निरपेक्ष धर्म, संघीय, समाजवाद' शब्दों को अन्तर्विष्ट किया जाए।"

प्रस्ताव अस्वीकृत हो गया।

श्रीमान् उपाध्यक्ष-मैं एक बात स्पष्ट करना चाहता हूँ। डॉ. अम्बेडकर द्वारा उत्तर दे देने के पश्चात् मैं चर्चा को आगे बढ़ाने की अनुमति नहीं दूँगा। मैं यह भूल एक बार कर चुका हूँ। मैं इसे दोहराऊँगा नहीं। (हँसी)

महबूब अली बेग साहिब बहादुर (मद्रास - मुसलमान) : श्रीमान् उपाध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ -

"कि अनुच्छेद 1 की धारा (1) में 'राज्यों' शब्द के स्थान पर 'प्रांतों' शब्द को प्रतिस्थापित किया जाए।"

---

* सी.ए.डी. अंक VII, 15 नवम्बर, 1948, पृ. 403

महोदय आपको याद होगा कि जब डॉ. अम्बेडकर ने प्रारुप संविधान पर विचार करने का प्रस्ताव किया था तब सरकार की रूपरेखा पर विचार करते हुए उन्होंने कहा था कि–

श्रीमान् उपाध्यक्ष: हम इस तरह की चर्चा नहीं चाहते। मैं माननीय सदस्य से अनुरोध करता हूँ कि वे तभी बोलें जब उनके पास कहने के लिए कुछ नया हो।

* * * *

महबूब अली बेग साहिब बहादुर -- यदि डॉ. अम्बेडकर कहते हैं कि "Union" "यूनियन" शब्द का उपयोग किए जाने का कोई महत्वपूर्ण कारण नहीं है तो फिर हम सही शब्द 'फेडरेशन' का प्रयोग क्यों न करें, लेकिन यदि 'यूनियन' शब्द इस उद्देश्य से प्रयुक्त किया गया है कि आगे चलकर संघीय सरकार को एकात्मक सरकार में बदल दिया जाये तो फिर इस सदन को इसी समय सही शब्द का प्रयोग करना चाहिए ताकि भविष्य में कोई सत्ता चाहने वाली पार्टी, जो सत्ता में आसानी से आ सकती है, के लिए इसे एकात्मक सरकार में परिवर्तित करना कठिन हो। इसलिए इस सदन को 'यूनियन' शब्द के बजाय सही शब्द 'फेडरेशन' का प्रयोग करना चाहिए। महोदय, इस संशोधन को प्रस्तुत करने के पीछे मेरा यही तर्क है। अगर आप चाहते हैं कि सरकार आवश्यक रूप से संघीय सरकार हो और यह एकात्मक सरकार न हो और यदि आप भविष्य में किसी सत्ता चाहने वाली पार्टी को इसे एकात्मक सरकार में बदलने से रोकना चाहते हैं और वह फासीवादी तथा अधिनायकवादी न बने तो यह हमारा कर्त्तव्य है कि हम अब उचित शब्द जो कि 'फेडरेशन' है का प्रयोग करें। इसलिए, महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ कि 'यूनियन' शब्द के स्थान पर 'फेडरेशन' शब्द प्रतिस्थापित किया जाये।

माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर : मैं यह संशोधन स्वीकार नहीं करता।

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

* * * *

[*] **माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्ता (सी.पी. एवं बेरार-जनरल):** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ :

"कि अनुच्छेद 1 में जहाँ कहीं भी 'राज्य' शब्द आता है उसके स्थान पर 'प्रदेश' शब्द प्रतिस्थापित किया जाए और परिणामी परिवर्तन सम्पूर्ण प्रारुप संविधान में किए जाएं।"

* * * *

[†]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** मैं इस संशोधन का विरोध करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : प्रश्न है–

---

[*] सी.ए.डी. (आधिकारी प्रतिवेदन) खण्ड VII, 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 406

[†] सी.ए.डी., खण्ड VII, 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 412

"कि अनुच्छेद 1 में जहाँ कहीं भी "राज्य" शब्द आता है उसे "प्रदेश" से प्रतिस्थापित किया जाए और परिणामी परिवर्जन सम्पूर्ण प्रारूप संविधान में किए जाएं।"

मैं समझता हूँ कि इसके विरोध में बहुमत है।

श्री एच.वी. कामथ : मैं मत विभाजन की माँग करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मुझे यह लगता है कि इसके विरोध में बहुमत है। इसलिए मुझे विभाजन के लिए कहने की आवश्यकता नहीं है। मेरे पास इस आग्रह को न मानने का अधिकार है। मैं माननीय सदस्यों से स्थिति पर विचार करने का अनुरोध करता हूँ। यह बिल्कुल स्पष्ट लगता है कि इस प्रस्ताव के विरोध में बहुमत है।

माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्ता : मैं स्थिति को स्वीकार करता हूँ कि विरोध पक्ष का बहुमत है।

माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरू : क्या मैं सुझाव दे सकता हूँ कि हम गिनती करने के स्थान पर केवल हाथ उठा दें। उससे साफ संकेत मिलेगा कि मामले की क्या स्थिति है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : क्या माननीय श्री जी.एस. गुप्ता स्वीकार करते हैं कि इसके विरोध में बहुमत है?

माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्ता – मैं इस स्थिति को स्वीकार करता हूँ कि इसके विरोध में बहुमत है।

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

श्री एच.वी. कामथ : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ –

"कि अनुच्छेद 1 की धारा (1) में "राज्य" शब्द के लिए "प्रांत" शब्द प्रतिस्थापित किया जाए।"

(चर्चा आगे है।)

* * * *

[*]**माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं इस संशोधन को स्वीकार नहीं करता।

(इस समय श्री हिम्मत सिंह और के. माहेश्वरी बोलने के लिए उठे।)

श्रीमान् उपाध्यक्ष – माननीय डॉ. अम्बेडकर पहले ही इस बहस का उत्तर दे चुके हैं और मुझे खेद है कि मैं इस प्रस्ताव पर आगे बहस की अनुमति नहीं दे सकता।

पंडित हृदयनाथ कुँजरू (संयुक्त प्रांत – जनरल) : महोदय, यदि किसी सदस्य द्वारा प्रस्तुत प्रत्येक प्रस्ताव के बाद आप डॉ. अम्बेडकर से पूछते हैं कि क्या वे इससे सहमत हैं और उनको अपने विचार व्यक्त करने की अनुमति देने के बाद आप अन्य सदस्यों को विषय पर बोलने से वंचित कर देते हैं तो सदन के लिए यह बहुत कठिन स्थिति होगी।

---

* सी.ए.डी., खण्ड VII, 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 413

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मुझे डर है कि पंडित ह्रदयनाथ कुँजरू को मेरी स्थिति का सही एहसास नहीं है। मैं यहाँ प्रत्येक सदस्य को हर संभव सुविधा देने के लिए सदैव तैयार हूँ। इसके लिए जो मैने पिछले कुछ दिनों में किया है उसका संदर्भ देने के अतिरिक्त मुझे आगे कुछ साबित करने की जरूरत नहीं है। लेकिन अभी हमारे पास वक्त की कमी है। श्रीमान् कामथ द्वारा संशोधन का प्रस्ताव प्रस्तुत करने के बाद मैंने यह देखने के लिए कुछ समय तक इन्तजार किया कि क्या कोई खड़ा हुआ है और कोई खड़ा नहीं हुआ और जब विशेषकर मैंने पाया कि श्रीमान् कामथ ने तर्कों को दोहराया है तब मैंने सोचा कि मैं डॉ. अम्बेडकर से यह पूछकर कि क्या वह जवाब देना चाहते हैं सदन की इच्छाओं के विरुद्ध नहीं जाऊँगा। अगर मैं सदन का रवैया समझने में असफल रहा हूँ जो इसके लिए मुझे खेद है।

पंडित ह्रदयनाथ कुँजरू : यह बिल्कुल आपका अधिकार है कि उस अनुच्छेद पर चर्चा की अनुमति न दें जिसे आप महत्वहीन समझते हैं या जिस पर आप सोचते हैं कि पर्याप्त चर्चा हो चुकी है। चर्चा समाप्त करने की आपको शक्ति प्राप्त है और प्रभारी सदस्य को आप उत्तर देने के लिए कह सकते हैं। यदि इस शक्ति का प्रयोग करके ही आपने डॉ. अम्बेडकर से उत्तर देने को कहा है तो इस पर कोई आपत्ति नहीं की जा सकती।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : तब मैं संशोधन पर मत लेता हूँ।

श्रीमान् कामथ का प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

* * * *

[*]**श्री महावीर त्यागी :** महोदय, मैं बहुत उत्सुक नहीं हूँ कि मेरे संशोधन में वर्णित सभी शब्दों को अन्तर्विष्ट कर लिया जाये। मैं यह भी नहीं चाहता हूँ कि मैं भाषण दूँ और सदन का समय बर्बाद करूँ। लेकिन मैं एक बात स्पष्ट कर देना चाहता हूँ और इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए मैं औपचारिक रूप से इस संशोधन का प्रस्ताव करूँगा–

"कि अनुच्छेद 1 की धारा (1) में "राज्यों" शब्द के लिए "गणतंत्रीय राज्य तथा केन्द्र की सम्प्रभुता लोगों के पूर्ण निकाय में निहित रहेगी," शब्दों से प्रतिस्थापित किया जाए।"

* * * *

[!]**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** मैं अब इस संशोधन पर मत लूँगा।

श्री महावीर त्यागी : श्रीमान् उपाध्यक्ष महोदय, मेरे विचार से जो विद्वान प्रारूपकार ने कहा है, अर्थात् सम्प्रभुता इस प्रारुप के बावजूद, लोगों में निहित रहेगी, मैं अपने

[*] सी.ए.डी., खण्ड VII 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 413

[!] वही, पृष्ठ 418

संशोधन को स्वीकार करने पर जोर नहीं देना चाहता। महोदय, मैं आशा करता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर सहमत होंगे कि इस प्रारूप का अर्थ है कि सम्प्रभुता लोगों में निहित है, और उनका स्पष्टीकरण भविष्य में संदर्भ के लिए रिकॉर्ड में दर्ज कर लिया जायेगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : निस्संदेह, यह लोगों में निहित है। मैं अपने मित्र से कहना चाहता हूँ कि मुझे तनिक भी आपत्ति न होगी यदि यह मामला एक बार फिर तब उठाया जाता है जब हम उद्देशिका पर चर्चा करेंगे।

श्री महावीर त्यागी : तब मैं सदन से अपने संशोधन को वापस लेने की अनुमति चाहता हूँ।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस लिया गया।

प्रो. के.टी. शाह : श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, मैं यह प्रस्ताव करता हूँ -

"कि अनुच्छेद 1 की धारा (1) में 'राज्य' शब्द के पहले 'आपस में समान' शब्दों को जोड़ा जाए।"

(प्रो. शाह ने संशोधन की व्याख्या की और उसके बाद चर्चा हुई।)

[1]**माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं इस संशोधन का विरोध करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं संशोधन को मतदान के लिए रखता हूँ।

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 1 की धारा (1) के अंत में, अधोलिखित को अन्तर्विष्ट किया जाए''।

"और भारत को संयुक्त राज्य के नाम से जाना जायेगा।" महोदय, यह विवादरहित संशोधन है ......

.... अन्य संशोधन इसके विकल्प हैं। मैं प्रस्ताव करता हूँ --

"कि अनुच्छेद 1 की धारा (1) के अंत में, अधोलिखित को अन्तर्विष्ट किया जाए"–

"और 'भारत को संघ के नाम से जाना जायेगा'।"

.... मेरा दूसरा संशोधन यह है। मैं प्रस्ताव करता हूँ–

---

[1] सी.ए.डी., अंक VII, 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 421

" कि अनुच्छेद 1 की धारा (1) के अंत में, अधोलिखित को सन्निविष्ट किया जाए–"

"और 'भारतीय संघ' के नाम से जाना जायेगा।"

महोदय, मैं इन तीन विकल्पों को सामने रखता हूँ। मैं प्रथम को वरीयता दूँगा लेकिन यह सब सदन पर निर्भर करता है कि वह इनके बारे में क्या राय रखता है।

[संशोधन पर कामथ की आलोचना के बाद डॉ. अम्बेडकर उत्तर देने के लिए उठे।]

* * * *

*[*]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** – महोदय, मैं इन सभी संशोधनों का विरोध करता हूँ। प्रथम संशोधन के संबंध में कि 'भारत' को 'भारत के संयुक्त राज्य' के नाम से जाना जाये, मेरे मित्र श्री कामथ ने जो तर्क दिया है उससे मैं अंतःकरण से सहमत हूँ। मैं अपने विचार पहले ही व्यक्त कर चुका हूँ कि मैने 'यूनियन' शब्द का क्यों प्रयोग किया और 'डरेशन' शब्द का प्रयोग क्यों नही किया।

दूसरे संशोधन के संबंध में, कि भारत को 'भारत को संघ' के नाम से जाना जाये, इसे भी मैं अनावश्यक कहता हूँ क्योकि हमारा हमेशा ही यह मत है कि इस देश को 'भारत' के नाम से ही जाना जाये बिना कोई यह संकेत देते हुए कि भारतीय संघ के घटक हिस्सों का इसके शीर्षक नाम से क्या संबंध है। भारत अपने पूरे इतिहास में 'भारत' के नाम से ही जाना जाता रहा है। यू.एन.ओ. के सदस्य के रूप में भी देश का नाम 'भारत' ही है और सभी समझौते इसी नाम से किए जाते हैं और मेरे विचार से देश के नाम से किसी भी अर्थ में यह संकेत नहीं जाना चाहिए कि यह किन अधीनस्थ भागों या हिस्सों से मिलकर बना है। इसलिए जहाँ तक इन संशोधनों का संबंध है, मैं संशोधनों का विरोध करता हूँ और यह मानता हूँ कि जिस रूप में प्रारुप प्रस्तुत किया गया है यह सर्वोत्तम है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं अब एक के बाद एक संशोधन पर मत लूंगा।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : महोदय, मैं संशोधनों को वापस लेने की अनुमति मांगता हूँ।

सभा की अनुमति से, संशोधन वापस ले लिए गए।

श्रीमान् उपाध्यक्ष – संशोधन संख्या 113।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : मैं 113 का प्रस्ताव नहीं कर रहा हूँ। लेकिन मैं 114 का प्रस्ताव कर रहा हूँ। महोदय, मैं प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 1 की धारा (2) में, 'दि' शब्द जो शुरू में आया है का लोप कर दिया जाए।"

* * * *

[*] सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 422

#**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं औचित्य का प्रश्न उठाता हूँ। मेरा औचित्य का प्रश्न यह है कि यह तब तक संशोधित नहीं हो सकता जब तक कि यह मूल प्रस्ताव का अर्थ न बदल दे। मैं मई के संसदीय आचरण का संदर्भ ढूँढने का प्रयत्न कर रहा हूँ। लेकिन मैं इस बात को इसी क्षण उठाना चाहूँगा। यदि मेरे मित्र मुझे क्षमा करें तो मैं कहना चाहूँगा कि उन्हें सभी प्रकार के संशोधनों, जैसे – अमुक स्थान पर अल्पविराम चाहिए, अमुक स्थान पर नहीं चाहिए, इत्यादि, का प्रस्ताव करने की आदत है और मेरे विचार से हमें ऐसी चीजों पर शुरू में ही विराम लगा देना चाहिए।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : स्वतंत्रता के शुरू में ही यदि मुझे इस तरह रोका जायेगा तो मैं हार मानता हूँ और सभापति की बात मानता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : औचित्य के प्रश्न पर आपका क्या उत्तर है?

श्रीमान् नज़ीरूद्दीन अहमद : औचित्य के प्रश्न पर मेरा उत्तर यह है कि मैं अनुच्छेद से 'दि' शब्द को निकालना चाहता हूँ और इसलिए यह एक संशोधन है। यह निश्चित रूप से एक प्रारुप संशोधन है। इसका इस आधार पर विरोध किया जा सकता है कि यह महत्वहीन, अतार्किक या उद्देश्यविहीन या निरर्थक है और ऐसे ही अन्य आधारों पर। लेकिन डॉ. अम्बेडकर का यह कहना कि यह एक संशोधन ही नहीं है, उचित नहीं है। तकनीकी आधार पर इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि यह एक संशोधन नहीं है।

और मेरे माननीय मित्र ने जो यह कहा है कि मुझे कॉमा, पूर्ण विराम आदि जैसी छोटी-छोटी बातों पर संशोधन प्रस्ताव करने की आदत है उसके बारे में मुझे उनको तथा सदन को यह सूचित करते हुए खुशी हो रही है, कि जहाँ तक इस संशोधन का संबंध है मैने यह आदत त्याग दी है। (हँसी)

श्रीमान् उपाध्यक्ष : आप कहते हैं कि यह एक प्रारूप संशोधन है। क्या हम इसे प्रारुप समिति तथा इसके अध्यक्ष पर इसे तीसरे पठन के दौरान देखे जाने के लिए नहीं छोड़ सकते। मुझे विश्वास है कि यदि इनमें कुछ सार है तो वे इन संशोधनों को स्वीकार कर लेंगे।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : उस स्थिति में, मामले को सदन के फैसले के लिए छोड़े जाने के स्थान पर प्रारुप समिति के लिए छोड़ने जैसा होगा। प्रारुप समिति के प्रवक्ता पहले ही अपनी राय व्यक्त कर चुके हैं। इसलिए, यदि मैं इसके प्रारुप समिति के लिए छोड़े जाने के लिए तैयार हो जाऊं तो उससे अच्छा है कि मैं इसे वापस ले लूँ। इसलिए मुझे फिर कहना पड़ेगा कि 'दि' शब्द नाम का हिस्सा नहीं है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं इस पर डॉ. अम्बेडकर को सुनने की प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मेरी समझ में नहीं आता कि माननीय सदस्य को 'दि' शब्द पर क्यों आपत्ति है। 'दि' एक निश्चयवाचक अव्यय है और यह

वही, पृ. पृ. 422-24

नितान्त आवश्यक है क्योंकि हम उन राज्यों की बात कर रहे हैं जो अनुसूची में हैं। हम सामान्य रूप में राज्यों की बात नहीं कर रहे बल्कि किन्हीं विशेष राज्यों की बात कर रहे हैं जिनका अनुसूची में उल्लेख है। इसलिए निश्चयवाचक अव्यय 'दि' आवश्यक है।

दूसरे, मैं अपने बारे में बोलते हुए यह कहना चाहूँगा कि किसी भारतीय के लिए यह मानना गलत होगा कि वह अंग्रजी भाषा पर इस प्रकार अधिकार पा सकता है कि वह इस बात पर जोर दे कि यहाँ अल्प विराम की जरूरत है, वहाँ एक अर्द्धविराम आवश्यक है, या 'ए' अव्यय यहाँ सही है और अमुक अव्यय सही नहीं है आदि, यह बात मैं स्वयं पर ही लागू करता हूँ। यदि मेरे मित्र अंग्रेजी भाषा के संबंध में स्वयं के निपुण व्याकरणशास्त्री होने का बेजा दावा करना चाहते हैं तो मैं उनका ध्यान आस्ट्रेलियाई संविधान की ओर खींचना चाहूँगा जहाँ से ये शब्द हमने लिए हैं और जहाँ निश्चयवाचक अव्यय 'दि' का प्रयोग किया गया है। इसलिए मैं आस्ट्रेलियाई संविधान का सहारा लेता हूँ जिसके बारे में मेरा मानना है और सभी को यह मानना चाहिए कि अच्छे प्रारूपकारों ने उसका प्रारुप तैयार किया था, जो अंग्रेजी भाषा के अच्छे जानकार रहे होंगे और उन्हें हम भाषा की भूल करने का दोषी नहीं ठहरा सकते।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं संशोधन को मतदान हेतु रखता हूँ।

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : संशोधन संख्या 119, श्रीमान् नजीरुद्दीन अहमद।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 1 की धारा (3) के उपखण्ड (स) में 'ऐज मे' शब्दों के बाद 'हियरआफ्टर' शब्द को अन्तर्विष्ट किया जाये।"

महोदय, प्रारुप समिति के माननीय अध्यक्ष को नाराज करने का जोखिम उठाते हुए मैंने इस संशोधन का प्रस्ताव किया है। लेकिन बड़े आदर के साथ मेरा कहना है कि सदस्यों के दिमाग में जो बातें आती हैं उन्हें सदन के समक्ष रखा जाना चाहिए और उस पर सदन की राय ली जानी चाहिए। यदि मैंने किसी सदस्य को नाराज कर दिया हो .....

श्रीमान् उपाध्यक्ष : किसी को नाराज करने का प्रश्न ही नही है।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : महोदय, मैं विनम्रतापूर्वक यह कहता हूँ कि संदर्भ से 'हियरआफ्टर' शब्द का संकेत मिलता है – अर्थात् ऐसे राज्य जिनका भविष्य में अधिग्रहण किया जा सकता है। इसलिए शब्द 'हियरआफ्टर' उपयुक्त है और मैं सदन से इसे अन्तर्विष्ट करने पर विचार करने का अनुरोध करता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं कहता हूँ कि यह बिल्कुल अनावश्यक है और मैं इसका विरोध करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं संशोधन को मतदान के लिए रखता हूँ।

यह संशोधन अस्वीकृत हुआ।

[सदन 17 नवम्बर, 1948 तक के लिए स्थगित कर दिया गया।]

* * * *

[*]**श्रीमान् उपाध्यक्ष (डॉ. एच.सी. मुखर्जी):**हम अब और संशोधन लेंगे।

संशोधन संख्या 126 – प्रो. शाह।

प्रो. के.टी. शाह : (बिहार जनरल) श्रीमान् उपाध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 1 की धारा (3) के उपखण्ड (स) के अंत में अधोलिखित को जोड़ा जाए।"

'अथवा जो संघ में मिलने, सम्मिलित होने या विलय होने के लिए सहमत हो सकें'।

[इसके बाद प्रो. शाह का भाषण हुआ।]

* * * *

[♣]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई जनरल) :** महोदय, मैं इस संशोधन का विरोध करता हूँ।

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

* * * *

प्रो. के.टी. शाह – श्रीमान् उपाध्यक्ष,महोदय, यह संशोधन जो मेरे नाम में है, इस प्रकार है–

"कि अनुच्छेद 1 में अधोलिखित प्रतिबंध को जोड़ा जाए–

'बशर्ते कि इस संविधान की कई अनुसूचियों में तथा बाद में आने वाले विभिन्न अनुच्छेदों में निहित विशेषताओं अथवा भेदों को इस संविधान के लागू होने की तारीख से अधिक से अधिक दस वर्ष के अंतराल के अन्दर समाप्त कर दिया जाएगा और भारत संघ के सदस्य राज्यों को समान आधार पर ग्राम पंचायतों के ऐसे समूह के रूप में संगठित किया जायेगा जो आपस में सहकारी रूप से संगठित होंगी और संघ के अंदर लोकतांत्रिक इकाइयों के रूप में कार्य करेंगी।"

[इसके बाद चर्चा हुई।]

* * * *

---

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 425

[♣] सी.ए.डी., अंक VII, 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 426

[*] **माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** मैं इस संशोधन का विराध करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष – मैं अब संशोधन पर मत लूंगा।

(प्रो. शाह का संशोधन अस्वीकृत हुआ।

♣ **श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद (प. बंगाल मुसलमान) :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 1 के ऊपर शीर्षक के शुरू में शब्द और रोमन संख्या 'अध्याय 1' को अन्तर्विष्ट किया जाए।"

(इसके बाद श्रीमान् अहमद का भाषण हुआ।)

[@]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** मैं इस संशोधन का विरोध करता हूँ।

(प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ)

[#]**माननीय पंडित गोविन्द वल्लभ पंत (संयुक्त प्रांत-जनरल) :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ कि अब हम अनुच्छेद दो पर आ जायें और अनुच्छेद 1 के शेष संशोधनों पर चर्चा स्थगित कर दें। अभी तक हम इस महत्वपूर्ण बिन्दु पर सर्वसम्मति नहीं बना पाये हैं। मुझे आशा है कि यदि चर्चा स्थगित कर दी जाये तो कोई ऐसा हल निकलना सम्भव है जो सभी को स्वीकार हो। इसलिए इससे कुछ भी नुकसान न होगा–

[श्रीमान् पंत के सुझाव का श्रीमान् आर.के. सिधवा ने सर्म्थन किया।]

[⁂]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** मैं पं. गोविन्द वल्लभ पंत के सुझाव का समर्थन करता हूँ।

सेठ गोविन्द दास (सी.पी. एवं बेरार जनरल) : महोदय, मैं अन्तःकरण से पंडित पंत के प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ .....

श्री एच.वी. कामथ : मैं केवल यह जानना चाहता हूँ कि कितने समय तक संशोधनों को रोककर रखा जाएगा।

एक माननीय सदस्य : यह एक दिन, एक सप्ताह या एक पखवाड़ा भी हो सकता है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं मानता हूँ कि इन कुछ संशोधनों पर चर्चा तब तक के लिए स्थगित कर दी जानी चाहिए जब तक किसी प्रकार की सहमति पर पहुँचने के लिए पर्याप्त समय सदन के पास उपलब्ध नहीं हो जाता। यह सदन तथा देश के व्यापक हित में होगा।

* * * *

---

[*] सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 426

♣ वही, पृष्ठ 430

[@] सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 430

[#] वही, पृष्ठ 431

[⁂]सी.ए.डी., अंक VII, 15 नवम्बर, 1948, पूष्ठ 431

अनुच्छेद 2

श्रीमान् नज़ीरूद्दीन अहमद – महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 2 और अनुच्छेद 3 के लिए अधोलिखित को प्रतिस्थापित किया जाए–

'2. संसद कानून द्वारा–

(क) संघ में नये राज्यों को प्रवेश दे सकती है;

(ख) किसी राज्य को उपविभाजित कर दो या दो से अधिक राज्य बना सकती है;

(ग) अधोलिखित क्षेत्रों में से हिन्दी दो या दो से अधिक प्रकार के क्षेत्रों को नया राज्य बनाने के लिए मिश्रित कर सकती है, अर्थात्–

(i) राज्य,

(ii) राज्य के हिस्से या हिस्सा,

(iii) हाल में अधिगृहीत किया गया क्षेत्र;

(द) इस अनुच्छेद के खण्ड (अ) में दाखिल या खण्ड (ब) व (स) में उत्पन्न किए गये किसी राज्य को नाम दे सकती है;

(ध) किसी राज्य का नाम बदल सकती है:

बशर्ते कि संसद के किसी सदन में कोई भी विधेयक इस उद्देश्य हेतु राष्ट्रपति की सिफारिश के अलावा और तब तक पेश नहीं किया जायेगा, जब तक कि–

(अ) इस विधेयक में निहित प्रस्ताव प्रथम अनुसूची के भाग 1 में अस्थाई तौर पर उल्लिखित किसी राज्य या राज्यों के नाम व सीमाओं को, उस राज्य की विधानसभा अथवा यदि विधायिका दो सदन वाली है तो उसके दोनो सदनों या प्रत्येक राज्य की विधानसभा, जैसी भी स्थिति हो, के विधेयक के पेश करने के प्रस्ताव तथा विधेयक के प्रावधानों के विषय से संबंधित विचारों जो राष्ट्रपति द्वारा जान लिए गये है, को प्रभावित नहीं करता; और

(ब) यह प्रस्ताव प्रथम अनुसूची के भाग III में अस्थायी तौर पर उल्लिखित किसी राज्य या राज्यों के नाम व सीमाओं, उस राज्य अथवा प्रत्येक राज्य के प्रस्ताव को पूर्व स्वीकृति, जैसी भी स्थिति हो, जो अधिनिश्चित कर ली गई है, को प्रभावित नही करता।"

[इसके बाद प्रस्तावक का भाषण हुआ।]

* * * *

सी.ए.डी., अंक VII, 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 431

[$] **श्रीमान् नज़ीरूद्दीन अहमद :** ...... इस संबंध में मेरा अगला संशोधन जिसका मैं प्रस्ताव करता हूँ, इस प्रकार है-

"कि अनुच्छेद 2 में, 'समय-समय पर' शब्दों को निकाल दिया जाए।"

[श्रीमान् अहमद अपने संशोधन की व्याख्या करते हैं।]

* * * *

[#]**श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर :** महोदय, मैं इन संशोधनों का विरोध करता हूँ। ये मौखिक मामले हैं और अनुरोध करता हूँ कि ऐसे संशोधनों की अनुमति न दी जाये। मैं अब आपसे इस पर मत लेने का निवेदन करता हूँ।

* * * *

[*] **माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** श्रीमान् कामथ ने जो कहा उस पर हम गौर करेंगे।

अनुच्छेद 2 संविधान में जोड़ दिया गया।

* * * *

अनुच्छेद 3

[♣]**माननीय श्री के. सन्थानम (मद्रास - जनरल) :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ -

"कि अनच्छेद 3 की धारा (अ) में, अधोलिखित शब्दों को जोड़ा जाए -

'अथवा राज्यों या राज्यों के हिस्सों में दूसरे क्षेत्रों को जोड़ने से'।"

* * * *

श्री एम. अनन्तशयनम अयंगर : मैं सदन से इस संशोधन को स्वीकार करने का निवेदन करता हूँ क्योंकि केवल इसके जुड़ने से ही अनुच्छेद पूर्ण होगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान् उपाध्यक्ष, मैं अपने मित्र श्रीमान् सन्थानम के संशोधन से सिद्धांततः सहमत हूँ महत्वपूर्ण यह है कि मैं इसकी भाषा में थोड़ा परिवर्तन चाहता हूँ जिससे यह इस प्रकार पढ़ा जाए "अथवा किसी राज्य के एक हिस्से में किसी क्षेत्र को जोड़ते हुए।"

माननीय श्री के. सन्थानम : मैं परिवर्तन से सहमत हूँ।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

* * * *

[$] सी.ए.डी., अंक VII, 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 435

[#] वही, पृष्ठ 435

[*] सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 15 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 435

[♣] वही, पृष्ठ 435

*रायबहादुर श्यामानन्दन सहाय (बिहार-जनरल) : महोदय, क्या मैं एक अनुरोध कर सकता हूँ? मेरे विचार से यदि डॉ. अम्बेडकर अपने अगले संशोधन का प्रस्ताव करते हैं तो चीजें स्पष्ट हो जाएंगी और हम जैसों के लिए जिनके नाम में संशोधन हैं यह तय करना आसान हो जाएगा कि हम उसका प्रस्ताव करें या नहीं।

श्रीमान् उपाध्यक्ष – मैं आपसे पूर्णतया सहमत हूँ। डॉ. अम्बेडकर अपने संशोधन का प्रस्ताव कर सकते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनच्छेद 3 में विद्यमान प्रतिबंध के लिए अधोलिखित प्रतिबंध को प्रतिस्थापित किया जाए –

"बशर्ते कि संसद के किसी भी सदन में इस उद्देश्य हेतु कोई भी विधेयक राष्ट्रपति की सिफारिश के अलावा और तब तक पेश नहीं किया जाएगा, जब तक कि –

(क) इस विधेयक में निहित प्रस्ताव प्रथम अनुसूची के भाग I में अस्थायी तौर पर उल्लिखित किसी राज्य या राज्यों के नाम व सीमाओं को, उस राज्य की विधानसभा अथवा यदि विधायिका दो सदन वाली है तो उसके दोनों सदनों या प्रत्येक राज्य की विधानसभा, जैसी भी स्थिति हो, के विधेयक को पेश करने के प्रस्ताव तथा विधेयक के प्रावधानों के विषय से संबंधित विचारों को जिन्हें राष्ट्रपति जान चुका है, को प्रभावित नहीं करता; और

(ख) यह प्रस्ताव प्रथम अनुसूची के भाग III में अस्थायी तौर पर उल्लिखित किसी राज्य या राज्यों के नाम व सीमाओं, उस राज्य अथवा प्रत्येक राज्य से प्रस्ताव को पूर्व स्वीकृति, जैसी भी स्थिति हो, जो प्राप्त कर ली गई है को प्रभावित नहीं करता'।"

श्रीमान् उपाध्यक्ष, यदि कोई संशोधित प्रतिबंध की उस मूल प्रतिबंध से तुलना करना चाहे जो प्रारुप संविधान में रखा गया था, तो सदस्य पायेंगे कि नये संशोधन में दो परिवर्तन हुए हैं। एक, मूल प्रारुप में विधेयक को पेश करने की शक्ति विशेष रूप से केवल भारत सरकार को दी गई थी। मूल प्रारुप के तहत संसद के किसी भी सदस्य के पास यह शक्ति नहीं थी कि वह इस तरह का विधेयक प्रस्तुत कर सके। प्रारुप समिति का ध्यान इस सच्चाई की ओर आकृष्ट किया गया कि संसद सदस्यों के इस अधिकार में यह कुछ हद तक कड़ी और अनावश्यक कटौती है जिसके तहत वे अपनी पसंद के प्रस्ताव प्रस्तावित करते हैं और जिससे ये संबद्ध होते हैं। परिणामस्वरूप, हमने इस प्रतिबंध को निकाल दिया जो यह शक्ति विशेष रूप से केवल भारत सरकार को देता था और हमने यह शक्ति राष्ट्रपति को दे दी और कहा कि इस प्रकार का कोई भी विधेयक चाहे यह भारत सरकार द्वारा लाया गया हो या किसी व्यक्तिगत सदस्य द्वारा उसके पीछे राष्ट्रपति की सिफारिश होनी चाहिए।

* सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 17 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 439-40

दूसरा परिवर्तन यह है – मूल अनूच्छेद 3 के तहत भारत सरकार की विधि–निर्माण की शक्ति, उन दो शर्तों द्वारा सीमित कर दी गई थी जो (क) (i) और (ii) में उल्लिखित है। वे शर्तें थीं कि किसी कार्यवाही को प्रारंभ करने से पूर्व राज्य की विधायिका में क्षेत्र के प्रतिनिधियों को राष्ट्रपति को प्रतिनिधित्व अवश्य देना चाहिए जिनका बहुमत है, अथवा इस संबंध में किसी ऐसे राज्य की विधायिका को प्रस्ताव अवश्य पारित करना चाहिए जिसका नाम और सीमायें विधेयक में निहित प्रस्ताव से प्रभावित होंगी। यहाँ पुनः यह बताया गया कि वहाँ अल्पसंख्यक भी हो सकते हैं जो बड़ी तीव्रता से महसूस करते हों कि उनकी स्थिति तब तक संरक्षित नहीं होगी जब तक कि राज्य की सीमा बदल नहीं दी जाती और जब तक उन विशेष अल्पसंख्यकों को दूसरे राज्य में अपने भाइयों के साथ सम्मिलित होने की अनुमति नहीं दी जाती, यदि परिणामस्वरूप, ये भाई वहाँ बने रहें तो कार्यवाही पूर्णतया पंगु हो जाएगी। परिणाम के तौर पर, संशोधित प्रारुप में हम प्रस्ताव करते हैं कि मूल अनुच्छेद में से (क) (i) और (ii) तथा (ब) को निकाल दिया जाए। इन्हें दो भागों (अ) और (ब) में विभक्त किया गया है। (अ) उस क्षेत्र से संबंध रखता है जो भाग I में राज्यों अर्थात् प्रांतों को प्रभावित करता है और नये संशोधन के (ब) को संबंध उससे है, जिन्हें अब भारतीय राज्य कहा जाता है। मेरे संशोधन के उपखण्डों (अ) और (ब) में मुख्य अंतर यह है -- (अ) के मामले में अर्थात् भाग I में आने वाले राज्यों के क्षेत्रों के पुनर्गठन के संबंध में केवल परामर्श की आवश्यकता है। स्वीकृति की आवश्यकता नहीं है। राष्ट्रपति को सिफारिश करने से पहले स्वयं को इस विषय में संतुष्ट कर लेना चाहिए कि उसकी इच्छाओं पर परामर्श ले लिया गया है।

(ख) के संबंध में प्रावधान है कि उस पर सहमति होगी। जैसा मैने कहा, अंतर इस तथ्य पर आधारित है कि जहाँ तक वर्तमान का संबंध है, प्रांतों की स्थिति राज्यों की स्थिति से भिन्न है। राज्य सम्प्रभु राज्य हैं और प्रांत सम्प्रभु राज्य नहीं है। फलस्वरूप, सरकार को प्रांतों की सीमायें बदलने के लिए उनकी स्वीकृति आवश्यक नहीं है, जबकि भारतीय राज्यों के मामले में यह बिल्कुल उचित है, इस तथ्य के मद्देनजर कि वे सम्प्रभु हैं, उनकी स्वीकृति प्राप्त की जानी चाहिए।

प्रो. शाह द्वारा प्रस्तावित संशोधन के संबंध में, मुझे उनके और नये परंतुक के उपखण्ड (क) में निहित अपने संशोधन में विशेष अंतर नहीं दिखाई देता। वह कहते हैं कि चर्चा राज्यों में शुरू की जायेगी। परंतुक के उपखण्ड (क) में मैने भी उपबंध किया है कि राज्यों से परामर्श किया जाएगा। मुझे इसके बारे में जरा भी संदेह नहीं है कि परामर्श करने का तरीका, जैसा राष्ट्रपति अपनायेंगे वह इस प्रकार का होगा जिसके तहत राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री या राज्यपाल को एक प्रस्ताव पेश करने के लिए कहेंगे जिस पर उस विशेष राज्य की विधायिका में चर्चा हो सकती है जो इससे प्रभावित हो सकता है, ताकि आखिरकार शुरूआत स्थानीय विधायिका द्वारा ही होगी और संसद द्वारा कतई नहीं। इसलिए मैं कहता हूँ कि प्रो. शाह का संशोधन वास्तव में अनावश्यक है।

माननीय श्री के. सन्थानम : लेकिन, दुर्भाग्य से, अपने उत्साह के कारण क्योंकि उन्होंने अपने सिद्धांत के प्रति उत्साह दिखाते हुए एक ऐसा संशोधन प्रस्तुत कर दिया है जो उनके उद्देश्य को ही विफल कर देता है। मैं, इसलिए, सुझाव देता हूँ कि इस संशोधन को अस्वीकार कर दिया जाना चाहिए और डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित प्रस्ताव को स्वीकार कर लेना चाहिए।

* * * *

श्रीमान् उपाध्यक्ष : हम श्रीमान् सिधवा को सुनें कि वह क्या कहते हैं। हम उन संशोधनों को निश्चित रूप से लेंगे जिनकी ओर श्रीमान् कामथ ने ध्यान आकृष्ट किया है।

श्री आर.के. सिधवा : मैं प्रो. शाह द्वारा प्रस्तावित संशोधन के विरोध में दिए गए श्रीमान् सन्थानम के तर्कों से सहमत नहीं हूँ ....

.... डॉ, अम्बेडकर का संशोधन पूर्णतया स्पष्ट है और विस्तृत है ....

.... मैं, इसलिए, डॉ. अम्बेडकर के संशोधन की सदन के लिए सिफारिश करता हूँ।

[नज़ीरुद्दीन अहमद का संशोधन प्रस्तावित नहीं किया गया।]

***श्रीमान् उपाध्यक्ष :** पंडित हृदयनाथ कुँजरू।

पंडित हृदयनाथ कुँजरू (संयुक्त प्रांत - जनरल) : श्रीमान् उपाध्यक्ष, मैं प्रस्ताव करता हूँ -

"कि डॉ. अम्बेडकर के संशोधन, जो अभी प्रस्तावित किया गया, में 'पूर्व स्वीकृति' शब्दों के लिए 'विचार' शब्द प्रतिस्थापित किया जाए।"

[इसके बाद भाषण और चर्चा हुई।]

* * * *

@**श्री रोहिणी कुमार चौधरी (असम-जनरल) :** महोदय, यह मेरा दुर्भाग्य है कि मुझे इस सदन के दो निष्ठावान सदस्यों, प्रो. शाह और पं. कुँजरू के संशोधनों का विरोध करना पड़ रहा है। मैं उनका विरोध इसलिए नहीं कर रहा कि मैं उन्हें कम पसन्द करता हूँ बल्कि इसलिए कर रहा हूँ क्योंकि मुझे डॉ. अम्बेडकर का संशोधन अधिक पसन्द है क्योंकि यह वर्तमान स्थिति से अच्छी तरह मेल खाता है। .....

#**श्री आर.के. सिधवा - (सी.पी. एवं बेरार - जनरल) :** .... मैं चाहूँगा कि डॉ. अम्बेडकर सदन को इस बात से अवगत करायें कि किसलिए प्रांतों और राज्यों मे यह अंतर किया गया है ......

---

* सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 17 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 441

@ वही, पृष्ठ 446

\# वही, पृष्ठ 456-59

इन अवलोकनों के साथ, मैं संशोधन का जोरदार समर्थन करता हूँ और आशा करता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर यह बात स्पष्ट कर देंगे कि राज्यों के मामले में यह भेद क्यों बरता गया है, उन्होंने ऐसा क्यों कहा है कि प्रांतों के मामलों में विधायिका के विचारों से अवगत होना चाहिए, जबकि राज्यों के मामले में उन्होंने कहा है कि उनकी पूर्व स्वीकृति प्राप्त की जानी चाहिए।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : डॉ. अम्बेडकर।

एक माननीय सदस्य : महोदय, अब प्रश्न रखा जाए।

मौलाना इसरत मोहानी (संयुक्त प्रांत - मुसलमान) : महोदय, मैं नियम संबंधी आपत्ति उठाता हूँ। डॉ. अम्बेडकर ने केवल एक संशोधन प्रस्तुत किया है और इसलिए मैं कहता हूँ कि उन्हें देने का कोई अधिकार नहीं है। मेरे पास सदन का एक विनिर्णय है जिसमें यह निश्चित रूप से कहा है ....

श्री आर.के. सिधवा : मैं समझता हूँ कि पूरा अनुच्छेद चर्चा के अधीन है। यदि अनुच्छेद चर्चा के अधीन है तो डॉ. अम्बेडकर को उत्तर देने का अधिकार है।

मौलाना हसरत मोहनी : डॉ. अम्बेडकर पहले ही बोल चुके हैं, उन्हें आगे भाषण देने का कोई अधिकार नहीं है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष - कृपया सभापीठ को सम्बोधित करें।

मौलाना हसरत मोहनी : महोदय, मैं यह बताना चाहता हूँ कि विनिर्णय में कहा गया है- मैं इस सदन में हुई कार्यवाहियों से जो कि प्रकाशित हो चुकी हैं, उद्धृत कर रहा हूँ- संशोधन के प्रस्तावक को उत्तर देने का कोई अधिकार नहीं है। यह दूसरा भाषण नहीं दे सकता।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मेरा मानना है कि अनुच्छेद एवं संशोधन दोनों ही चर्चा के अधीन हैं। डॉ. अम्बेडकर।

माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्ता (सी.पी. एवं बेरार - जनरल) : महोदय, प्रस्तावक को उत्तर देने का अधिकार है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : यह मेरी बात को मजबूती प्रदान करता है।

माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्ता - मेरे कहने को अर्थ है, महोदय, मैं कहता हूँ कि प्रत्येक प्रस्तावक को उत्तर देने का अधिकार प्राप्त है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : आपको डॉ. अम्बेडकर के उत्तर देने पर आपत्ति नहीं है?

माननीय श्री घनश्याम सिंह गुप्ता - मैं आपत्ति तो करता ही नहीं हूँ। साथ ही मैं यह प्रचलन भी स्थापित करना चाहता हूँ कि किसी संशोधन के प्रस्तावक को उत्तर देने का अधिकार नहीं है क्योंकि हमारे नियम उन नियमों से बहुत भिन्न है जिन्हें वैधानिक पक्ष के लिए बनाया गया है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : यह हम बाद में, डॉ. अम्बेडकर के उत्तर देने के बाद, तय करेंगे।

श्री लक्ष्मीनारायण साहू (उड़ीसा - जनरल) : महोदय, संशोधन प्रस्तावकों की सूची में मेरा नाम है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : श्रीमान् साहू, कृपया अपनी सीट पर बैठ जाइये। डॉ. अम्बेडकर।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) : मेरे मित्र श्रीमान् कुँजरू द्वारा प्रस्तावित संशोधन के प्रति मेरी अपार सहानुभूति है लेकिन दुर्भाग्य से, वर्तमान परिस्थितियों में, मैं इसे स्वीकार करने की स्थिति में नहीं हूँ। अपने संशोधन के समर्थन में मेरे मित्र द्वारा यहाँ तर्क दिया गया कि अपने संशोधन का प्रस्ताव करते हुए मैने जो कहा था यह संविधान में निहित कुछ अन्य अनुच्छेदों या धाराओं के परस्पर विरोध में था। उन्होंने कहा कि प्रांतों और राज्यों में भेद को उचित ठहराने के संबंध में, अनुच्छेद 3 में निहित प्रावधानों के मामले में मैंने जो स्पष्टीकरण दिए थे वह अनुच्छेद 226, 230 और 294 के परस्पर विरोध में थे। अब मेरा कहना यह है कि मैने राज्यों और प्रांतों के भेद के समर्थन में अपने स्पष्टीकरण में जो कहा था और उन विभिन्न अनुच्छेदों, जिनका उन्होंने संदर्भ दिया है, में कोई परस्पर विरोध नहीं है।

अनुच्छेद 226 जो केन्द्रीय विधायिका को प्रांतीय सूची में सम्मिलित मामलों पर विधि-निर्माण की शक्ति देता है, के संबंध में, मेरा कहना है कि यह प्राधिकार संसद के ऊपरी सदन द्वारा दो-तिहाई बहुमत से पारित प्रस्ताव के द्वारा संसद द्वारा प्रयुक्त किया जाएगा। वह अनुभव करेंगे कि ऊपरी सदन या राज्य सभा में उतने ही प्रतिनिधि राज्यों से होंगे जितने प्रांतों से। वे सब निस्संदेह उस विशेष प्रस्ताव की कार्यवाहियों में भाग लेंगे जो इस प्रस्ताव में सम्मिलित मामलों पर विधि-निर्माण का अधिकार प्रदान करने वाला है। पणिामस्वरूप, यह कहना तनिक भी उचित नहीं है कि अनुच्छेद 226 ने स्वतः ही भारतीय राज्यों की सम्प्रभुता हथिया ली है। यह वास्तव में एक ऐसा कानून है जो ऊपरी सदन जिसमें राज्यों का पूरा प्रतिनिधित्व है के द्वारा पारित प्रस्ताव के द्वारा सम्प्रभुता प्रदान करता है। इसलिए यह परस्पर विरोध का दृष्टांत कतई नहीं है।

अनुच्छेद 230 के संबंध में भी, मेरा यही कहना है। मेरे विद्वान मित्र को यह याद रखना चाहिए कि संविधान के पारित हो जाने के बाद जो भारतीय राज्य स्थिति से, पर वर्तमान में तीन विषयों के आधार पर मिले हैं, उनमें से एक विदेशी मामला है। स्पष्टतया इस संधि पर अमल और कुछ नहीं है बल्कि केंद्रीय संसद को प्रदान की हुई शक्ति का इस संधि जो कि विदेशी मामलों की विषय-वस्तु है, को लागू करने के लिए प्रयुक्त है। इसलिए इसे उनकी सम्प्रभुता के अधिकारों को अधिग्रहण नहीं कहा जा सकता।

294 के बारे में, जो भारतीय राज्यों के अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के प्रावधानों के विस्तार से संबंधित है और जो निस्संदेह इस समय उनकी सम्प्रभुता पर एक अतिक्रमण सा लग सकता है लेकिन ऐसा है नहीं। यह मात्र उन प्रस्तावों में से एक है जो हम भारतीय राज्यों के समक्ष रखेंगे कि जब वे भारत संघ में प्रवेश चाहेंगे तब उन्हें अनुच्छेद

294 को स्वीकार करना ही पड़ेगा। मैं कह सकता हूँ कि यह विस्तार प्रारुप समिति द्वारा किया गया था क्योंकि प्रारुप समिति की जानकारी में यह बारत आई कि कुछ भारतीय राज्यों की संविधान सभायें इस संबंध में इतने विविध और इतने चौंकाने वाले प्रावधान कर रही थीं कि उसने यह निर्धारित करना सबसे अधिक उचित समझा कि अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए किस प्रकार की व्यवस्थाओं को संघ सरकार स्वीकार करेगी और किस प्रकार की व्यवस्थाओं को स्वीकार नहीं करेगी।

अब, महोदय ब्रिटिश भारत के प्रांतों और भारतीय राज्यों में भेद के प्रश्न पर बहुत अधिक कहा जा चुका है, और मैं अच्छी तरह महसूस करता हूँ कि सदन बुरी तरह से इस अंतर पर उत्तेजित है जो संविधान रखना चाहता है लेकिन मैं सदन को दो बातें बताना चाहता हूँ। एक तो यह कि इस समय हम दो वार्ता समितियों के बीच हुए समझौते की शर्तों से बँधे हुए हैं। इनमें से एक समिति ब्रिटिश प्रांतों के प्रतिनिधित्व वाली भारतीय संविधान सभा द्वारा नियुक्त की गई थी और दूसरी भारतीय राज्यों के प्रतिनिधित्व वाली भारतीय संविधान सभा द्वारा नामित थीं ताकि एक सांझा संविधान का प्रारुप तैयार किया जा सके जो दोनों हिस्सों को सम्मिलित करता हो। अब मैं वार्ता समितियों द्वारा तैयार की गई रिपोर्ट के विस्तार में नहीं जाना चाहता लेकिन यदि मेरे माननीय मित्र पंडित कुँजरू उस समिति की रिपोर्ट को पढ़कर अपनी याद्‌‌‌‌शत ताजा करें तो वह पायेंगे कि उसमें एक विशेष प्रावधान यह है कि वार्ता समिति की रिपोर्ट की किसी बात से यह नहीं समझा जायेगा कि भारत संघ को भारतीय राज्यों के क्षेत्रों के अतिक्रमण की अनुमति है। मेरा कहना है, यदि यह एक सहमति है मेरे कहने का यह अर्थ नहीं – कि इस अवस्था में दोनों पक्षों के बीच हुआ यह एक संधि या समझौता है – इस सहमति का सम्मान करने में ही हमारी भलाई है। मैं एक दूसरी बात बताना चाहूँगा– संविधान के एक अन्य अनच्छेद जिसका मेरे मित्र श्रीमान् कुँजरू ने कोई जिक्र नहीं किया है औश्र जिसका मुझे दुख है – वह अनुच्छेद 212 है जो एक बहुत महत्वपूर्ण अनुच्छेद है और मैं बताना चाहूँगा कि भारतीय राज्यों के संबंध में वास्तव में किन–किन संभावनाओं की भारतीय प्रारुप संविधान में व्यवस्था की गई है। माननीय सदस्यों को ज्ञात होगा कि अनच्छेद 3 अधिमिलन के ऐसे स्वीकृति–पत्र के आधार पर भारतीय राज्यों के प्रवेश का प्रावधान करता है जिसे वे भारतीय राज्य भारत संघ के पक्ष में कार्यान्वित कर सकें। जब एक राज्य इस तरह से भारत संघ में शामिल होता है तब केन्द्रीय सरकार और प्रांतों की तुलना में इसकी स्थिति स्वीकृति–पत्र की शर्तों द्वारा अवश्य नियमित की जानी चाहिए लेकिन भारतीय राज्यों को भारतीय संविधान में लाने का स्वीकृति–पत्र ही एकमात्र तरीका नहीं है। संविधान में एक अन्य महत्वपूर्ण राज्य का शासक अपने उस विशेष राज्य से संबंधित पूरी संप्रभुता भारत संघ को हस्तांतरित कर सकता है। जब पूरी की पूरी संप्रभुता 212 के प्रावधानों के तहत हस्तांतरित कर दी जाती है, तो उस विशेष शासक का क्षेत्र भारत संघ का क्षेत्र ही जाता है, जिसकी पूरी संप्रभुता भारत संघ में निहित होती है। तब अनुच्छेद 212 में शक्ति प्रदान की गई है जिसके तहत उस विशेष क्षेत्र, जिसकी सम्प्रभुता पूरी

तरह से हस्तांतरित कर दी गई है, को भारत के प्रांत की तरह शासित किया जा सके ऐसी स्थिति में संविधान का भाग II जो भारतीय प्रांतों के संविधान को परिभाषित करता है स्वत: उस भारतीय राज्य पर लागू होगा या वह केन्द्र शासित प्रदेश की तरह प्रशासित किया जा सकता है; ताकि राष्ट्रपति और केन्द्रीय संसद को उस विशेष क्षेत्र के लिए प्रशासन के किसी रूप को रचने के लिए पूरा-पूरा अधिकार हो। परिणामस्वरूप संदन से मेरा अनुरोध है कि इस विषय पर उत्तेजित होने की कोई आवश्यकता नहीं है। अगर हम थोड़ा धैर्य रखें तो मुझे इसके बारे में जरा भी संदेह नहीं है कि भारतीय राज्यों के लिए हमारे मंत्री, जिन्होंने उस दुर्व्यवस्था को कम करने के लिए बहुत काम किया है जो हमारे संविधान बनाने के पूर्व व्याप्त थी, उस वास्तविक सच्चाई का प्रयोग करेंगे जो संघ सरकार ने प्राप्त कर ली है और दुर्व्यवस्था को और कम करेंगे और या तो भारतीय राज्यों को उन प्रावधानों को स्वीकार करने के लिए प्रेरित करके जिन्हें हमने भारतीय राज्यों पर लागू किया है या अनुच्छेद 212 के प्रावधानों का अनुकरण करके एक आदेश निकालेंगे और पूरी सम्प्रभुता हमें सौंप देंगे ताकि भारत संघ भारतीय राज्यों से उसी प्रकार व्यवहार करने में सक्षम हो सके जैसे प्रांतों से करने में सक्षम है।

अभी के लिए मैं कहता हूँ कि हम इस समझौते का पालन करके बुद्धिमतापूर्ण कदम उठायेंगे जो दो वार्ता समितियों के बीच हुआ है और इसका आगे तब तक पालन करने में बुद्धिमानी होगी जब तक आगे के समझौते द्वारा हम दोनों पक्षों के प्रति सद्भाव, शांति और सम्मान के साथ इसका आधारा बदलने की स्थिति में न हो जायें। महोदय, मैं संशोधन का विरोध करता हूँ। (सदस्यों ने प्रसन्नता व्यक्त की।)

श्रीमान् उपाध्यक्ष : अब मैं संशोधन संख्या 150 जैसा कि पंडित एच.एन. कुँजरू के संशोधन द्वारा संशाधित किया गया, को मतदान के लिए रखता हूँ। (व्यवधान) कृपया मुझे अपनी इच्छानुसार कार्यवाहियों को संचालित करने दें।

* * * *

[*] **श्रीमान् उपाध्यक्ष :** मैं अपना विनिर्णय देने जा रहा हूँ। सदन के नियमों के तहत मुझे जानकारी नहीं है कि ऐसा कुछ है जो किसी संशोधन के प्रस्तावक को उत्तर देने का अधिकार देता है। अगर मैने डॉ. अम्बेडकर को उत्तर देने के लिए कहा तो इसलिए कहा क्योंकि उनसे कुछ प्रश्न पूछे गये थे और मैने यह उचित समझा कि उन्हें अपनी स्थिति को स्पष्ट करने का एक अवसर दिया जाना चाहिए। यह मेरा विनिर्णय है।

अब मैं पंडित कुँजरू के संशोधन को मतदान के लिए रखूँगा।

[प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ। केवल डॉ. अम्बेडकार का प्रस्ताव ही स्वीकृत हुआ।]

* * * *

---

[*] सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 18 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 461

[#] **श्रीमान् उपाध्यक्ष :** मुझे लगता है कि प्रो. के.टी. शाह का संशोधन और साथ ही संख्या 175 तक के संशोधनों का अगला सेट डॉ. अम्बेडकर के संशोधन के स्वीकार होने के बाद स्वतः अस्वीकृत हो जाता है।

(संशोधन संख्या 170 प्रस्तावित नहीं की गई।)

.... इसके साथ ही अनुच्छेद 3 पूरा हो गया है। क्या कोई व्यक्ति इस पूरे अनुच्छेद पर चर्चा करना चाहता है?

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रा (पं बंगाल - जनरल) : यदि किसी माननीय सदस्य को दोबारा पूरे के पूरे अनुच्छेद पर बोलने की अनुमति दे दी जाती है तो क्या स्थिति होगी? क्या डॉ, अम्बेडकर को इस पर दोबारा उत्तर देने के लिए कहा जायेगा?

श्रीमान् उपाध्यक्ष : निश्चय ही नहीं।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रा (पं बंगाल - जनरल) : यह पूरा का पूरा अनुच्छेद अभी तक नहीं निबटाया गया है और डॉ. अम्बेडकर ने संशोधन का ही उत्तर दिय है, न कि पूरे अनुच्छेद का।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : हम माननीय सदस्य को सुनेंगे और यदि वह यही बातें दोहराते हैं तो हम उन्हें रुकने के लिए कहेंगे।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रा : इसीलिए डॉ. अम्बेडकर को उत्तर देने का अधिकार नहीं है?

श्रीमान् उपाध्यक्ष - नहीं।

श्री एम. अनन्तसयनम अयंगर (मद्रास - जनरल) : यह काल्पनिक है। ऐसी कोई बात नहीं है।

* * * *

[*]**श्रीमान् उपाध्यक्ष** - प्रश्न है-

"कि अनुच्छेद 3, जैसा संशोधित किया गया, संविधान का भाग बन गया है।"

प्रस्ताव अपना लिया गया।

अनुच्छेद 4

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद (बंगाल - मूसलमान) : महोदय, मैं प्रस्ताव करने की प्रार्थना करता हूँ -

"कि अनुच्छेद 4 की धारा (1) में शब्द 'इस संविधान के' निकाल दिये जायें और समूर्ण प्रारुप संविधान में ये शब्द समान संदर्भ में जहाँ कहीं भी आते हैं निकाल दिये जायें; और नई परिभाषा (bb) को अनुच्छेद 303 की धारा (1) में अन्तर्विष्ट किया जाये --

''(bb) 'अनुच्छेद का अर्थ है इस संविधान का अनुच्छेद'।"

[इसके बाद भाषण हुआ।]

[#] वही, पृष्ठ 462

[*] सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 18 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 465-66

श्रीमान् उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य आदेश पत्र प अनुच्छेद 4 के बारे में संशोधन संख्या 181 तक अपने सभी संशोधनों का एक के बाद एक, प्रस्ताव कर सकते हैं, और जितना सम्भव हो उतना संक्षेप में करें।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : .... महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ --

"कि अनुच्छेद 4 की धारा (1) में 'अनुच्छेद 2 या अनुच्छेद 3' शब्दों के लिए 'अनुच्छेद 2 या 3' शब्दों और अंकों को प्रतिस्थापित किया जाए।"

मैं अनुरोध करता हूँ कि शब्द 'अनुच्छेद' को दोहराने की आवश्यकता नहीं है जैसा कि धारा (1) में किया गया है और, वास्तव में इस प्रारुप संविधान में कई स्थानों पर किया गया है।

इसके बाद मैं प्रस्ताव करता हूँ।

"कि अनुच्छेद 4 की धारा (1) में, 'अनुच्छेद 2 या अनुच्छेद 3' शब्दों के लिए 'अनुच्छेद 3' शब्द और अंक को प्रतिस्थापित किया जाए।"

मैं अगला प्रस्ताव करता हूँ -

"कि अनुच्छेद 4 की धारा (1) में, 'के लिए ऐसा प्रावधान लिए होगा' शब्दों के लिए 'भी प्रावधान करेगा' शब्दों को प्रतिस्थापित किया जाए।"

मैं इस अनुच्छेद के प्रति अपने आखिरी संशोधन का प्रस्ताव करता हूँ -

"कि अनुच्छेद 4 की धारा (2) में 'के उद्देश्य के लिए' शब्दों को 'के अर्थ के अन्दर' शब्दों से प्रतिस्थापित किया जाए।"

यह मात्र एक शाब्दिक संशोधन है।

* * * *

महबूब अली बेग साहिब बहादुर (मद्रास - जनरल) : महोदय मैं संशोधन नं. 184 का प्रस्ताव करता हूँ -

"कि अनुच्छेद 4 की धारा (2) में, 'अनुच्छेद 304 के उद्देश्य के लिए' शब्दों को 'अनुच्छेद 304 के तहत' शब्दों से प्रतिस्थापित किया जाए।"

इन शब्दों को बनाये रखने से एक प्रकार की जटिलता आ जायेगी। इसलिए हमें इन शब्दों को 'अनुच्छेद 304 के तहत' शब्दों से प्रतिस्थापित कर देना चाहिए।

श्री एच.वी. कामथ : श्रीमान् उपाध्यक्ष, आपकी आज्ञा से, मैं अपने माननीय मित्र श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन नं. 177 पर बहुत ही संक्षिप्त टिप्पणी करूँगा। इससे पहले कि आप डॉ. अम्बेडकर को उत्तर देने के लिए कहें, क्या मैं उनसे निवेदन कर सकता हूँ, उस स्थिति मे जब वह कहें कि संशोधन नं. 177 को अस्वीकृत कर दिया जाना चाहिए, कि वे अपने विरोध के कुछ कारण बतायें और केवल यही घिसा-पिटा सूत्र न दोहरायें 'मैं इस संशोधन का विरोध करता हूँ' .....

.... अन्त में, मैं डॉ. अम्बेडकर से पुनः निवेदन करता हूँ कि वे केवल अपना "मैं विरोध करता हूँ" सूत्र न दोहरायें बल्कि कुछ कारण भी दें कि वह ऐसा क्यों कर रहे हैं?

श्री रोहिणी कुमार चौधरी –मैं इस संशोधन का विरोध करके अपने मित्र श्रीमान् नज़ीरूद्दीन अहमद का आदर करने के लिए मंच पर आ गया हूँ (हँसी) .....

* * * *

[*]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, मैने नहीं सोचा था कि इस मामले पर मुझे कोई भाषण देने की आवश्यकता थी, लेकिन जैसा श्रीमान् कामथ ने इच्छा प्रकट की है कि मुझे संशोधन को केवल नकार ही नहीं देना चाहिए बल्कि स्पष्टीकरण भी देना चाहिए कि मैं अपने माननीय मित्र नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधनों को स्वीकार करने के लिए क्यों तैयार नहीं हूँ, मैं अपना स्पष्टीकरण देने के लिए ही यहाँ आया हूँ। मैं समझता हूँ कि इस बात पर सहमति होगी कि इस तरह के मामलों में जिनका संबंध केवल वाक्य-रचना से है, न कि अनुच्छेद के विषय से, यह नहीं कहा जा सकता कि यह एक सैद्धांतिक मामला है। यह मात्र प्रचलन की बात है कि विभिन्न संविधानों ने समान मामलों में भाषा का किस प्रकार प्रयोग किया है। मेरा कहना है कि हमने जिस भाषा का प्रयोग किया है उसका प्रयोग करते समय "इस संविधान के" वाक्यांश के बार-बार दोहराये जाने के संबंध में इसी प्रचलन का पालन किया गया है। मेरे मित्र श्रीमान् कामथ ने कहा है कि उन्होंने आस्ट्रेलिया तथा कुछ अन्य देशों के संविधानों की जाँच की है लेकिन उन्होंने इनमें इस वाक्यांश "इस संविधान के" को नहीं पाया। मुझे दुख है कि उन्होंने अपने अनुसंधान में आइरिश संविधान को सम्मिलित नहीं किया। यदि उन्होंने इसकी जाँच की होती तो उन्होंने पाया होता कि प्रारुप संविधान में उसी वाक्य-रचना का प्रयोग किया गया है जो आइरिश संविधान में प्रयोग की गई है। संदर्भ के लिए, मैं उनका ध्यान आयरलैंड के संविधान के अनुच्छेद 19, अनुच्छेद 27, उपखण्ड (4), अनुच्छेद 32 और अनुच्छेद 46, उपखण्ड (5) की ओर आकृष्ट करना चाहूँगा जिनमें वह पायेंगे कि जहाँ कहीं भी "अनुच्छेद" शब्द आया है उसके बाद 'इस संविधान के' वाक्यांश आता है। मैं श्रीमान् कामथ को यह भी बताता हूँ कि इस संदर्भ में हमने भारत सरकार अधिनियम, 1935 में प्रयुक्त वाक्य-रचना का भी अनुसरण किया है। मुझे खेद है कि भारत सरकार अधिनियम के सभी अनुच्छेदों की जाँच कने का समय नहीं था परंतु सौभाग्य से, मुझे एक अनुच्छेद 142 क मिला जिसमें इसी प्रकार की वाक्य-रचना का प्रयोग हुआ है। इसलिए जहाँ तक मेरे माननीय मित्र श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तावित संशोधन के प्रथम भाग का संबंध है मेरा कहना है कि हमने सनकी की तरह काम नहीं किया है बल्कि हमने जिस वाक्य-रचना का प्रयोग किया है वही वाक्य-रचना अन्य देशों के संविधानों में भी शामिल है।

[*] सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 18 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 467-468

उनके दूसरे संशोधन के संबंध में कि हमें "अनुच्छेद" शब्द को "या" शब्द के बाद दोहराना नहीं चाहिए और हमें "अनुच्छेद 2 या 3" कहना चाहिए, मेरा फिर यही कहना है। यहाँ पुनः हमने जाने-माने संविधानों का अनुसरण किया है और यदि मेरे मित्र उनकी जाँच करेंगे तो वह पायेंगे कि उनमें भी समान वाक्य-रचना आती है। उनकी जानकारी के लिए, मैं उन्हें भारत सरकार अधिनियम के अनुच्छेद 69 के उपखण्ड (3) को देखने के लिए कहूँगा। उसमें प्रयुक्त शब्द "पैरा है। यह कहता है पैरा (ब) या पैरा (ड.)"। इसलिए जहाँ तक सिद्धांत का संबंध है, यह बहस का विषय बिल्कुल नहीं हो सकता । यह केवल प्रचलन का मामला है और जो प्रश्न पूछा जाना चाहिए वह है - क्या हमने ऐसा कुछ कर दिया है जिसका प्रचलन नहीं है और मेरा यह कहना है कि हमने वाक्य-रचना के प्रयोग में जो कुछ भी किया है वह एक प्रचलन है और इसलिए किसी भी धारा, जैसा यह प्रारुप में है, पर कोई आपत्ति नहीं हो सकती।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : तब अनुच्छेद 4 की धारा (2) के बारे में क्या करें? मेरे विचार से धारा (2) में प्रारुप को स्पष्ट बनाने के लिए "इस संविधान के" शब्दों के प्रयोग के लिए एक संक्षिप्त संशोधन टिप्पणी के तौर पर होना चाहिए।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : एक संक्षिप्त संशोधन टिप्पणी के तौर पर स्वीकार करके हम एक खराब प्रचलन की शुरूआत नहीं कर सकते।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं इसे स्वीकार नहीं कर सकता।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : तब मैं एक के बाद एक संशोधनों को मतदान के लिए रखूँगा।

[श्रीमान् नज़ीरुद्दीन के सभी संशोधन अस्वीकृत हुए और अनुच्छेद 4 की धारा (1) तथा धारा (2) संविधान का हिस्सा बन गयीं।]

* * * *

अनुच्छेद 28

*[*]**श्रीमान् उपाध्यक्ष** - .... अगला संशोधन, नं. 838, श्रीमान् कामथ के नाम पर है। क्या आप संशोधन नं. 838 का प्रस्ताव कर रहे हैं?

श्री एच.वी. कामथ - श्रीमान् उपाध्यक्ष, मैं प्रस्ताव करता हूँ-

"कि भाग IV के तहत शीर्षक में शब्द "निदेश" के लिए शब्द "मूल" प्रतिस्थापित किया जाए।"

महोदय, अपने मित्र माननीय डॉ. अम्बेडकर के विचारार्थ इस संशोधन का प्रस्ताव करते हुए मैं इसके लिए दो कारण प्रस्तुत करना चाहूँगा ......

* * * *

[*] सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 18 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 474

[#]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) :** महोदय, मुझे खेद है कि मैं दोनों में से कोई भी संशोधन स्वीकार नहीं कर सकता। [♣]श्रीमान् कामथ का संशोधन वास्तव में वाक्य-रचना में समाहित है जैसा कि यह अब है; जैसा कि श्रीमान् कामथ पायेंगे शब्द 'मूल' इस भाग के सबसे पहले अनुच्छेद में आता है। इसलिए उनका यह उद्देश्य कि इन सिद्धांतों को मूल माना जाए, इस अनुच्छेद की शब्दावली द्वारा पहले ही प्राप्त कर लिया गया है।

शब्द 'निदेश' के संबंध में मैं समझता हूँ कि यह आवश्यक है और महत्वपूर्ण है कि शब्द को बनाये रखा जाए क्योंकि यह समझा जाना चाहिए कि संविधान के इस भाग को कानून में बदलते हुए संविधान सभा, जैसा मैने कहा, भविष्य की विधायिका और कार्यपालिका को निदेश दे रही है कि वे किस तरीके से अपनी-अपनी शक्तियों का प्रयोग करेंगी। यदि शब्द 'निदेश' निकाल दिया जाता है तो मुझे भय है कि संविधान सभा इस भाग को कानून में बदलने के अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो पायेगी। यकीनन, जैसा कि कुछ व्यक्तियों का कहना है, इस भाग में इन सिद्धांतों को मात्र पवित्र घोषणाओं के तौर पर अंतर्विष्ट करना संविधान सभा का इरादा नहीं है। सभा का इरादा यह है कि भविष्य में विधायिका और कार्यपालिका दोनों ही मात्र दिखावा न करते हुए अपनी कार्यवाहियों में इन्हें आधार बनायें। इसलिए मेरा अनुरोध है कि दोनो ही "मूल" और "निदेश" जरूरी हैं और इन्हें बनाये रखना चाहिए।

[श्रीमान् कामथ का प्रस्ताव अस्वीकृत हो गया।]

श्री एच.वी. कामथ : महोदय मैं अपना संशोधन वापस लेने के लिए सदन की अनुमति चाहता हूँ।

सदन की अनुमति से, संशोधन वापस ले लिया गया।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : हम अब संशोधन नं. 841 से 846 तक लेंगे। प्रस्तावक कृपया इन्हें एक-एक करके प्रस्तावित करेंगे और तब चर्चा होगी। संशोधन नं. 841 का स्वरूप नकारात्मक है, इसलिए इसे क्रम से बाहर किया गया है।

क्योंकि संबंधित सदस्य यहाँ नहीं है इसलिए संशोधन सं. 842 हो गया है।

संशोधन संख्या 843 से 846 तक - श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : मैं संशोधन संख्या 843, 844 और 846 का प्रस्ताव करूँगाा। मैं संशोृधन करूँगा। मैं संशोधन नं. 845 प्रस्तावित नहीं करूँगा।

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ।

"कि अनुच्छेद 28 में से शब्दों 'तब तक संदर्भ को अन्यथा जरूरत नहीं है' को निकाल दिया जाए।"

[#] सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 18 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 467

[♣]श्रीमान् कामथ के इस संशोधन में नं. 838 और 840 शामिल है।

"कि अनुच्छेद 28 में से शब्दों "आवश्यकता है" के लिए शब्द 'संकेत करता है' प्रतिस्थापित किया जाए।"

"कि अनुच्छेद 28 में, शब्दों "दि स्टेट" के लिए शब्द 'स्टेट' प्रतिस्थापित किया जाए।"

[इसके बाद श्रीमान् नज़ीरुद्दीन का भाषण हुआ।]

* * * *

*[*] **माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं अपने मित्र श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधनों का विरोध करता हूँ। अनुच्छेद 28 में शब्द 'दि स्टेट' सोच-समझकर प्रयुक्त किए गए हैं। इस संविधान में शब्द 'स्टेट' का दो भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रयोग किया गया है। इसका प्रयोग सामूहिक हस्ती जो या तो केन्द्र या प्रांत का प्रतिनिधित्व करती है के रूप में किया गया है, संविधान के कुछ हिस्सों में केन्द्र तथा प्रांत दोनों को ही 'स्टेट' के नाम से पुकारा जाता है। लेकिन वहाँ यह शब्द अपने सामूहिक अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। शब्द 'दि स्टेट' यहाँ सामूहिक तथा व्यष्टिवाचक दोनों ही अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। यदि मेरे मित्र भाग III की सहायता लें जो संविधान के अनुच्छेद 7 से प्रारंभ होता है तो वह पायेंगे कि किस अर्थ में शब्द 'स्टेट' प्रयुक्त हुआ है। इस भाग में, जब तक संदर्भ की अन्यथा जरूरत नहीं है, 'दि स्टेट' में भारत सरकार, एवं भारत की संसद और राज्यों की सरकार तथा विधायिका और सभी स्थानीय या अन्य प्राधिकरण शामिल हैं। इसलिए जहाँ तक निदेशात्मक सिद्धांतों का संबंध है, एक ग्राम पंचायत या एक जिला या स्थानीय बोर्ड भी 'स्टेट' कहलायेगा। जिस अर्थ में हमने शब्द का प्रयोग किया है उस अर्थ के भेद को स्पष्ट करने के लिए ही हमने 'स्टेट' और 'दि स्टेट' के बारे में बोलना वांछनीय समझा है। माननीय सदस्य इस भेद को संविधान के अनुच्छेद 12 में भी पायेंगे। वहाँ हम कहते हैं-

"नो लिटिल शैल बी कन्फर्ड बाई दि स्टेट"

"नो सिटीजन ऑफ इण्डिया शैल एक्सेप्ट एनी टाइटिल फ्राम एनी फॉरेन स्टेट"

यहाँ हम 'दि स्टेट' शब्दों का प्रयोग नहीं करते; लेकिन पहले भाग में हम 'दि स्टेट' शब्दों का प्रयोग करते हैं। हम किसी भी प्रकार का प्राधिकार नहीं चाहते, चाहे वह केन्द्र का हो या राज्य का, जो किसी व्यक्ति को उपाधि प्रदान करता हो। इस भेद के होने से सदन अनुभव करेगा कि अनुच्छेद 28 मे 'दि स्टेट' शब्दों को बनाये रखना इस प्रचलन के अनुरूप है जो हमने इस संविधान के प्रारुप में अपनाया है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं इन तीन संशोधनों को मतदान के लिए रखूँगा।

[श्रीमान् नज़ीरूद्दीन अहमद के सभी संशोधन अस्वीकृत हुए। अनुच्छेद 28 संविधान में जोड़ दिया गया।]

* * * *

[*] सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 19 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 477-78

[अनुच्छेद 29 के सभी संशोधन अस्वीकृत हुए और अनुच्छेद को स्वीकार कर लिया गया।]

अनुच्छेद 30

*__श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद :__ .... महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 30 में से शब्द 'स्ट्राइव टू' निकाल दिया जाए।"

#**श्री एच.वी. कामथ** – महोदय मैं संशोधन नं. 870 का प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 30 में, शब्द 'नेशनल लाइफ' के प्हले आने वाले 'दि' को निकाल दिया जाए।"

महोदय, पहले तो मैं इस संशोधन पर ध्यान देने के लिए अनिच्छुक था यह मानते हुए कि यह एक छोटी–सी बात है; लेकिन किसी प्रकार शब्द 'दि' मुझे कर्णकटु लगा और अन्त में मैंने इसे निकालने का निर्णय कर लिया। मैं इतना घृष्ट नहीं हूँ कि मैं डॉ. अम्बेडकर या उनकी प्रारुप समिति के बुद्धिमान सहकर्मियों को भाषा के मामले में सलाह दूँ, लेकिन मैं आशा करता हूँ कि इस मामले में, शब्द 'दि' उनके कानों को भी उतना ही खटकता होगा जितना कि यह मेरे कानों को खटकता है, और श्रुतिमधुरता के नियमों का उल्लंघन करता है। इसलिए मैं उनसे इन्हें निकाल देने का आग्रह करता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं संशोधन को स्वीकार करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : संशोधन संख्या 871 प्रस्तुत नहीं किया गया।

अब अनुच्छेद पर सामान्य चर्चा होगी।

* * * *

$**श्री मोहन लाल गौतम :** क्या अब चर्चा समाप्त होने वाली है?

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैंने संशोधनों के पक्ष में और विपक्ष में चर्चा के लिए पर्याप्त समय दिया है।

श्री मोहन लाल गौतम : क्या आप मुझे बोलने की अनुमति देंगे?

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मेरा मानना है कि हमारे पास चर्चा के लिए मात्र एक घंटे का उचित समय था और अब डॉ. अम्बेडकर को सदन को संबोधित करना चाहिए।

* * * *

---

* सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 19 नवम्बर, 1948, पृ. 487

\# वही, पृष्ठ 487–88

$ सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 19 नवम्बर, 1948, पृ. 493

*मानीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर – श्रीमान् उपाध्यक्ष, मैं देख रहा हूँ कि संविधान के वास्तविक प्रावधानों के विषय में इस सदन के उन सदस्यों को बहुत अधिक गलतफहमी है जो इस प्रकार के निदेशात्मक सिद्धांतों में रुचि रखते हैं।

यह बिलकुल सम्भव है कि यह गलतफहमी या पर्याप्त समझ इस कारण से है कि मैंने स्वयं प्रस्ताव के समर्थन में अपने उद्घाटन भाषण में प्रश्न के इस पहलू का जिक्र नहीं किया। यह इसलिए नहीं था कि इस मामले को सदन में स्पष्ट तरीके से रखने की मेरी इच्छा नहीं थी बल्कि इसलिए था कि मेरा भाषण वैसे ही इतना लम्बा हो गया था कि मैंने इसे पहले से और अधिक उबाऊ बनाने का जोखिम नहीं लेना चाहा; लेकिन मैं यह वांछनीय समझता हूँ कि मुझे सदन के कुछ मिनट लेने चाहिए जिससे कि मैं यह स्पष्ट कर सकूँ कि संविधान में मूल स्थिति से मेरा क्या आशय है? जैसा मैंने कहा, हमारा संविधान एक क्रिया-विधि की तरह संसदीय लोकतंत्र को निर्धारित करता है। संसदीय लोकतंत्र से हमारा अभिप्राय एक व्यक्ति, एक वोट से है। हमारा यह भी अभिप्राय है कि प्रत्येक सरकार अपने दैनिक मामलों में तथा किसी निश्चित अवधि के बाद तब परीक्षा के लिए प्रस्तुत होगी जब मतदाताओं को सरकार के कार्यों का मूल्यांकन करने का अवसर दिया जायेगा। हमने इस संविधान में राजनीतिक लोकतंत्र क्यों स्थापित किया है? इसका कारण यह है कि हम किसी भी सूरत में हमेशा के लिए कुछ लोगों के किसी विशेष निकाय का अधिनायकवाद स्थापित नहीं करना चाहते। जबकि हमने राजनीतिक लोकतंत्र स्थापित किया है तो भी हमारी इच्छा है कि हमें अपना आदर्श आर्थिक लोकतंत्र भी निर्धारित करना चाहिए। हम मात्र एक ऐसी क्रिया-विधि निर्धारित क्यों नहीं करना चाहते जिसके जरिये लोग सत्ता हथियाते रहें। संविधान उन लोगों के सामने आदर्श भी निर्धारित करना चाहता है जो सरकार बनायेंगे और वह आदर्श आर्थिक लोकतंत्र है जिससे, जहाँ तक मेरा संबंध है, मेरा अभिप्राय 'एक व्यक्ति, एक वोट' से है। प्रश्न है- क्या आर्थिक लोकतंत्र लाने के कई तरीके हैं जिनमें लोगों का विश्वास है; कुछ लोगों का विश्वास है समाजवादी राज्य की स्थापना ही आर्थिक लोकतंत्र का सर्वोत्तम रूप है, तो कुछ लोग ऐसे भी हैं जो साम्यवादी विचार को आर्थिक लोकतंत्र का सर्वाधिक सही रूप मानते हैं।

अब, इस सच्चाई को मानते हुए कि ये विभिन्न तरीके हैं जिनसे आर्थिक लोकतंत्र लाया जा सकता है, हमने सोच-समझकर निदेशात्मक सिद्धांतों में प्रयुक्त भाषा में उसे अन्तर्विष्ट किया है जो निश्चित व दृढ़ नहीं है। विभिन्न प्रकार की सोच वाले लोगों के लिए आर्थिक लोकतंत्र के उद्देश्य को पाने के निमित्त हमने काफी गुंजाइश छोड़ी है ताकि वे मतदाताओं को विश्वास दिला सकें कि आर्थिक लोकतंत्र तक पहुँचने का यही सर्वोत्तम रास्ता है।

* सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 22 नवम्बर, 1948, पृ. 494-95

महोदय, यही कारण है कि भाग IV के अनुच्छेदों की भाषा इस प्रकार की रखी गयी है जैसी प्रारुप समिति ने उचित समझी। किसी ऐसी वस्तु को निश्चित, दृढ़ रूप देना लाभदायक नहीं है जो दृढ़ है ही नहीं; जो मूलतः परिवर्तनशील है और जो परिस्थितियों तथा समय के अनुसार आवश्यक रूप से परिवर्तनशील रहेगी। इसलिए ऐसा कहने में कोई लाभ नहीं कि निदेशात्मक सिद्धांतों का कोई महत्व नहीं है। मेरे विचार में, निदेशात्मक सिद्धांतों का बहुत महत्व है क्योंकि वे यह निर्धारित करते हैं कि हमारा आदर्श आर्थिक लोकतंत्र है। क्योंकि हम संविधान की विभिन्न क्रिया-विधियों द्वारा मात्र ऐसी संसदीय सरकार नहीं चाहते थे जो आर्थिक लोकतंत्र के आदर्श के प्रति दिशाहीन हो और इसीलिए हमने सोच-समझकर इस संविधान में निदेशात्मक सिद्धांतों को शामिल किया। मेरे विचार से, यदि मेरे मित्र, जो इस विषय पर उत्तेजित हैं, इस पर ध्यान दें जो मैने अभी कहा कि हमारे इस संविधान को बनाने के वास्तव में दो उद्देश्य हैं -- (i) राजनीतिक लोकतंत्र सुनिश्चित करना और (ii) यह सुनिश्चित करना कि आर्थिक लोकतंत्र हमारा आदर्श है और यह भी निर्धारित करना कि प्रत्येक सरकार, जैसी भी हो, आर्थिक लोकतंत्र लाने का प्रयत्न करेगी तो अधिकांश गलतफहमी जिससे अधिकतर सदस्य जूझ रहे हैं दूर हो जाएगी। मेरे मित्र श्रीमान् त्यागी ने मुझसे शब्द 'स्ट्राइव' और इस तरह के वाक्यांशों हो हटाने की गुजारिश की है। मैं समझता हूँ उन्होंने गलत समझा है कि हमने 'स्ट्राइव' क्यों प्रयुक्त किया है। शब्द 'स्ट्राइव' जो प्रारुप संविधान में आया है, मेरे विचार में, बहुत महत्वपूर्ण है। ऐसी परिस्थितियां हैं जो इसे निदेशात्मक सिद्धांतों को प्रभावी बनाने से रोकती हैं या इसके आड़े आती हैं, तो भी वे कठिन और प्रतिकूल परिस्थितियों में भी इन निदेशों को प्रभावी बनाने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहेंगी। इसीलिए हमने शब्द 'स्ट्राइव' का प्रयोग किया है। अन्यथा किसी सरकार के लिए यह कहना आम हो जायेगा कि परिस्थितियां इतनी खराब हैं, वित्त इतना अपर्याप्त है कि हम इस दिशा में कुछ भी प्रयत्न नहीं कर सकते जिस दिशा में हमें संविधान करने को कहता है। मेरे विचार से मेरे मित्र श्रीमान् त्यागी समझ गये होंगे कि शब्द 'स्ट्राइव' इस संदर्भ में बड़े ही महत्व का है और इसे निकालना बहुत गलत होगा।

शेष संशोधनों के बारे में, मुझे डर है कि मुझे उनका विरोध करना पड़ेगा।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : केवल दो संशोधन प्रस्तावित किए गये हैं- मैं उन्हें मतदान के लिए रखता हूँ। पहला संशोधन नं. 863 श्री दामोदर स्वरूप सेठ के नाम में है।

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

श्री एच.वी. कामथ : महोदय मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं दे रहा।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : अगला संशोधन नं. 867 श्रीमान् नज़ीरुद्दीन का है ....

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

[*]**श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास-जनरल) :** महोदय, श्रीमान् कामथ को अपना संशोधन वापस लेने के लिए सदस्य की अनुमति अवश्य ले लेनी चाहिए।

श्रीमान् हुसैन इमाम : प्रस्तावक ने संशोधन स्वीकार कर लिया।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : क्या सदन उन्हें वापस लेने की अनुमति देता है?

कई माननीय सदस्य : हाँ।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती : मैं अनुमति दिये जाने पर आपत्ति करता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यदि वह वापस लेने चाहते हैं, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है; उन्हें वापस लेने दें।

श्री एच.वी. कामथ : सदन में इसके ऊपर कुछ विरोध है। एक माननीय सदस्य का सोचना है कि डॉ. अम्बेडकर ने इसे स्वीकार कर लिया है। मुझे नहीं मालूम कि उन्होंने स्वीकार कर लिया था। यदि उन्होंने स्वीकार कर लिया था तब वापस लेने का प्रश्न नहीं उठता।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : क्या आप वापस लेना चाहते हैं?

श्री एच.वी. कामथ : हाँ।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

अनुच्छेद 30 संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 30-अ

[#]**श्रीमान् उपाध्यक्ष (डॉ. एच.सी. मुखर्जी) :** ..... हम अब अनुच्छेद 30-अ पर फिर चर्चा शुरू करेंगे। क्या कोई सदस्य संशोधन नं. 872 पर बोलना चाहता है?

* * * *

[%]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) :** महोदय, मैं नहीं समझ पाया हूँ कि वास्तव में यह क्या है, लेकिन यदि यह ऐसा मामला है जो निषेध से संबंधित है ....

श्रीमान् उपाध्यक्ष : हाँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर - तब यह मेरे और श्रीमान् त्यागी के बीच सहमति हो गयी है कि वह अनुच्छेद 38 में एक संशोधन का प्रस्ताव करेंगे और मैं उस स्वीकार करने का प्रस्ताव करता हूँ। इसलिए यह मामला तब तक के लिए स्थगित किया जा सकता है जब तक हम अनुच्छेद 38 पर विचारार्थ नहीं पहुँच जाते।

* * * *

[*] सी.ए.डी.,(आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 19 नवम्बर, 1948, पृ. 495

[#] सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 19 नवम्बर, 1948, पृ. 501

[%] सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 22 नवम्बर, 1948, पृ. 501

[#]**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** मैं समझ नहीं पाया हूँ कि क्या यह संशोधन नं. 374 औपचारिक रूप से प्रस्तावित किया गया है?

श्री राजबहादुर : मैंने इसे औपचारिक रूप से प्रस्तावित नहीं किया है। इस प्रश्न पर सदन का ध्यान आकर्षित करने के लिए मुझे अपनी राय जाहिर करनी है।

श्री एच.वी. कामथ (सी. पी. और बिहार - जनरल) : .... मैने डॉ. अम्बेडकर के प्रस्ताव पर जो कहा था उसे दोहराना नहीं चाहता। मैं केवल आशा व्यक्त करूँगा कि जहाँ अमरीका व यूरोप द्वारा अपनाये गये पूँजीवाद तथा संसदीय लोकतंत्र और सोवियत संघ द्वारा अपनाया गया केन्द्रीयकृत समाजवाद मानवता के लिए खुशहाली, शांति और समृद्धि लाने में विफल हो गया है, ऐसे में हम भारत में एक नया सामाजिक और आर्थिक नमूना तैयार कर महात्मा गांधी के पंचायती राज के सपने को साकार कर सकने में सक्षम होंगे, हम मानवता और विश्व को शांति और खुशहाली के लक्ष्य की ओर ले जाएंगे।

मैं, इसलिए आपकी अनुमति से, औपचारिक तौर पर इस संशोधन का प्रस्ताव करता हूँ और आपसे व्यक्तिगत निवेदन करता हूँ कि इसको तब तक रोके रखें जब तक इस अनुच्छेद के अन्य संशोधन चर्चा के लिए तैयार हो पाते हैं। मैं अपना संशोधन पढ़ता हूँ -

"कि अनुच्छेद 30 के बाद, अधोलिखित नये अनुच्छेद को अन्तर्विष्ट किया जाये-

'30क-ग्राम पंचायतों को अन्तिम रूप से प्रशासन की आधारभूत इकाइयों के रूप में गठित करने के विचार के साथ, राज्य उनके स्वस्थ विकास को आगे बढ़ाने का प्रयत्न करेगा।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : क्या डॉ. अम्बेडकर इस संशोधन के विषय में कुछ कहना चाहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं प्रस्ताव करता हूँ कि यह मामला स्थगित किया जाए।

श्रीमान् उपाध्यक्ष - मैं पाता हूँ कि श्री के. सन्थानम के नाम से नया अनुच्छेद 31क जोड़ने के लिए एक संशोधन है जिसका नं. सूची में 927 है। यह और वह संशोधन साथ-साथ विचारार्थ लिए जा सकते हैं। क्या सदन की ऐसी इच्छा है कि ऐसा किया जाए?

* * * *

माननीय सदस्य : हाँ।

अनुच्छेद 31

[*]**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** सदन अब अनुच्छेद 31 को चर्चा के लिए लेगा।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद (पं. बंगाल - मुस्लिम) : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ-

---

[#] सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 22 नवम्बर, 1948, पृ. 501

[*] सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 22 नवम्बर, 1948, पृ. 487

"कि अनुच्छेद 31 की धारा (i) में, शब्दों 'पुरुष और स्त्रियां समान रूप से' को निकाल दिया जाए।"

* * * *

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं संशोधन का विरोध करता हूँ।

* * * *

#**श्री एस.वी. कृष्णामूर्ति राव (मैसूर) :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ-

"कि अनुच्छेद 31 की धारा (v) में, शब्दों 'कि शक्ति और स्वास्थ्य' के लिए शब्दों 'कि स्वास्थ्य और शक्ति' को प्रतिस्थापित किया जाए।"

मेरा संशोधन केवल वाक्य-रचना को पुनः क्रमबद्ध करने के लिए है। मेरा स्पष्टीकरण केवल इतना है कि स्वास्थ्य के बाद शक्ति आती है और वाक्य-रचना अच्छी लगती है, महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ।

* * * *

%**श्री ब्रजेश्वर प्रसाद (बिहार - जनरल) :** महोदय क्या मैं बोल सकता हूँ?

श्रीमान् उपाध्यक्ष - मुझे खेद है। मैं समझता हूँ काफी चर्चा हो चुकी है। डॉ. अम्बेडकर।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, इस विशेष अनुच्छेद के लिए प्रस्तावित बहुत से संशोधनों में से केवल चार विचार के लिए बचे हैं। मैं पहले श्रीमान् कृष्णामूर्ति राव का संशोधन लूँगा। यह केवल शाब्दिक है और साफ तौर पर कहता हूँ कि मैं इस संशोधन को स्वीकार करने के लिए पूर्णतया तैयार हूँ। उसके बाद प्रो. के. टी. शाह द्वारा प्रस्तावित तीन संशोधन शेष रहते हैं। उनका पहला संशोधन शब्दों 'प्रत्येक नागरिक' को शब्द 'नागरिकों' के लिए प्रतिस्थापित किया जाए। अब, यदि वह केवल इसी संशोधन का प्रस्ताव कर रहे होते तो मेरे लिए उनके संशोधन को स्वीकार करना कठिन नहीं होता। लेकिन वे शब्दों 'पुरुष और स्त्रियां समान रूप से' को हटाने का भी प्रस्ताव करते हैं जिस पर मुझे काफी आपत्ति है। इसलिए, मैं उनको कहूँगा कि वे इस विशेष संशोधन के लिए दबाव न डालें, इस भरोसे पर कि जब संविधान इस सदन में पारित हो जाता है और शाब्दिक परिवतनों के लिए यह प्रारुप समिति के विचारार्थ पुनः आता है, तो मैं उनकी भावनाओं का ख्याल रखने के लिए बिल्कुल तैयार रहूँगा क्योंकि मैं अच्छी तरह समझ सकता हूँ कि शब्द 'प्रत्येक नागरिक' शब्द 'नागरिकों' से बेहतर वाक्य-रचना है।

उनके अन्य संशोधनों के संबंध में, अर्थात् अनुच्छेद 31 के उपखण्डों (ii) और (iii) के लिए उनके अपने खण्डों का प्रतिस्थापन, जो कुछ भी मैं कहना चाहता हूँ

वही, पृ. 513

% वही, पृ. 518

वह यह है कि प्रो. शाह के संशोधन पर विचार करने के लिए मैं बिल्कुल तैयार होता यदि उन्होंने बताया होता कि ऐसा करने के पीछे उनका इरादा यह था और जैसी भाषा है उसके तहत यह सम्भव नहीं था। जहाँ तक मैं समझने मे सक्षम हूँ, मेरे विचार से इस प्रारुप में प्रयुक्त भाषा अधिक विस्तृत है जिसमें प्रो. शाह द्वारा प्रस्तावित प्रस्ताव भी शामिल है और इसलिए मैं इन विशेष प्रकार की सीमित धाराओं को उन धाराओं के लिए प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता नहीं समझता जो किसी निश्चित उद्देश्य के लिए सोच-समझकर सामान्य भाषा में प्रारुपित की गई हैं। इसलिए मैं उनके दूसरे और तीसरे संशोधन का विरोध करता हूँ।

*****श्रीमान् उपाध्यक्ष :** मैं अब, एक के बाद एक, इन संशोधनों को मतदान के लिए रखूँगा।

* * * *

[सभी आठ संशोधन अस्वीकृत हुए। एक छोड़ दिया गया। केवल एक संशोधन, श्रीमान् कृष्णामूर्ति राव का, स्वीकृत हुआ और उसे अपना लिया गया। अनुच्छेद 31 तदनुरूप संशोधित किया गया और संविधान में जोड़ दिया गया।]

* * * *

अनुच्छेद 31-क

#**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** श्रीमान् सन्धानम प्रस्ताव करें।

माननीय श्री के. सन्धानम : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ-

"कि अनुच्छेद 31 के बाद, अधोलिखित नया अनुच्छेद जोड़ा जाए-

'31-क - राज्य ग्राम पंचायतों को संगठित करने के लिए कदम उठाएंगा और उन्हें ऐसी शक्तियां और प्राधिकार देगा जो उन्हें स्व-सरकार की इकाइयों की तरह कार्य करने के लिए सक्षम बनाने के लिए आवश्यक हो सकते हैं'।"

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं संशोधन स्वीकार करता हूँ।

* * * *

*****माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं संशोधन को स्वीकार करता हूँ, मेरे पास और कुछ कहने के लिए नहीं है।

[एक माननीय सदस्य बोलने के लिए खड़े हुए।]

श्रीमान् उपाध्यक्ष : इस मामले में मेरा फैसला अंतिम है। मैंने अभी तक कोई ऐसा

---

* सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 22 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 518-19

सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 22 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 520

*वही, पृ. 527

व्यक्ति नहीं पाया जिसने श्रीमान् सन्थानम द्वारा रखे गये प्रस्ताव का विरोध किया हो। प्रशंसा करने के लिए कई तरीके हो सकते हैं, लेकिन मूलतः ये भाषण और कुछ नहीं है सिवाय संशोधन की प्रशंसा के।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 31-क, संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 32

@**श्री श्यामनन्दन सहाय (बिहार - जनरल) :** महोदय, मैं आपकी अनुमति से संशोधन सं. 933 और 934 का साथ-साथ प्रस्ताव करता हूँ-

"(i) कि अनुच्छेद 32 में शब्द 'शिक्षा' के बाद एक अल्पविराम चिह्न और शब्द 'चिकित्सा सहायता प्रदान करने' जोड़े जाएं; और

(ii) कि शब्दों 'ऑफ अनडिजर्ड वान्ट' के स्थान पर 'डिजविंग रिलीफ' प्रतिस्थापित किया जाए।"

* * * *

%**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) :** महोदय, मैं इन संशोधनों का विरोध करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष (डॉ. एच.सी. मुखर्जी) : मैं संशोधनों को मतदान के लिए रखता हूँ।

[संशोधन संख्या 933, 934 और 936 जो आगे और संशोघन के लिए प्रस्तुत किये गये थे, अस्वीकृत हुए।]

अनुच्छेद 34

***श्रीमान् उपाध्यक्ष :** श्रीमान् रामलिंगम चेट्टियार का संशोधन इस प्रकार है-

"और विशेषकर राज्य ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारिता की तर्ज पर कुटीर उद्योगों को आगे बढ़ाने का प्रयास करेगा।"

यह श्रीमान् चेट्टियार द्वारा प्रस्तावित संशोधन की भाषा है। इसलिए, यह ठीक क्रम में है। अब अनुच्छेद सामान्य चर्चा के लिए खुला है।

* * * *

@ सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 29 नवम्बर, 1948, पृ. 529

% वही, पृ. 529

* वही, पृ. 532

***श्री एस. नागप्पा (मद्रास - जनरल) :** महोदय, मैं सदन का समय नहीं लेना चाहता। मैं केवल एक संशोधन करना चाहता हूँ कि शब्दों 'सभी औद्योगिक कर्मकारों' से पहले 'खेतिहर' शब्द को जोड़ा जा सकता है। महोदय, मुझे कहने की आवश्यकता नहीं कि अधिकरत काम करने वाली जनसंख्या खेतिहर मजदूरों की है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : यह ठीक क्रम में नहीं है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान् उपाध्यक्ष महोदय, अधिकतर सदस्यों की भावना है कि निदेशात्मक सिद्धांतों में कुटीर उद्योगों का संदर्भ होना चाहिए। इस सदन के सदस्यों की इच्छाओं को प्रभावी बनाने के लिए अनुच्छेद 34 में कुछ शब्दों को अन्तर्विष्ट करने के लिए मैं सिद्धांतत: सहमत हूँ। इसलिए मैं श्रीमान् रामलिंगम चेट्टियार द्वारा प्रस्तावित संशोधन को स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ यदि इसमें एक या दो शब्द प्रतिस्थापित किए जाते हैं। एक प्रतिस्थापन जो मैं करना चाहूँगा वह यह है, शब्दों 'ग्रामीण क्षेत्रों में' के बाद 'वैयक्तिक या' शब्दों को जोड़ना चाहूँगा। मैं उनके शब्दों 'की तर्ज पर' को 'के आधार पर' शब्दों से प्रतिस्थापित करना चाहूँगा। इसलिए संशोधन इस रूप में होने चाहिए–

"और विशेषकर राज्य ग्रामीण क्षेत्रों में वैयक्तिक या सहकारिता के आधार पर कुटीर उद्योगों को आगे बढ़ाने के लिए प्रयास करेगा।"

इससे, मेरे विचार में, दन अधिकतर सदस्यों की इच्छायें पूरी हो जाएंगी जिनकी विशेष रूप से इस विषय में रुचि है।

मैं यह भी कहता हूँ कि मैं श्रीमान् नागप्पा द्वारा प्रस्तावित संशोधन को स्वीकार करने के लिए पूर्णतया तैयार हूँ कि 'खेतिहर' शब्द 'औद्योगिक के पहले जोड़ा जाए।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : इसकी अनुमति नहीं थी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी यदि आप इसकी अनुमति देते हैं। मेरे विचार से श्रीमान् नागप्पा का सुझाव कि खेतिहर श्रम उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि औद्योगिक श्रम और इसके लिए केवल 'अन्यथा' शब्द का संदर्भ नहीं देना चाहिए, अर्थपूर्ण है। फिर भी यह फैसले किए जाने का मामला है और इस पर आपको निर्णय लेना है।

श्री टी. रामलिंगम चेट्टियार : मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधनों को स्वीकार करता हूँ।

श्री एल. कृष्णास्वामी भारती (मद्रास - जनरल) : महोदय, क्या मैं सुझाव दे सकता हूँ कि हमें कुटीर उद्योगों पर ही रूक जाना चाहिए और शेष को निकाल देना चाहिए। आप शब्दों 'वैयक्तिक या सहकारिता के आधार पर' को क्यों चाहते हैं? इन शब्दों को जोड़ने से कोई लाभ नहीं है जब तक कि आप सहकारिता के आधार पर विशेष बल नहीं देना चाहते। मैं शब्दों 'वैयक्तिक या सहकारिता के आधार पर' को निकालना चाहूँगा।

---

* सी.ए.डी., (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 22 नवम्बर, 1948, पृ. 534-35

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, क्या मैं स्पष्ट कर सकता हूँ? मैं उन सदस्यों में जो रुचि ले रहे हैं, दो भेद पाता हूँ– पहले प्रकार के सदस्य केवल सहकारिता पर आधारित कुटीर उद्योगों में विश्वास करते हैं; दूसरे प्रकार के सदस्य विश्वास करते हैं कि कुटीर उद्योगों को इस प्रकार सीमाओं में नहीं बाँधना चाहिए। दोनों पक्षों को संतुष्ट करने के लिए ही मैंने इस वाक्य–रचना का जानबूझकर प्रयोग किया है जो मुझे यकीन है, दोनों प्रकार के विचारों को संतुष्ट करेगी जो व्यक्त किए गये हैं।

श्री एम. अनन्याशयनम आयंगर (मद्रास - जनरल) : मैं नहीं बोलना चाहता।

श्रीमान् उपाध्यक्ष - मेरे विचार में, कि यह सव आत्मनिर्भरता के आधार पर किया जायेगा। मैं अपने संशोधन में डॉ. अम्बेडकर द्वारा अंतिम तौर पर प्रस्तावित किए गये संशोधन को स्वीकार करता हूँ और उस स्थिति में मुझे अपना संशोधन वापस लेना पड़ेगा।

सभा की अनुमति से, संशोधन वापस ले लिया गया।

श्री अमियो कुमार घोष : महोदय, मैं जानना चाहता हूँ कि 'खेतिहर मजदूर' शामिल कर लिया गया है या नहीं।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : यह शामिल नहीं किया गया है लेकिन मैं अपने फैसले से हटने के लिए तैयार हूँ बशर्ते किसी असहमति के बिना, सदन डॉ. अम्बेडकर का सुझाव स्वीकार कर ले।

माननीय सदस्य : हाँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : तब मैं श्री रामालिंगम के संशोधन को जैसा डॉ. अम्बेडकर द्वारा संशोधित किया गया है मतदान के लिए रखता हूँ।

संशोधन यथा संशाधित रूप में स्वीकृत हुआ।

संशोधन जैसा अपने श्रीमान् नागप्पा द्वारा प्रस्तुत संशोधन को यथा रूप में स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 34 यथासंशोधित रूप में संविधान मे जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 35

*[*]**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** अब हम अनुच्छेद 35 पर आते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं आपसे इस अनुच्छेद को अभी स्थगित करने की अनुमति के लिए निवेदन करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : इस अनुच्छेद को बाद में विचार के लिए स्थगित किया जाता है। क्या सदन को यह मान्य है?

माननीय सदस्य - हाँ।

---

[*] सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 23 नवम्बर, 1948, पृ. 538

अनुच्छेद 36

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रा (पं. बंगाल - जनरल) : श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 36 में, शब्दों 'प्रत्येक नागरिक मुफ्त प्राथमिक शिक्षा का अधिकार है और' को निकाल दिया जाए।"

महोदय, मैं आपके द्वारा भाषणों को छोटा करने के संबंध में दिये गये आदेशा का दृढ़ता से पालन करूँगा। इस संशोधन का उद्‌देश्य स्पष्ट करने के लिए मैं आधा दर्जन ही वाक्य बोलूँगा। यदि यह संशोधन सदन द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है, जैसी मुझे उम्मीद है कि यह कर लिया जाएगा, तब यह अनुच्छेद इस प्रकार होगा–

"कि राज्य इस संविधान के शुरु होने के दस वर्ष के अन्तराल में सभी बच्चों के लिए तब तक मुफ्त और आवश्यक शिक्षा की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा जब तक कि वे चौदह वर्ष की उम्र पूरी नहीं कर लेते।"

* * * *

श्रीमान् नज़ीरुद्‌दीन अहमद (पं. बंगाल - मुसलमान) : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 36 में, 'शिक्षा' शब्द के स्थान पर शब्दों 'प्राथमिक शिक्षा' को प्रतिस्थापित किया जाए।"

* * * *

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं अपने मित्र श्रीमान् मैत्रा द्वारा प्रस्तावित संशोधन को स्वीकार करता हूँ जो यह सुझाव देता है कि शब्दों 'प्रत्येक नागरिक मुफ्त प्राथमिक शिक्षा का अधिकारी है और' को निकाल दिया जाए। लेकिन मैं अपने मित्र श्रीमान् नज़ीरुद्‌दीन अहमद के संशोधनों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूँ। वह ऐसा सोचते हुए प्रतीत होते हैं कि अनुच्छेद 36 में शेष धारा का उद्‌देश्य मुफ्त प्राथमिक शिक्षा तक सीमित है। लेकिन ऐसा नहीं है। संशोधन के बाद धारा इस प्रकार है कि प्रत्येक बच्चे को प्रशिक्षण हेतु शैक्षणिक संस्थान में तब तक रखा जाएगा जब तक कि वह बच्चा चौदह वर्ष का नहीं हो जाता। यदि मेरे मित्र नज़ीरुद्‌दीन अहमद ने अनच्छेद 18 को देखा होता जो मूलाधिकारों का भाग है तो उन्हें पता चल जाता कि अनुच्छेद 18 में एक प्रावधान किया गया है कि चौदह वर्ष से कम उम्र के किसी बच्चे को काम में लगाना मना है। स्पष्ट है कि यदि चौदह वर्ष से कम उम्र वाले बच्चे को काम में नहीं लगाना है तो उसे किसी शैक्षणिक संस्थान में रखा जाना आवश्यक है। यही अनुच्छेद 36 का उद्‌देश्य है और इसीलिए मैं कहता हूँ कि इस विशेष धारा में 'प्राथमिक' शब्द बिल्कुल भी उपयुक्त नहीं है और इसलिए मैं उनके संशोधन का विरोध करता हूँ।

* सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 23 नवम्बर, 1948, पृ. 538

[पं. मैत्रा का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। नज़ीरुद्दीन अहमद का प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।]

अनुच्छेद 36, यथा संशोधित रूप में संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 35

श्रीमान् मोहम्मद इस्माइल साहिब (मद्रास - मुस्लिम) : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ कि अधोलिखित प्रतिबंध को अनुच्छेद 35 में जोड़ा जाए-

"बशर्ते कि लोगों के किसी समूह, भाग या समुदाय का यदि कोई व्यक्तिगत कानून है तो वह उस कानून को त्यागने के लिए बाध्य नहीं होगा।"

* * * *

#**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मुझे डर है मैं इस अनुच्छेद के लिए प्रस्तावित किए गये संशोधनों को स्वीकार नहीं कर सकता। इस मामले पर विचार करने में, मैं इस प्रश्न के गुण-दोष को छूने का प्रस्ताव नहीं करता कि इस देश में नागरिक संहिता होनी चाहिए या नहीं। यह ऐसा मामला है जिस पर, मेरे विचार से मेरे मित्र श्रीमान् मुंशी तथा श्रीमान् अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर द्वारा पर्याप्त रूप से विचार किया जा चुका है। जब कुछ निश्चित मूलाधिकारों में संशोधन प्रस्तावित किए जाएंगे तब मेरे लिए इस विषय पर पूरी बात कहना सम्भव होगा और इसलिए मैं इस पर यहाँ विचार करने का प्रस्ताव नहीं कर रहा।

मेरे मित्र, श्रीमान् हुसैन इमाम ने संशोधनों के समर्थन में पूछा था कि क्या इतने विशाल देश में कानूनों की एक समान संहिता और वांछनीय है? अब मुझे यह कहने में कोइ हिचक नहीं है कि मैं इन कथनों पर बहुत अधिक आश्चर्यचकित हुआ था। इसका सीधा सा कारण है कि इस देश में मानवीय संबंधों के प्रत्येक पहलू को शामिल करने वाले कानूनों की एक समान संहिता है। हमारे पास एक पूर्ण और समान संहिता है जो पूरे देश में प्रचलित में है और जो दंड संहिता तथा आपराधिक प्रक्रिया संहिता में अन्तर्विष्ट है। हमारे पास सम्पति हस्तांतरण कानून है जो सम्पति संबंधों से संबंधित है और जो पूरे देश में लागू है। उसके बाद विक्रय हुंडी अधिनियम है और मैं अधिसंख्य कानूनों का हवाला दे सकता हूँ जो यह सिद्ध कर देंगे कि इस देश में वास्तव में एक नागरिक संहिता है जो विषयों में समान है और पूरे देश में लागू है। नागरिक कानून एकमात्र जिस क्षेत्र में अभी तक प्रवेश नहीं कर सका है वह है विवाह और उत्तराधिकार। और यही वह छोटा-सा क्षेत्र है जिसमें हम अभी तक प्रवेश नहीं कर पाए हैं, जो अनुच्छेद 35 को संविधान का हिस्सा बनाने के इच्छुक हैं उन लोगों का यह परिवर्तन लाने का इरादा है। इसलिए यह तर्क कि क्या हमें ऐसा करने का प्रयत्न करना चाहिए, यहाँ मुझे कुछ अनुचित प्रतीत होता है और इसकी सीधी वजह है कि सच्चाई के तौर पर हमने

** सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 23 नवम्बर, 1948, पृ. 540

वही, 23 नवम्बर, 1948 पृ. 550

पूरा का पूरा क्षेत्र शामिल कर लिया है जो इस देश में समान संहिता द्वारा शामिल किया गया है। इसलिए यह प्रश्न पूछने के लिए अब बहुत देर हो चुकी है, कि क्या हम यह कर सकते हैं? जैसा मैं कहता हूँ, हम यह पहले ही कर चुके हैं।

संशोधनों पर आते हुए, मैं केवल दो टिप्पणियां करना चाहूँगा। मेरी पहली टिप्पणी यह होगी कि जिन सदस्यों ने इस संशोधनों को रखा है वे कहते हैं कि मुसलमानों का व्यक्तिगत कानून, जहाँ तक इस देश का संबंध है, अपरिवर्तनीय है और पूरे भारत में एक-सा है। अब मैं इस वक्तव्य को चुनौती देना चाहता हूँ। मेरे विचार से मेरे अधिकतर मित्र जो इस संशोधन पर बोले हैं वे यह बिल्कुल भूल गये हैं कि 1935 तक उत्तर-पश्चिमी सीमांत क्षेत्र पर शरीयत कानून लागू नहीं था। उत्तराधिकारी तथा अन्य मामलों में यह हिन्दू कानून का अनुसरण करता था, यहाँ तक कि 1939 में केन्द्रीय विधायिका को उत्तर-पश्चिमी सीमा के मुसलमानों पर लागू होने वाले हिन्दू कानून को समाप्त करने और उन पर शरीयत कानून को लागू करने के लिए इस क्षेत्र में आना पड़ा। इतना ही नही है। मेरे माननीय मित्र भूल गये हैं कि उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रांत के अलावा, शेष भारत में 1937 तक, विभिन्न हिस्सों, उदाहरणार्थ, संयुक्त प्रांत, केन्द्रीय प्रांत और बम्बई में मुसलमानों पर उत्तराधिकार के मामले में, हिन्दू कानून ही लागू होता था। उन दूसरे मुसलमानों की तुलना में, जो शरीयत कानून का पालत करते थे, इन्हें समान धरातल पर लाने के लिए विधायिका को 1937 में हस्तक्षेप करना पड़ा और शेष भारत में भी शरीयत कानून को लागू करना पड़ा।

मुझे मेरे मित्र श्री करुणाकर मेनन ने सूचित किया है कि उत्तरी मालबार में सभी पर, हिन्दू ही नहीं, मुसलमानों पर भी, मारूमक्कथ्यम कानून लागू होता था। यह याद करने योग्य है कि मारूमक्कथ्यम कानून एक मातृप्रधान कानून है, न कि पितृप्रधान।

इसलिए उत्तरी मालबार में मुसलमान अभी तक मारूमक्कथ्यम कानून का ही अनुसरण कर रहे थे। इसलिए यह कहना व्यर्थ है कि मुसलमानों का कानून अपरिवर्तनीय रहा है जिसका वे प्राचीन काल से अनुसरण कर रहे हैं। यह कानून अभी तक किन्हीं हिस्सों में लागू नहीं था और इसे दस वर्ष पूर्व ही लागू किया गया है। इसलिए यदि यह आवश्यक समझा गया कि एक समान नागरिक संहिता विकसित करने के लिए जो सभी नागरिकों पर, धर्म पर विचार किए बिना, लागू होती हो, हिन्दू कानून के कुछ हिस्से, इसलिए नहीं कि वे हिन्दू कानून के हिस्से थे बल्कि वे सबसे अधिक उपयुक्त थे, अनुच्छेद 35 द्वारा नमूने के तौर पर तैयार की गई नयी नागरिक संहिता में सम्मिलित कर लिए गये तो मुझे पूरा यकीन है कि किसी मुसलमान के लिए यह कहना ठीक नहीं होगा कि नागरिक संहिता को बनाने वालों ने मुस्लिम समुदाय की भावनाओं के साथ खिलवाड़ किया है।

मेरी दूसरी टिप्पणी उन्हें विश्वास दिलाने के लिए है। मुझे इस मामले के प्रति उनकी भावनाओं का अहसास है, लेकिन, मेरे विचार से, उन्होंने अनुच्छेद 35 का कुछ अधिक ही अर्थ लगा लिया है जो केवल यह प्रस्तावित करता है कि राज्य देश के नागरिकों के

लिए एक नागरिक संहिता उपलब्ध कराने का प्रयास करेगा। वह यह नहीं कहता कि जब संहिता बन कर तैयार हो जाएगी उसके बाद राज्य इसे नागरिकों पर बलपूर्वक लागू करेगा, मात्र इसलिए कि वे नागरिक हैं। यह पूर्णतया सम्भव है कि भविष्य में संसद यह प्रावधान कर दे कि संहिता उन्हीं पर लागू होगी जो यह घोषणा करते हैं कि वे इसका पालन करने के लिए तैयार हैं, ताकि शुरुआत मे संहिता का लागू होना विशुद्ध रूप से ऐच्छिक होगा। संसद इस प्रकार के किसी तरीके से यह महसूस कर सकती है। यह एक नया तरीका नहीं है। यह शरीयत अधिनियम, 1937 में अपनाया गया था जब यह उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रांत के अलावा दूसरे क्षेत्रों पर लागू किया गया था। शरीयत कानून को मुसलमानों पर लागू करना चाहिए बशर्ते कि एक मुसलमान जो शरीयत अधिनियम से बँधना चाहता है, वह राज्य के अधिकारी के पास जाता है और घोषणा कर देता है उसके बाद कानून उसको तथा उसके उत्तराधिकारियों को इससे बाँध देगा। संसद के लिए यह बिल्कुल संभव होगा कि इस तरह का प्रावधान अन्तर्विष्ट करे ताकि जो आशंका मेरे मित्रों ने यहाँ व्यक्त की है वह पूर्णतया दूर हो जाए। इसलिए मै इसका विरोध करता हूँ।

[मोहम्मद इस्माइल साहिब तथा बी. पोकर साहिब के प्रस्ताव अस्वीकृत हुए। अनुच्छेद 35 संविधान में जोड़ दिया गया।]

अनुच्छेद 37

*__सरदार हुकुम सिंह (पूर्वी पंजाब - सिख) :__ श्रीमान् उपाध्यक्ष मैं प्रस्ताव करता हूँ-

"कि अनुच्छेद 37 में, शब्दों -अनुसूचित जाति' के लिए शब्दों 'किसी भी धर्म या वर्ग के पिछड़े समुदाय, को प्रतिस्थापित किया जाए।"

महोदय, "अनुसूचित जाति" यह प्रारुप संविधान के अनुच्छेद 303(w) में भारत सरकार आदेश, 1936 (अनुसूचित जाति) में उल्लिखित जातियों के रूप में परिभाषित किया गया है। उस आदेश में अधिकांश जनजातियों, जातियों, उपजातियों का वर्णन है जिनमें बावरिया, चमार, चुहरा, बाल्मीकि, ओद, साँसी, सिरवीबन्द और रामदसिया शामिल हैं। उदाहरण के लिए, इसमें सिख रामदसियों, ओदों, बाल्मीकियों और चमारों की एक बड़ी संख्या है। वे उतने ही पिछड़े हैं जितने कि उनके दूसरे धर्म के भाई-बन्धु। लेकिन अभी तक ये सिख पिछड़ी जातियां अनुसूचित जातियों को मिलने वाले लाभों से वंचित रखी गयी हैं। इसका परिणाम है या बड़ी संख्या में धर्म परिवर्तन है या असंतोष। मैं अनुभव करता हूँ कि जहाँ तक विधायिका के चुनाव का संबंध है, यह कुछ हद तक तर्कसंगत हो सकता है क्योंकि सिखों का अलग से प्रतिनिधित्व है और अनुसूचित जातियों का सामान्य सीटों में से उनका अपना हिस्सा आरक्षित है। एस. गोपालसिंह खालसा का एक प्रसिद्ध मामला है जिन्हें किसी एक क्षेत्र से चुनाव लड़ने की तब तक अनुमति नहीं दी गई जब तक उन्होंने यह घोषित नहीं कर दिया कि

वह सिख नहीं है। इस प्रकार के मामलों से इस आम धारणा के कारण और असंतोष पैदा हुआ है कि कुछ वर्गों के विरुद्ध भेदभाव बरता जा रहा है।

अब विचार सामाज के पिछड़े वर्ग को ऊँचा उठाने का है ताकि वे राष्ट्रीय गतिविधियों में समान योगदान देने मे सक्षम हो सकें। मैं इस विचार को पूरा समर्थन देता हूँ। मुझे एक तर्क का सामना करना पड़ सकता है कि कम से कम अनुच्छेद का पहला भाग है जो कमजोर वर्गों के लोगों के शैक्षणिक और आर्थिक हितों को बढ़ाने का प्रावधान करता है। यह बिल्कुल सही है और यह प्रत्येक वर्ग पर लागू किया जा सकता है। लेकिन चूँकि "कमजोर वर्ग" कहीं भी परिभाषित नहीं किया गया है इसलिए अंदेशा यही है कि पूरा का पूरा ध्यान बाद के हिस्से जो अनुसूचित जाति से संबंधित है पर जायेगा और 'कमजोर वर्गों' का और कुछ अर्थ नहीं हो सकता। अनुच्छेद भी 'विशेषकर' शब्द द्वारा पूरा का पूरा बल इस बाद के हिस्से पर देता है जो 'अनुसूचित जाति' है।

इस संबंध में मुझे गलत नहीं समझा जा सकता। राज्य की 'अनुसूचित जातियों' के प्रति विशेष परवाह से मुझे ईर्ष्या नहीं है। अपेक्षाकृत मैं पिछड़े वर्गों को और भी अधिक रियायतें दिये जाने का समर्थन करूँगा। मेरा एक मात्र उद्देश्य है कि कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए और अनुच्छेद का ऐसा इरादा भी नहीं है। लेकिन जैसा कि मैं कह चुका हूँ जहाँ तक आम लोग 'अनुसूचित जातियों' के बारे में समझते हैं वे सिख धर्म को मानने वाली इन्हीं जातियों को इनके बाहर कर देते हैं। हमें उन लोगों के द्वारा किसी गलत अर्थ लगाये जाने या किसी प्रकार का भेदभाव बरते जाने के विरुद्ध आश्वासन देने के लिए सावधान रहना चाहिए जो इसके वास्तविक कार्य संचालन के लिए उत्तरदायी होंगे। प्रस्तुत अनुच्छेद के तहत, "शैक्षणिक और आर्थिक हितों" को आगे बढ़ाया जाना है और इसलिए यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि यह सभी पिछड़े वर्गों के लिए किया जाना है न कि किसी विशेष धर्म को मानने वाले लोगों के लिए। मैं यह प्रस्ताव सदन की स्वीकृति हेतु प्रस्तुत करता हूँ।

श्री ए.वी. ठक्कर (संयुक्त राज्य काठियावाड़ - सौराष्ट्र) : महोदय, मैं संशोधन नम्बर 983 का प्रस्ताव करता हूँ जो हिन्दुओं और मुस्लिम पिछड़ी जातियों को शामिल करने की माँग करता है ....

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : क्या मैं एक बात कह सकता हूँ? मेरा विश्वास है कि पिछड़े वर्गों आदि से संबंधित ये दोनों संशोधन अनुसूची के लिए अधिक उपयुक्त होंगे और इन पर अच्छी तरह विचार किया जा सकता है जब हम अनुसूची पर विचार करेंगे। मैं सुझाव देता हूँ कि इन संशोधनों पर विचार-विमर्श स्थगित किया जा सकता है।

श्री ए.वी. ठक्कर : मेरे संशोधन कुछ सिद्धांतों को निर्धारित करने का प्रयत्न करते हैं।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : डॉ. अम्बेडकर इन संशोधनों पर हर संभव विचार अनुसूची में करने का प्रस्ताव करते हैं।

श्री ए.वी. ठक्कर : क्या वह सभी पिछड़े वर्गों को शामिल करने के लिए सहमत हैं?

श्रीमान् उपाध्यक्ष : अब यह मुश्किल से ही किसी बात के लिए सहमत हो सकते हैं। मामले पर बाद में चर्चा होगी।

श्री ए.वी. ठक्कर : तब मैं अपने संशोधन का अभी प्रस्ताव नहीं करता।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : महोदय, मैं अपना संशोधन (985) प्रस्तावित नहीं कर रहा हूँ। यह अनुसूचित जनजाति के मामले में केवल बड़े अक्षरों को प्रयोग करने का प्रयत्न करता है। मैं प्रारुप समिति के अध्यक्ष का ध्यान आदरसहित प्रारुप संविधान के पृष्ठ 147 पर अनुच्छेद 303(1) के विषय (w)और (x) की ओर आकृष्ट करना चाहूँगा। वहाँ दो परिभाषाएं हैं 'अनुसूचित जाति' और 'अनुसूचित जनजाति'। 'अनुसूचित जाति' तो हर जगह बड़े अक्षरों में है लेकिन 'अनुसूचित जनजाति' छोटे अक्षरों में है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हम इस पर विचार करेंगे।

सरदार हुकुम सिंह : मैं अपना संशोधन वापस लेने की अनुमति चाहता हूँ।

सभा की अनुमति से, संशोधन वापस लिया गया।

* * * *

अनुच्छेद 37 संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 38

*__श्रीमान् उपाध्यक्ष :__ हम आज की कार्यवाही प्रारुप संविधान के उस विशेष अनुच्छेद पर विचार से शुरू करेंगे जिससे हम संबद्ध हैं। विधेयक को थोड़ी देर के बाद प्रस्तुत किया जाएगा।

प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना (संयुक्त प्रांत - जनरल) : मैं एक संशोधन रख रहा हूँ जो श्रीमान् महावीर त्यागी का है। मैं उम्मीद करता हूँ कि यह उनको स्वीकार्य होगा, क्योंकि उन्होंने अपने संशोधन में 'औषधीय उद्देश्यों के अतिरिक्त' शब्दों को शामिल नहीं किया है। यदि श्रीमान् त्यागी का संशोधन, जैसा मेरे संशोधन द्वारा संशोधित किया गया है, स्वीकार कर लिया जाता है तो यह बहुत अच्छा हो जाएगा। मैं डॉ. अम्बेडकर से अपनी इच्छा प्रकट करता हूँ कि वह मेरे संशोधन को स्वीकार कर लें जो सूची IV के 86 नम्बर में उल्लिखित है।

महोदय, मैं प्रस्ताव करने की प्रार्थना करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 38 के अन्त में, अधोलिखित को प्रतिस्थापित किया जाय–

'और उन नशीले पेय और मादक द्रव्यों के उपयोग पर निषेध लाने के लिए प्रयास करेगा जो औषधीय उद्देश्यो के अतिरिक्त स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।"

* सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 24 नवम्बर, 1948, पृ. 555

#**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** श्रीमान् उपाध्यक्ष, मैं प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना का संशोधन स्वीकार करता हूँ जो आगे इस तरह से संशोधित किया गया है कि उनके संशोधन सूची IV के 86 नम्बर के शुरू में "और" शब्द के बाद 'विशेषकर' शब्द जोड़ा जाए।

श्री महावीर त्यागी : मुझे वास्तव में समझ नहीं आता कि डॉ. अम्बेडकर इस संशोधन को कैसे स्वीकार कर सकते हैं जबकि मेरा संशोधन चर्चा के अधीन है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन द्वारा संशोधित श्रीमान् त्यागी का संशोधन करता हूँ।

(सदस्यगण हँस पड़ते हैं)

श्रीमान् उपाध्यक्ष : श्रीमान् त्यागी अधिकारों के बड़े आग्रही हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, यदि मैं ऐसा कह सकता हूँ, अधिकार वास्तव में मेरा है, क्योंकि मैने ही इस संशोधन को प्रारूपित किया है जिसका उन्होंने प्रस्ताव किया है। (फिर से हँसी छूट जाती है)

श्रीमान् उपाध्यक्ष – यह मामले पर नये ढंग से प्रकाश डालता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर –: मैं नहीं समझता इस संशोधन को स्वीकारने में सदन को कोई कठिनाई होगी। इसके विरुद्ध दो बातें उठायी गयी हैं। एक प्रो. खांडेकर द्वारा है जो सभा में कोल्हापुर का प्रतिनिधित्व करते हैं। मुझे विश्वास है कि श्रीमान् खांडेकर ने इस सच्चाई का पर्याप्त रूप से आकलन नहीं किया है कि यह धारा 3स अनुच्छेद की धाराओं में से एक है जो नीति के निदेशात्मक सिद्धांतों को सूचीबद्ध करता है। इसलिए राज्य के लिए इस सिद्धांत पर कार्य करना अनिवार्य नहीं है। इस सिद्धांत पर काम करना, न करना और कब ऐसा करना राज्य और जनमत पर छोड़ दिया गया है। इसलिए, यदि राज्य सोचता है, कि निषेध लाने का समय नहीं आया है या यह इन निदेशात्मक सिद्धांतों के तहत, धीरे-धीरे या अंशतः लाया जा सकता है तो उसे ऐसा करने की पूरी आजादी है। इसलिए मैं नहीं सोचता कि इस मामले में हमें खेद करने की आवश्यकता है।

लेकिन, महोदय, मुझे अपने मित्र श्रीमान् जयपाल सिंह द्वारा दिये गये भाषण पर काफी आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा कि इस मामले पर अभी चर्चा नहीं होनी चाहिए। बल्कि तब तक के लिए स्थगित कर देनी चाहिए जब हम जनजातीय क्षेत्रों पर सलाहकार समिति के प्रतिवेदन पर चर्चा करेंगे। यदि उन्होंने प्रारुप संविधान पढ़ा होता विशेषकर छठी अनुसूची का पैरा 12, तो उन्होंने पाया होता कि निषेध के विषय में जनजातीय लोगों की सुरक्षा के लिए व्यापक प्रावधान किया गया है। जनजातीय क्षेत्रों के संबंध में योजना यह है कि राज्य द्वारा, या तो प्रांत या फिर केन्द्र द्वारा, बनाया गया कानून स्वतः ही इस विशिष्ट क्षेत्र पर लागू नहीं होता। सर्वप्रथम, कानून बनाना होगा। दूसरे, इन क्षेत्रों में प्रशासन के उद्देश्य हेतु संविधान के तहत स्थापित जिला परिषदों तथा क्षेत्रीय परिषदों को यह कहने की शक्ति दी गई है कि प्रांत या केन्द्र द्वारा बनाया गया विशेष कानून उस विशेष क्षेत्र पर लागू होना चाहिए या नहीं जिसमें जनजातीय लोग रहते हैं और निषेध से

संबंधित कानून का विशेष उल्लेख किया गया है। मैं अब पैरा 12 को उप-पैरा (अ) पढ़ूँगा जो प्रारुप संविधान में पृष्ठ 184 पर है। यह कहता है ---

"इस संविधान में निहित किसी बात के बावजूद-

(क) इस अनुसूची के पैरा 3 में उल्लिखित ऐसे मामलों में से किसी एक के संबंध में जिसके संबंध में जिला परिषद कानून बना सकती है राज्य का कोई अधिनियम, और किसी अनावसित मादक द्रव के सेवन पर प्रतिबंध लगाने वाले राज्य का कोई अधिनियम स्वायत्त क्षेत्र पर लागू नहीं होगा जब तक कि दोनों मामलों में इस जिले के लिए जिला परिषद या जिसका इस क्षेत्र पर न्यायाधिकार है सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा इस तरह का निदेश नहीं देता और किसी अधिनियम के संबंध में इस तरह का निदेश देते हुए जिला परिषद यह निदेश दे सकती है कि अधिनियम इस प्रकार के जिलो या क्षेत्र में या इसके किसी हिस्से में अपनी प्रयुक्ति में इस प्रकार के अपवादों और सुधारों जिनको यह उचित समझती है कि अधीन प्रभावी होगा;

अब मुझे नहीं पता मेरे मित्र श्रीमान् जयपाल सिंह छठी अनुसूची के पैरा 12 के इस प्रावधान से अधिक क्या चाहते हैं। मेरा डर यह है कि उन्होंने छठी अनुसूची नहीं पढ़ी है- यदि उन्होंने पढ़ी होती तो उन्हें अहसाा हो चुका होता कि राज्य निषेध संबंधी अपने कानून को देश के किसी भी हिस्से में लागू कर सकता है तो भी राज्य को इसे जिला परिषदों या क्षेत्रीय परिषदों की स्वीकृति के बिना जनजातीय क्षेत्रों में लागू करने का कोई अधिकार नहीं है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : तीन संशोधन हैं। एक श्रीमान् महावीर त्यागी का है। यह सूची II में 71 नम्बर पर है। यदि मैं सही स्थिति बयान करता हूँ जो वास्तव में वापस ले ली गई है। क्या मैं सही हूँ, श्रीमान् त्यागी?

श्री महावीर त्यागी : मैंने अपना संशोधन वापस नहीं लिया है। मैने केवल उन शब्दों को स्वीकार किया है जिन्हें प्रो. शिब्बनलाता सक्सेना ने अपने संशोधन के द्वारा जोड़ने का इरादा किया है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं जानना चाहता हूँ कि क्या आप चाहते हैं कि आपका संशोधन मतदान के लिए अलग से रखा जाना चाहिए।

श्री महावीर त्यागी : हाँ, महोदय, यकीनन। जैसा मैं कह चुका हूँ मैं 'द्रव' को पूर्णतया समाप्त करना चाहता हूँ। वह 'औषधीय उद्देश्य के अतिरिक्त' शब्दों को जोड़ना चाहते हैं। इसलिए मेरा संशोधन मूल संशोधन है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं स्थिति समझता हूँ। मैं अब श्री महावीर त्यागी का संशोधन जैसा प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना द्वारा और आगे डॉ. अम्बेडकर द्वारा संशोधित किया गया, मतदान के लिए रखता हूँ।

श्री महावीर त्यागी : एक नियम संबंधी आपत्ति पर, डॉ. अम्बेडकर ने 'विशेषकर' शब्द जोड़ा है लेकिन उन्होंने मुझसे अनुमति नहीं ली है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : डॉ. अम्बेडकर की ओर से मैं आपसे अनुमति लेता हूँ।

श्री महावीर त्यागी : महोदय, मैं भी उनका संशोधन स्वीकार करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : यह विशेष संशोधन, जैसा संशोधित किया गया है अब मतदान के लिए रखा जाता है।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

[अनुच्छेद 38, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।]

* * * *

अनुच्छेद 38-क

*__पंडित ठाकुरदास भार्गव (पूर्वी पंजाब - जनरल) :__ #श्रीमान् अध्यक्ष, संशोधन संख्या 72, जिसका मैं संशोधन संख्या 1002 के स्थान पर प्रस्ताव कर रहा हूँ, के शब्द इस प्रकार हैं-

"कि 38-क. के संशोधनों की सूची के संशोधन नम्बर 1002 के लिए अधोलिखित को प्रतिस्थापित किया जाए --

"38-क, राज्य कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक तरीके से संगठित करने का प्रयास करेगा और विशेषकर पशुओं की किस्मों को संरक्षित रखने और बेहतर बनाने के लिए कदम उठायेगा तथा गाय और अन्य उपयोगी पशुओं विशेषकर दूध देने वाले और भारवाही पशु तथा उनके बच्चों की हत्या को निषिद्ध करने का प्रयास करेगा।"

बिल्कुल आरंभ में मैं यह कहना चाहूँगा कि यह संशोधन ....

श्री एस. नागप्पा (मद्रास - जनरल) : महोदय, मैं नियम संबंधी आपत्ति कर रहा हूँ, मेरे मित्र जो अच्छी तरह अंग्रजी बोल सकते हैं, जानबूझकर उर्दू या हिन्दुस्तानी में बात कर रहे हैं जो अधिकतर दक्षिण भारतीय समझ नहीं सकते।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : माननीय सदस्य को, किसी भी भाषा में, जिसमें उनकी इच्छा हो, बोलने का अधिकार है लेकिन मैं उनसे अंग्रजी में बोलने का अनुरोध करता हूँ हालांकि वह अंग्रजी में बोलने के लिए बाध्य नहीं है।

पंडित ठाकुरदास भार्गव : मैं गाय के बारे में हिन्दी में बोलना चाहता था जो मेरी अपनी भाषा है और मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि मुझे अंग्रजी में बोलने का आदेश न दें क्योंकि विषय बहुत ही महत्वपूर्ण है। मैं अपनी बात उस भाषा में कहूँगा जिसमें मुझे

---

* सी.ए.डी., अंक VII, 24 नवम्बर, 1948, पृ. 568

\# हिन्दुस्तानी भाषण का अनुवाद।

अधिक सुविधा व आसानी होगी। इसलिए मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि कृपया मुझे हिन्दी में बोलने की अनुमति दें।

[श्रीमान् उपाध्यक्ष इस संशोधन के संबंध में मैं सदन के समक्ष यह कहना चाहूँगा कि वास्तव में यह संशोधन दूसरे संशोधन की तरह, जिसके बारे में डॉ. अम्बेडकर ने कहा है, उनका उत्पादन है ....]

* * * *

[#]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** मैं पंडित ठाकुरदास का संशोधन स्वीकार करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं अब संशोधनों को एक-एक करके मतदान के लिए रखूँगा।

[प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।]

अनुच्छेद 38-क, जैसा संशाधित किया गया, संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद-39

[%]**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** क्या हम कार्यसूची के अगले विषय पर आएं? 1003 संख्या पहले ही एक पिछले संशोधन द्वारा शामिल किया जा चुका है। संख्या 1004 निपटा दिया गया है। तब संख्या 1005 इसका पहला भाग प्रस्तावित नहीं किया जा सकता लेकिन दूसरा भाग किया जा सकता है। (प्रस्तावित नहीं किया गया।)

तब सदन के समक्ष प्रस्ताव यह है कि अनुच्छेद 39 संविधान का भाग बन गया है। इसके बारे में कई संशोधन हैं।

(संख्या 1006, 1007 और 1008 प्रस्तावित नहीं किए गये।)

डॉ. अम्बेडकर और उनके साथियों द्वारा संशोधन संख्या 1009 प्रस्तुत किया गया।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ-

"कि अनुच्छेद 39 में, शब्दों 'स्पोलिएशन' के बाद शब्द 'डिसफिगरमैंट' अन्तर्विष्ट किया जाये।"

प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना : श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ -

"कि अनुच्छेद 39 में, शब्दों 'स्पोलिएशन' के शब्द 'डिसफिगरमैंट' अन्तर्विष्ट किया जाये और शब्दों 'मे बी' के बाद अनुच्छेद में अंत तक के सभी शब्द निकाल दिये जाएं।"

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : आप भाषण क्यों देना चाहते हैं? जब मैं इसे स्वीकार करने जा रहा हूँ।

[#] सी.ए.डी., अंक VII, 24 नवम्बर, 1948, पृ. 580

[%] वही, पष्ठ 581

प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना : मुझे प्रसन्नता है कि डॉ. अम्बेडकर इसे स्वीकार करने जा रहे हैं। क्योंकि यह अनुच्छेद एक निदेशात्मक सिद्धांत है इसलिए इसे संसद के कानूनों का उल्लेख नहीं करना चाहिए और इसलिए हमें शब्दों "संसद द्वारा बनाये गये कानून के अनुसार इस प्रकार के सभी स्मारकों या स्थानों या वस्तुओं को संरक्षित रखना तथा बनाये रखना" को अवश्य निकाल देना चाहिए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं संशोधन को स्वीकार करता हूँ।

* * * *

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं एक के बाद एक, इन संशोधनों को मतदान के लिए रख रहा हूँ।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : यह प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना का संशोधन है।

बेगम ऐज़ाज रसूल (संयुक्त प्रांत - मुसलमान) : क्या मैं जान सकती हूँ कि क्या डॉ. अम्बेडकर ने प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना का संशोधन स्वीकार कर लिया है? यदि नहीं, तो मैं दूसरे भाग का विरोध चाहती हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : जहाँ तक मुझे जानकारी है कोई दूसरा भाग नहीं है। यह मात्र कुछ शब्दों को निकालने के लिए है। पहला भाग यही है।

बेगम ऐज़ाज रसूल : मैं इस प्रस्ताव का विरोध करना चाहती हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं समझता हूँ कि अब बहुत देर हो चुकी है।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 39, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 39-क

[*]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ-

"कि अनुच्छेद 39 के बाद, अधोलिखित नया अनुच्छेद अन्तर्विष्ट किया जाए -

'39-अ. कि राज्य अपनी सार्वजनिक सेवाओं में इस संविधान के शुरू होने के तीन वर्ष के अन्तराल के अन्दर यह सुनिश्चित करने के लिए कि कार्यपालिका से न्यायपालिका अलग है, कदम उठायेगा'।"

मैं नहीं सोचता कि मेरे लिए संशोधन जिसका मैंने प्रस्ताव किया है, के समर्थन में कोई लम्बा चौड़ा वक्तव्य देने की आवश्यकता है। बहुत समय से इस देश की यह इच्छा रही है और ठीक उस समय से इसकी मांग चलती रही है जब कांग्रेस की नींव पड़ी

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 24 नवम्बर, 1948, पृ. 582

थी। दुर्भाग्य से, ब्रिटिश सरकार ने इस विशेष सिद्धांत को देश के प्रशासन में जोड़ने में प्रभावी नहीं किया। हमारे विचार से, समय आ चुका है जब यह सुधार कर दिया जाना चाहिए। निस्संदेह यह अनुभव किया गया है कि इस सुधार को कार्यान्वित करने में कुछ कठिनाइयाँ हैं, परिणामतः इस संशोधन ने दो विशेष मामलों पर विचार किया है जो कि कठिनाई से भरे हैं। एक यह है – हमने जान-बूझकर इसे मूल सिद्धांत का मामला नहीं बनाया, क्योंकि यदि हमने इसे मूल सिद्धांत का मामला बनाया होता तो संविधान के पारित होते ही कार्यपालिका तथा न्यायपालिका को अलग किया जाना पूर्णतया अनिवार्य हो जाता। इसलिए हमने निदेशात्मक सिद्धांतों से संबंधित अध्याय में, इस मामले को सोच-समझकर रखा और वहाँ भी हमने यह प्रावधान किया है कि यह सुधार तीन वर्षों के अन्दर किया जाएगा ताकि इस तरह के मामले में विलम्ब की कोई गुंजाइश न रहे। महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ।

अनुच्छेद 39-क

*श्रीमान् उपाध्यक्ष - (डॉ. एच.सी. मुखर्जी) :** एक संशोधन के बारे में डॉ. अम्बेडकर से नोटिस प्राप्त हुआ है। क्या आप अपना संशोधन प्रस्तावित करेंगे, डॉ. अम्बेडकर?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) : श्रीमान् उपाध्यक्ष मैं प्रस्ताव करता हूँ-

"कि अनुच्छेद 39-क में, शब्दों 'इस संविधान के शुरू होने के तीन वर्ष के अन्तराल के अन्दर यह सुनिश्चित करने के लिए' को निकाल दिया जाए तथा 'कि कार्यपालिका से न्यायपालिका अलग है' शब्दों के स्थान पर 'न्यायपालिका को कार्यपालिका से अलग करने के लिए' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं।"

ताकि अनुच्छेद 39-क इस संशोधन के बाद इस प्रकार पढ़ा जाए-

"राज्य अपनी सार्वजनिक सेवाओं में न्यायपालिका को कार्यपालिका से अलग करने के लिए कदम उठायेगा।"

सदन ध्यान देगा कि इस संशोधन का उद्देश्य तीन वर्ष के अन्तराल को दूर करना है जिसका मूल अनुच्छेद 39-क में उल्लेख है। मैं यह संशोधन करने पर क्यों बाध्य हुआ इसके ये कारण हैं। सदन का एक भाग ऐसा है जो यह महसूस करता है कि इन निदेशात्मक सिद्धांतों में हमें अवधि और प्रक्रिया संबंधी मामलों का ब्यौरा नहीं जोड़ना चाहिए। इन निदेशात्मक सिद्धांतों को निरूपित करना चाहिए और इनके कार्यान्वित किए जाने के विस्तार में नहीं जाना चाहिए। यह पहला कारण है कि मैं महसूस करता हूँ कि तीन वर्ष का अन्तराल अनुच्छेद 39-क में से निकाल दिया जाना चाहिए।

---

* सी.ए.डी., अंक VII, 25 नवम्बर, 1948, पृ. 585-86

दूसरा कारण जिसकी वजह से मैं यह संशोधन करने के लिए मजबूर हुआ हूँ यह है शब्द 'तीन वर्ष' जिस पर सदन के कुछ सदस्यों में मतभेद है। कुछ का कहना है, यदि तीन वर्ष की अवधि दी जाती है तो कोई भी सरकार तीसरे वर्ष के शुरू होने से पहले कोई कदम नहीं उठायेगी। आप वास्तव में प्रांतों की विधायिका को अनुच्छेद में तीन वर्ष का उल्लेख करके तीन वर्ष तक कोई भी कदम न उठाने की अनुमति दे रहे हैं। दूसरा विचार यह है कि तीन वर्ष बहुत कम अवधि हो सकती है। यह भी हो सकता है जहाँ तक प्रांतों का संबंध है, जहाँ प्रशासनिक मशीनरी अच्छी तरह स्थापित है और जो बदली तथा संशोधित की जा सकती है ताकि उन्हें पृथक किया जा सके यह अवधि काफी लम्बी हो सकती है। लेकिन निदेशात्मक सिद्धांतों में प्रयुक्त 'राज्य' शब्द केवल प्रांतीय सरकारों को ही नहीं बल्कि भारतीय राज्यों की सरकारों को भी शामिल करता है। यह विवाद का विषय है कि भारतीय राज्यों मे प्रशासन लम्बे समय तक ऐसा नहीं हो सकता जिससे वांछनीय परिणाम प्राप्त किया जा सके। परिणामस्वरूप, तीन वर्ष का अन्तराल, जहाँ तक भारतीय राज्यों का संबंध है, अनदेखा नहीं किया जा सकता। इसलिए यह अनुच्छेद अपने उस उद्देश्य में कामयाब होगा हम सभी ऐसा मानते हैं। यदि अनुच्छेद में राज्य (प्रांत और भारतीय राज्य दोनों ही) को निर्देश देते हुए केवल आदेशात्मक प्रावधान हो कि यह संविधान राज्य की सार्वजनिक सेवाओं में न्यायपालिका को कार्यपालिका से अलग करने का कर्त्तव्य इस इदादे के साथ निर्धारित करता है कि जहाँ सम्भव है ऐसा बिना देरी के तुरंत किया जायेगा, और जहाँ इस सिद्धांत का क्रियान्वयन तुरंत संभव नहीं है तो भी यह एक आवश्यक कर्त्तव्य स्वीकार किया जायेगा और जिसका विलम्बन इस संविधान के सिद्धांतों के तहत नहीं किया जायेगा। इसलिए मैं कहता हूँ कि जिस संशोधन का मैने प्रस्ताव किया है वह इस सदन के सभी दृष्टिकोणों से मेल खाता है और मैं आशा करता हूँ कि सदन इस संशोधन पर अपनी सहमति दे देगा।

प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना (सयुंक्त प्रांत - जनरल) : महोदय, डॉ. अम्बेडकर पहले ही एक संशोधन प्रस्तावित कर चुके हैं, वह है कि उन्होंने नया अनुच्छेद 39-क जोड़ा है। क्या किसी सदस्य को अपने संशोधन को स्वयं संशाधित करने की अनुमति है?

श्रीमान् उपाध्यक्ष : हाँ। मैं आप से सब इस बात पर गौर करने का अनुरोध करता हूँ कि हमें मूल तत्वों के बारे में चर्चा करनी है, न कि तकनीकियों के बारे में।

श्री आर. के. सिधवा (सी.पी. और बेरार - जनरल) : श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, मुझे बहुत खुशी है कि डॉ. अम्बेडकर ने यह संशोधन प्रस्तावित किया है और यह कि इस बाद की अवस्था में भी बेहतर मंत्रणायें और समझ व्याप्त रही–

प्रस्ताव स्वीकार हुआ।

अनुच्छेद 39-अ संविधान में जोड़ दिया गया।

* * * *

*[*] **श्रीमान् मोहम्मद ताहिर (बिहार - मुस्लिम) :** श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, मैं प्रस्ताव करने की प्रार्थना करता हूँ- कि अनुच्छेद 39 के बाद अधोलिखित नये अनुच्छेद को सन्निविष्ट किया जाए और शेष अनुच्छेदों को पुनः संख्या दी जाए।

"40. पूजा स्थलों जैसे - गुरूद्वारों, चर्चों, मंदिरों, मस्जिदों और कब्रिस्तानों तथा शमशान घाटों की सुरक्षा करना तथा इन्हें बचाकर रखना राज्य का कर्त्तव्य होगा।"

* * * *

[#] **माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं संशोधन स्वीकार नहीं करता।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं अब संशोधन को मतदान के लिए रखूँगा।

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 40

[%] **श्रीमान् उपाध्यक्ष** - 1018 नम्बर। डॉ. अम्बेडकर।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर - मैं समझता हूँ श्रीमान् कामथ एक संशोधन प्रस्तावित कर रहे हैं।

श्री एच.वी. कामथ - मैं अपना संशोधन डॉ. अम्बेडकर के संशोधन के बाद प्रस्तावित करूँगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ- "कि विद्यमान अनुच्छेर 40 के स्थान पर, अधोलिखित को प्रतिस्थापित किया जाए-

"40. राज्य

(क) अंतराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को बढ़ावा देगा;

(ख) राष्ट्रों के बीच उचित और सम्माननीय संबंधों को बनाये रखने का प्रयत्न करेगा, और

(ग) संगठित लोगों के एक दूसरे से व्यवहार करने में अंतराष्ट्रीय कानून और संधि कर्त्तव्यों के प्रति सम्मान बनाये रखने के लिए प्रयास करेगा।"

महोदय, यह संशोधन मूल अनुच्छेद 40 को केवल सरल बना देता है और इसे कुछ भागों में, प्रत्येक विचार को अलग करते हुए विभाजित कर देता है ताकि जो कोई भी इस अनुच्छेद को पढ़े उसे स्पष्ट और पूरी तरह समझ मे आ जाए कि अनुच्छेद 40 में वास्तव में क्या कहा गया है? इस नये अनुच्छेद में निहित सिद्धांत इतने सरल हैं कि इन्हें समझाने के लिए लम्बे भाषण की आवश्यकता नहीं है।

---

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 25 नवम्बर, 1948, पृ. 593

[#] वही, पृष्ठ 594

[%] वही, पृष्ठ 595

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : इस अनुच्छेद के प्रति कुछ संशोधन हैं जिन्हें मैं पुकार रहा हूँ। संख्या 74 श्रीमान् सरवटे।

श्री वी.एस. सरवटे (ग्वालियर-इन्दौर-मध्य भारत के संयुक्त राज्य) : श्रीमान् उपाध्यक्ष महोदय, मैं इस संशोधन में एक और संशोधन करने का प्रस्ताव करता हूँ। मेरा संशोधन इस प्रकार है-

"कि अनुच्छेद 40 में संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1018 में, शब्द 'राज्य' के बाद और उपखण्ड (अ) के पहले यह नयी धारा अन्तर्विष्ट की जाए और विद्यमान धारा को उसी के अनुसार पुनः संख्या दी जाए --

(अ) नागरिकों में सच्चाई, न्याय और कर्त्तव्य बोध को प्रोत्साहित करेगा।"

* * * *

[*]**श्री एच.वी. कामथ :** महोदय मैं प्रस्ताव करता हूँ-

"कि अनुच्छेद 40 में संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1018 में , धारा (क) में 'देगा' के स्थान पर 'देने का' प्रतिस्थापित किया जाए, (ख) में 'प्रयत्न करेगा', और शब्दों को निकाल दिया जाए और (ग) में शब्दों 'बनाये रखने के लिए प्रयास करेगा' को 'विकसित करने का, और' शब्दों से प्रतिस्थापित किया जाए।"

श्रीमान् उपाध्यक्ष : प्रश्न यह है कि विद्यमान अनुच्छेद 40 के लिए अधोलिखित को प्रतिस्थापित किया जाए -

ताकि यदि यह संशोधन सदन द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है तो प्रा:प समिति का संशोधन इस प्रकार पढ़ा जाएगा :-

"40, राज्य-

(क) अंतराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को बढ़ावा देने का;

(ख) राष्ट्रों के बीच सम्माननीय और उचित संबंधों को बनाये रखने का;

(ग) संगठित लोगों के एक-दूसरे से व्यवहार करने में अंतर्राष्ट्रीय कानून और संधि कर्त्तव्यों के प्रति सम्मान विकसित करने का; और

(घ) मध्यस्थता द्वारा अंतराष्ट्रीय विवादों के निपटारे को बढ़ावा देने का प्रयास करेगा।"

यह संशोधन डॉ. अम्बेडकर द्वारा लाये गये संशोधन में थोड़ा सा संरचनात्मक परिवर्तन का प्रयत्न करता है ताकि अनुच्छेद 40 में निहित सिद्धांत के निदेशात्मक गुण को स्पष्ट किया जा सके या इस गुण की ओर संकेत किया जा सके ....

* * * *

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 25 नवम्बर, 1948, पृ. 596

#**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** श्रीमान् आयंगर, क्या आप इसे औपचारिक तरीके से प्रस्तावित करेंगे?

श्री एम. अनन्तसयनम आयंगर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर के संशोधन के अंत में, अधोलिखित धारा जोड़ दें-

"और (द) मध्यस्थता द्वारा अंतर्राष्ट्रीय विवादों के निपटारे को बढ़ावा देने का प्रयास करेगा।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

%**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं श्रीमान् कामथ के तीनों संशोधन स्वीकार करता हूँ। मै डॉ. सुब्बाराव को संशोधन स्वीकार करता हूँ और मैं अपने माननीय मित्र श्रीमान् अनन्यासयनम आयंगर द्वारा प्रस्तावित संशोधन स्वीकार करता हूँ। मैं कोई अन्य संशोधन स्वीकार नहीं करता।

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 7

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ-

"कि अनुच्छेद 7 के अंत में अधोलिखित शब्दों को जोड़ा जाए-

'या भारत सरकार के नियंत्रण के अधीन।"

महोदय, यह संशोधन इसलिए आवश्यक समझा गया क्योंकि ऐसे क्षेत्रों के अलावा जो भारत के हिस्से हैं ऐसे भी अन्य क्षेत्र हो सकते हैं जो भारत के हिस्से न हों लेकिन, फिर भी, भारत सरकार के नियंत्रण में हों। अब अंतर्राष्ट्रीय मसलों में ऐसे मामले सामने आ रहे हैं जहाँ क्षेत्र, अधिदेश या फिर न्यासिता के तहत प्रशासन के उद्देश्य हेतु दूसरे देशों को सौंप दिये जाते हैं। मेरे विचार से जहाँ तक भारत के नागरिकों और अधिदेशित या न्यासित क्षेत्रों के निवासियों के मूलाधिकारों का संबंध है यह वांछनीय है कि उनमें भेदभाव नहीं होना चाहिए।

इसलिए यह वांछनीय है कि यह संशोधन किया जाए ताकि मूलाधिकारों का सिद्धांत इन क्षेत्रों तक भी बढ़ाया जा सके।

* * * *

सी.ए.डी., अंक VII, 25 नवम्बर, 1948, पृ. 595-605

% सी.ए.डी., अंक VII, 25 नवम्बर, 1948, पृ. 604

* वही, पृ. 607

***श्रीमान् उपाध्यक्ष :** मैं डॉ. अम्बेडकर से निवेदन करता हूँ कि वह हमें श्रीमान् अली बेग द्वारा उठायी गयी बातों से अवगत करायें। हम लोग अनजान हैं और हम उन्हें सुनना चाहेंगे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान् उपाध्यक्ष, मुझे अवश्य स्वीकार कर लेना चाहिए कि, यद्यपि मैंने अपने मित्र के भाषण पर ध्यान दिया था जिन्होंने यह संशोधन प्रस्तावित किया तथापि मैं यह समझ नहीं पाया कि वास्तव मं वह क्ष जानना चाहते थे? यदि वह अपने संशोधन के द्वारा पूरा का पूरा अनुच्छेद 7 निकालना चाहते हैं तो मैं बड़ी आसानी से उन्हें यह स्पष्ट कर सकता हूँ कि इस अनुच्छेद का संविधान में बने रहना क्यों आवश्यक है।

मूलाधिकारों के दो उद्देश्य हैं। पहला, प्रत्येक नागरिक को इन अधिकारों पर दावा करने की स्थिति में अवश्य होना चाहिए। दूसरे, ये प्रत्येक प्राधिकारी पर बाध्यकर होने चाहिए– अब मैं यह स्पष्ट करूँगा कि "प्राधिकारी" शब्द का क्या अर्थ है? –प्रत्येक ऐसा प्राधिकारी जिसके पास या तो कानून बनाने की शक्ति है या फिर विवेक का प्रयोग करने की शक्ति। इसलिए यह बिल्कुल स्पष्ट है कि यदि मूलाधिकारों को स्पष्ट रूप से बने रहना है तो उन्हें न केवल केन्द्र सरकार पर बाध्यकर होना चाहिए, न केवल प्रांतीय सरकार पर बाध्यकर होना चाहिए उन्हें न केवल भारतीय राज्यों में स्थापित सरकार पर बाध्याकरी होना चाहिए बल्कि उन्हें स्थानीय जिला बोर्ड, नगरपालिकाओं, ग्राम पंचायतों और तालुक बोर्डों, वास्तव में, ऐसे प्रत्येक प्राधिकारी जिसे कानून द्वारा उत्पन्न किया गया है और जिसे कानून बनाने, नियम बनाने, या उपकानून बनाने की कोई शक्ति प्राप्त है, पर भी बाध्यकर होना चाहिए।

यदि यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाता है – और मैं नही समझता कि कोई सदस्य जो मूलाधिकारों की परवाह करता है, वह कानून द्वारा उत्पन्न किए गये प्रत्येक प्राधिकारी पर इस प्रकार के सर्वसार्विक कर्त्तव्य को निर्धारित करने पर आपत्ति कर सकता है– तब हमें अपना इरादा स्पष्ट करने के लिए क्या करना है? ऐसा करने के दो तरीके हैं। एक तरीका संयुक्त वाक्यांश जैसे– "दि स्टेट" का प्रयोग करना है जैसा हमने अनुच्छेद 7 में किया है; या "केन्द्र सरकार, प्रांत सरकार, राज्य सरकार, नगरपालिका, स्थानीय बोर्ड या कोई अन्य प्राधिकारी जैसी वाक्या–रचना को बार–बार दोहराते रह जाएं। हर बार इस वाक्य–रचना को दोहराना मुझे न केवल सबसे अधिक बोझिल लगता है बल्कि मूर्खतापूर्ण भी लगता है। सबसे बुद्धिमानी वाली बात इस संयुक्त वाक्यांश का प्रयोग करना और कम से कम शब्दों का प्रयोग करना होगा। मैं आशा करता हूँ कि मेरे मित्र अब समझ जाएंगे कि हमने इसलिए 'राज्य' शब्द का इस अनुच्छेद में प्रयोग किया है और इसलिए इस अनुच्छेद को संविधान में अवश्य बने रहना है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं अब इस संशोधन को मतदान के लिए रखूँगा। सर्वप्रथम हमारे पास श्रीमान् नज़ीरुद्दीन का संशोधन नं. 21 है जो संशोधन नं. 246 में एक संशोधन है।

---

* सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 25 नवम्बर, 1948,, पृ. 610

प्रस्ताव है–

"कि संशोधनों की सूची के संशोधन नं. 246 के संदर्भ में, अनुच्छेद 7 में शब्द "और सभी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी भारत के क्षेत्र के अन्दर या भारत सरकार के नियंत्रण में" निकाल दिये जाएं।"

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : अगला संशोधन डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित संशोधन सं. 246 है। प्रस्ताव है– कि अधोलिखित शब्द अनुच्छेद 7 के अन्त में जोड़े जाएं–

"या भारत सरकार के नियंत्रण के अधीन।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

[दो और संशोधन अस्वीकृत हुए।]

अनुच्छेद 7, यथासंशोधित किया गया, संविधान में जोड़ दिया गया।

* * * *

अनुच्छेद 8

*[*]**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** हमारे पास पंद्रह मिनट और हैं। हम प्रारुप संविधान के अनुच्छेद 8 पर चर्चा जारी रख सकते हैं।

पंडित लक्ष्मीकांत मैगा (पश्चिम बंगाल - जनरल) : हम अब स्थगित कर सकते हैं।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : हमारा समय कीमती है। हमें इस को बर्बाद नहीं करना चाहिए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 8 की धारा (3) के लिए, अधोलिखित को प्रतिस्थापित किया जाए --

'3, इस अनुच्छेद में–

(क) अभिव्यक्ति "कानून" में ऐसा कोई भी अध्यादेश, आदेश, उपकानून, नियम, नियमन, अधिसूचना, रिवाज या लोकाचार शामिल है जो भारत के क्षेत्र या इसके किसी भाग में कानून की शक्ति रखता है।

(ख) अभिव्यक्ति "लागू कानून" में वे कानून शामिल हैं जो भारत के क्षेत्र में किसी विधायिका या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा इस संविधान के शुरू होने से पहले पारित किए या बनाये गये हैं और जो पहले समाप्त नहीं किए गये भले ही ऐसा कोई कानून या उसका कोई हिस्सा तब कतई अथवा विशेष क्षेत्रों में अमल में न रहा हो।"

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 26 नवम्बर, 1948, पृ. 640

महोदय, इस संशोधन को लाने का कारण यह है– इस पर ध्यान दिया जायेगा कि अनुच्छेद 8 में दो अभिव्यक्तियां हैं। अनुच्छेद 8 की उपधारा (1) में वाक्यांश 'लागू कानून' आता है जबकि उपधारा (2) में शब्द 'कोई कानून' आते हैं। मूल प्रारुप, जैसा इस सदन मं प्रस्तुत किया गया, का उद्देश्य उपधारा (3) में शब्द 'कानून' की परिभाषा देना था। शब्द 'लागू कानून' परिभाषित नहीं था। यह संशोधन उस कमी को ठीक करने का प्रयत्न करता है। हमने उपधारा (3) को दो भागों (क) और (ख) में विभक्त कर दिया है। जैसा मूल उपधारा (3) में निहित है। (क) में 'कानून' शब्द की परिभाषा समाहित है और (ख) में अभिव्यक्ति 'लागू कानून' जो अनुच्छेद 8 की उपधारा (1) में आती है, को परिभाषित करता है। मैं नहीं समझता कि इससे अधिक स्पष्टीकरण की आवश्यकता है।

*__श्री नज़ीरुद्दीन अहमद :__ महोदय, मैं अपना संशोधन प्रस्तावित करने के पूर्व यह बताने की प्रार्थना करता हूँ कि, क्योंकि एक विस्तृत संशोधन माननीय डॉ. अम्बेडकर के द्वारा प्रस्तावित किया गया है, मेरे विचार में प्रस्तुत संशोधन को उस संशोधन पर लागू करने के लिए उपयुक्त ढंग से अनुकूल बना लेना चाहिए। मैं इसका केवल दूसरा भाग प्रस्तावित करना चाहता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : सर्वप्रथम, यह पता लगाएं कि वे इसे स्वीकार करते हैं या नहीं।

श्री नज़ीरूद्दीन अहमद : जब तक मैं मामले पर जिरह नहीं कर लेता, वे स्वीकार नहीं करेंगे। महोदय, मेरे विचार से, यह संशोधन स्वीकार करना ही पड़ेगा।

मैं प्रस्ताव रखने की प्रार्थना करता हूँ –

"कि डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित संशोधन नं. 260 में, एक शब्द "भारत के क्षेत्र या इसके किसी हिस्से में कानून की शक्ति लिए हुए रिवाज या लोकाचार" निकाल दिये जाएं।"

श्रीमान् उपाध्यक्ष : आप उस संशोधन में बिना किसी सूचना के कैसे जोड़ सकते हैं? यह नियम के विरुद्ध है। आप केवल सुझाव दे सकते हैं।

श्री नज़ीरुद्दीन अहमद : मैने मूल अनुच्छेद में एक संशोधन की पहले ही सूचना दे दी है। डॉ. अम्बेडकर के विचार में, परिणामी परिवर्तन होने चाहिए।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : तब ठीक है।

* * * *

#**श्री नज़ीरुद्दीन अहमद :** मुझे व्यवधान पर खुशी है। इससे मेरी कठिनाइयां बिल्कुल भी दूर नहीं हुई हैं। क्या इसे कहने का तात्पर्य यह है कि राज्य रिवाज या लोकाचार का निर्माण करता है? आप को अभी भी कठिनाई है इसका सामना करने में कि राज्य को रिवाज और लोकाचार को शामिल करते हुए कानून बनाने होंगे।

---

* सी.ए.डी., अंक VII, 26 नवम्बर, 1948, पृ. 641

सी.ए.डी., अंक VII, 26 नवम्बर, 1948, पृ. 642

माननीय श्री बी.जी. खेर : बेशक इसका अर्थ है 'जब भी आवश्यक हो'। कानून में यह हमेशा 'समझा हुआ' होता है। मुझे व्यवधान डालने के लिए खेद है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : सम्भवतया वह अपना भाषण जारी रखना आवश्यक नहीं समझेंगे यदि मैं उन्हें इस सच्चाई का हवाला दूँ कि 3(क) में अभिव्यक्ति 'कानून' को हवाला कानून 8(1) में दिया गया है।

श्री नज़ीरुद्दीन अहमद : मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा किए गए समुचित व्यवधान का आभारी हूँ कि शब्दों 'रिवाज और लोकाचार' में कानून की शक्ति है और आगे ......

* * * *

#**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** क्या हम अनुच्छेद 8 पर चर्चा पुनः शुरू करें? कोई माननीय सदस्य इस पर बोलना चाहता है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) : श्रीमान् उपाध्यक्ष, श्रीमान् नज़ीरुद्दीन का संशोधन कुछ कठिनाई पैदा कर रहा है जिसे दूर करना आवश्यक है। उनके संशोधन का इरादा स्थिति की निरर्थकता को दूर करना था जो प्रारुप के वर्तमान स्वरूप द्वारा पैदा की गयी है। उनके तर्क का, यदि मैं सही समझता हूँ, यह अर्थ है कि कानून की परिभाषा में हमने रिवाज को भी शामिल किया है, और रिवाज को शामिल करने के बाद, हम यह भी बोलते हैं कि राज्य को कोई कानून बनाने का अधिकार नहीं है उनके अनुसार, इसका अर्थ है कि राज्य के पास रिवाज के निर्माण की शक्ति होगी, क्योंकि हमारी परिभाषा के अनुसार कानून में रिवाज शामिल है। मुझे सोचना चाहिए था कि वह रचना सम्भव नहीं थी, क्योंकि इसका सीधा सा कारण है कि अनुच्छेद 8 की उपधारा (3) केवल अनुच्छेद 8 की उपधारा (2) पर ही नहीं बल्कि पूरे अनुच्छेद 8 पर लागू होती है। अतएव, केवल जो एक रचना सम्भव है वह 'कानून' को पृथक रूप में पढ़ना है ताकि जहाँ तक अनुच्छेद 8 की उपधारा (1) का संबंध है 'कानून' में रिवाज भी शामिल होगा जबकि जहाँ तक उपधारा (2) का संबंध है 'कानून' में रिवाज़ शामिल नहीं होगा। मेरे हिसाब से यह उचित पठन होगा और यदि यह इस तरह पढ़ा जाता तो जिस निरर्थकता की स्थिति का मेरे मित्र ने जिक्र किया वह न उठी होती।

लेकिन, मैं यह बिल्कुल समझ सकता हूँ कि एक व्यक्ति जिसे कानून की व्याख्या के नियमों के बारे में सुशिक्षित नहीं किया गया है वह इस तरह की रचना कर सकता है जैसे मेरे मित्र नज़ीरुद्दीन अहमद ने करने की कोशिश की है और इसलिए इस कठिनाई से बचने के लिए, आपकी अनुमति से, मैं सुझाव दूँगा कि संशोधन जो मैंने अनुच्छेद 8 की उपधारा (3) में किया है, में मुझे शब्दों "इस अनुच्छेद "मैं" के बाद अधोलिखित शब्दों को जोड़ने की अनुमति दी जाए। शब्द जो मैं जोड़ना चाहूँगा इस प्रकार है–

सी.ए.डी., अंक VII, 29 नवम्बर, 1948, पृ. 644-45

"जब तक कि संदर्भ को अन्य प्रकार की अभिव्यक्ति की जरूरत नहीं पड़ती" ताकि अनुच्छेद इस प्रकार पढ़ा जाएगा–

'इस अनुच्छेद में जब तक कि संदर्भ को अन्य प्रकार की अभिव्यक्ति की जरूरत नहीं पड़ती–

(क) अभिव्यक्ति 'कानून' में ऐसा कोई भी अध्यादेश, आदेश, उपकानून, नियम, नियमन, अधिसूचना, रिवाज या लोकाचार शामिल है जो भारत के क्षेत्र या इसके किसी भाग में कानून की शक्ति रखता है।

(ख) अभिव्यक्ति "लागू कानून" में वे कानून शामिल है जो भारत के क्षेत्र में किसी विधायिका या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा इस संविधान के शुरू होने से पहले पारित किए या बनाये गये हैं और जो पहले समाप्त नहीं किए गये भले ही ऐसा कोई कानून या उसका कोई हिस्सा तब कतई अथवा विशेष क्षेत्रों में अमल में न रहा हो।"

मुझे पूरा पढ़ने की आवश्यकता नहीं है।

इसलिए, यदि अनच्छेद 8(1) में संदर्भ को 'कानून' शब्द में रिवाज को भी शामिल करके प्रयोग करने की जरूरत है, तो ऐसी रचना सम्भव होगी। अनुच्छेद 8 की उपधारा (2) के संदर्भ में 'कानून' शब्द में रिवाज शामिल करके पढ़ना आवश्यक नहीं है और यह सम्भव भी नहीं होगा। मेरे विचार से अब वह कठिनाई दूर हो जाएगी जिसकी तरफ मेरे मित्र ने अपने संशोधन में संकेत किया है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं, एक के बाद एक, संशोधनों को मतदान के लिए रखूँगा। मैं संशोधनों की संख्याएँ पुरानी सूची से पढ़ रहा हूँ .....

मैं संशोधन नं. 252 जो मजबूब अली बेग के नाम में है, मतदान के लिए रखता हूँ। प्रश्न है –

"कि अनुच्छेद 8 की धारा (2) में प्रतिबंध को निकाल दिया जाए ।"

संशोधन अपना लिया गया।

[संशोधन संख्या 259 जो श्री लोकनाथ मिश्रा के नाम में था, अस्वीकृत हुआ।]

* * * *

[*]**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** तब मैं संशोधन सं. 260 जैसा डॉ. अम्बेडकर द्वारा संशाधित किया गया, को रखता हूँ। प्रश्न है–

"कि अनुच्छेद 8 की धारा (3) के लिए, अधोलिखित को प्रतिस्थापित किया जाए –

'(3) इस अनुच्छेद में जब तक कि संदर्भ को अन्य प्रकार की अभिव्यक्ति की जरूरत नहीं पड़ती–

---

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 29 नवम्बर, 1948, पृ. 645

(क) अभिव्यक्ति 'कानून' में ऐसा कोई भी अध्यादेश, आदेश, उपकानून, नियम, नियमन, अधिसूचना, रिवाज या लोकाचार शामिल है जो भारत के क्षेत्र या इसके किसी भाग में कानून की शक्ति रखता है।

(ख) अभिव्यक्ति "लागू कानून" में वे कानून शामिल हैं जो भारत के क्षेत्र में किसी विधायिका या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा इस संविधान के शुरू होने से पहले पारित किए या बनाये गये हैं और जो पहले समाप्त नहीं किए गये भले ही ऐसा कोई कानून या उसका कोई हिस्सा तब कतई अथवा विशेष क्षेत्रों में अमल में न रहा हो।"

संशोधन स्वीकृत हुआ। [दो और संशोधन अस्वीकृत हुए।]

अनुच्छेद 8, यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 8 (क)

[*] **श्रीमान् उपाध्यक्ष :** नयी सूची में अगला संशोधन, नं. 273, श्रीमान् लोकनाथ मिश्रा के नाम में है।

श्री लोकनाथ मिश्रा (उड़ीसा - जनरल) : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ-

"कि अनुच्छेद 8 के बाद, अधोलिखित नया अनुच्छेद 8(अ) अन्तर्विष्ट किया जाए-

'चुनाव और मतदान का अधिकार'

8-अ. (1) वह प्रत्येक नागरिक जिसकी उम्र 21 वर्ष हो चुकी है और जिसे संविधान के तहत या केन्द्रीय संसद या राज्य विधायिका द्वारा बनाये गये किसी कानून के तहत अनिवासी, मानसिक विक्षिप्तता, अपराध या भ्रष्ट या गैर-कानूनी काम में से किसी एक आधार पर अयोग्य करार नहीं दिया गया है, इस प्रकार के चुनावों में मतदाता के तौर पर पंजीकृत किए जाने का अधिकारी होगा।

(2) चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर होंगे जैसा कि पिछली उपधारा में उल्लेख किया गया है लेकिन ये अप्रत्यक्ष हो सकते हैं अर्थात् पोरा और ग्राम पंचायतों या ग्रामों का समूह, एक कस्बा या इसका एक भाग जिसमें मतदाताओं की विशेष संख्या है या स्थानीय सरकार की एक स्वायत इकाई को अपने प्राथमिक सदस्य चुनने की आवश्यकता होगी, जो बाद में, केन्द्रीय संसद तथा राज्य विधानसभा के सदस्यों को चुनेंगे।

(3) प्राथमिक सदस्यों को उसके द्वारा चुने गये केन्द्रीय संसद तथा राज्य विधानसभा के सदस्यों को वापस बुलाने का अधिकार होगा।

---

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 29 नवम्बर, 1948, पृ. 646

(4) एक मतदाता को चुनाव में खड़ा होने का अधिकार होगा और चुनाव का खर्च राज्य द्वारा वहन किया जाएगा।

(5) प्रत्येक सदस्य लोगों द्वारा चुना जाएगा और यदि उसका कोई प्रतिद्वंद्वी नहीं भी है तो भी वह सदस्य तब तक नहीं चुना जाएगा जब तक उसे कुल मतों के एक-तिहाई मत नहीं मिलें।"

*__श्री अल्गूराम शास्त्री (संयुक्त प्रांत - जनरल) :__ #श्रीमान् उपाध्यक्ष, मैं अपने मित्र द्वारा प्रस्तावित संशोधन का विरोध करता हूँ।

ऐसा करने का मेरा पहला कारण यह है की यहाँ उठाये गये विषय से इसका कोई संबंध नहीं है। चुनाव से संबंधित मामलों पर विचार प्रारुप संविधान में किसी अन्य स्थान पर किया गया है जहाँ यह कहा गया है कि किस प्रकार विधायिका निर्मित की जाएगी, विधायिकाओं के सदस्य कौन होंगे, उनके अधिकार क्या होंगे, उनके चुनाव की क्या प्रक्रिया होगी? इस प्रकृति के संशोधन इस प्रकार के विषय से संबंधित अनुच्छेद में ही प्रस्तावित किए जा सकते हैं। यह संशोधन मूलाधिकारों के पूर्णतया अप्रासंगिक है ..... इस संशोधन को तुरंत अस्वीकार कर दिया जाना चाहिए और इसे कभी स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं इस संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता।

लोकनाथ मिश्रा का प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 9

♦**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** संशोधन नम्बर 313 की अनुमति नहीं है क्योंकि यह शाब्दिक है। संशोधन संख्या 314। डॉ. अम्बेडकर।

श्री एच.वी. कामथ : श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, क्या मैं पूछ सकता हूँ कि क्या यह केवल एक शाब्दिक या अधिक से अधिक औपचारिक संशोधन है जिसकी अनुमति नहीं दी जानी चाहिए? यह केवल शब्दों 'राज्य के राजस्व' के लिए शब्द 'राज्य कोष' प्रतिस्थापित करने का प्रयत्न करता है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं इस पर ध्यान दूँगा। डॉ. अम्बेडकर, क्या कृपया आप इस पर विचार करेंगे?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ-

"कि अनुच्छेद 9 की धारा (1) के दूसरे पैरा में उपधारा (ब) में, शब्दों 'राज्य के राजस्व' को शब्द 'राज्य कोष' से क्यों प्रतिस्थापित किया जाए। प्रारुप समिति के यह

* सी.ए.डी., अंक VII, 29 नवम्बर, 1948, पृ. 646

हिन्दुस्तानी भाषण का अनुवाद।

♦ सी.ए.डी., अंक VII, 29 नवम्बर, 1948, पृ. 653-54

महसूस करने का कारण कि शब्दों 'राज्य के राजस्व' को शब्द 'राज्य कोष' से क्यों प्रतिस्थापित किया जाए, आसान है। प्रशासनिक शब्दावली जो भारत में काफी लम्बे समय से अमल में आती रही है हम 'प्रांत सरकार के राजस्व और केन्द्र सरकार के राजस्व' बोलने के आदी हो गये हैं। जब हम स्थानीय बोर्डों और जिला बोर्डों की बात करते हैं तो हम सामान्यता 'स्थानीय कोष' का प्रयोग करते हैं, न कि राजस्व का। यही शब्दावली पूरे भारत के सभी प्रांतों में अमल में रही है। अब, माननीय सदस्य स्मरण करेंगे कि इस भाग में हम शब्द 'राज्य' का प्रयोग केवल केन्द्र सरकार और प्रांत सरकार और भारतीय राज्यों की सरकार को शामिल करने के लिए ही नहीं बल्कि स्थानीय प्राधिकारियों, जैसे कि स्थानीय जिला बोर्ड या स्थानीय तालुका बोर्ड या पत्तन-प्रबंध प्राधिकारियों को शामिल करने के लिए भी कर रहे हैं। जहाँ तक उनका संबंध है, उचित शब्द 'कोष' है। इसलिए यह इस सच्चाई के मद्देनजर वांछनीय है कि हम इन मूलाधिकारों को केवल केन्द्र सरकार और प्रांतीय सरकारों के लिए ही बाध्यकर नहीं बना रहे बल्कि स्थानीय जिला बोर्डों तथा स्थानीय तालुका बोर्डों के लिए भी बना रहे हैं और ऐसी व्यापक वाक्य रचना का प्रयोग कर रहे हैं जो केवल केन्द्र सरकार पर ही लागू नहीं होगी बल्कि ऐसे स्थानीय बोर्डों पर लागू होगी जो 'राज्य' शब्द की परिभाषा में शामिल हैं। मैं आशा करता हूँ कि मेरे मित्र श्रीमान् कामथ अब समझ जाएंगे कि जिस संशोधन का मैने प्रस्ताव किया है वह केवल शाब्दिक नहीं है, बल्कि इसमें कुछ सार है।

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ।

* * * *

[*](एक या दो माननीय सदस्य बोलने के लिए उठे)

श्रीमान् उपाध्यक्ष : यदि मैं माननीय सदस्यों की इच्छायें पूरी कर पाने में असमर्थ होता हूँ तो आप मुझे अवश्य ही माफ कर देंगे। मैं सदन का पूरा सहयोग चाहता हूँ और मैं विशेष तौर पर अभी सहयोग माँगता हूँ। डॉ. अम्बेडकर।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर – महोदय, प्रस्तावित किए गये संशोधनों पर विचार करते हूए, मैं श्रीमान् राउफ द्वारा प्रस्तावित संशोधन सं. 280 को स्वीकार करता हूँ।

श्री श्यामानन्द सहाय (बिहार – जनरल) : क्या माननीय सदस्य उन संशोधनों के बारे में भी अपने मत नहीं दे सकता जिन्हें प्रस्तावित नहीं किया गया है।

श्री श्यामानन्द सहाय – यह संबंधित सदस्य की गलती नहीं थी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं कुछ नहीं कर सकता। मैं श्रीमान् राउफ के संशोधन में शब्द 'जन्म स्थान' जोड़ते हुए इसे स्वीकार करता हूँ। मैं संशोधन नं. 276 में श्रीमान् सुब्रहमण्यम का संशोधन (सूची I में सं. 37) अनुच्छेद 9 की धारा (1) से शब्द 'विशेषकर' निकालते हुए स्वीकार करता हूँ।

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 29 नवम्बर, 1948, पृ. 660-64

श्रीमान् गुप्तनाथ सिंह द्वारा प्रस्तावित संशोधन सं. 303 के संबंध में, मैं इसे स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ बशर्ते कि वे अपने संशोधन में से शब्द "कुण्डों" निकालने के लिए तैयार हों।

श्री गुप्तनाथ सिंह : महोदय, मैं यह पहले ही कर चुका हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : तब बहुत से संशोधनों में से जिन्हें मैं स्वीकार नहीं कर सकता उनके लिए मुझे खेद है। मेरे विचार से उनमें से दो के बारे मे मेरे लिए कुछ कहना आवश्यक है। एक श्रीमान् ताहिर द्वारा प्रस्तावित संशोधन है जो यह माँग करता है कि अनुच्छेद 9 में निहित प्रावधानों का किसी भी प्रकार से उल्लंघन का अपराध कानून द्वारा दंडनीय बना दिया जाना चाहिए। मेरे मित्र श्रीमान् ताहिर, जिन्होंने यह संशोधन प्रस्तावित किया, ने विशेषकर अछूतों की स्थिति का हवाला दिया और कहा कि इन कार्यों के संबंध में जो अछूतों को जो आम जनता द्वारा उपयोग की जाने वाली सुविधाओं का समान रूप से उपयोग करने से रोकते हैं, हम अपने उद्देश्य की पूर्ति में तब तक सफल नहीं हो सकते जब तक इन कृत्यों को अपराध नहीं ठहराया जाता। इसमें संदेह नहीं है कि उनके और इस सदन के अन्य सदस्यों के बीच इस मामले में कोई मतभेद नहीं है क्योंकि हम सब चाहते हैं कि दूसरी जातियों के सदस्यों की भांति किसी के द्वारा बाधा डाले बिना इस अभागे वर्ग को भी इन सुविधाओं के उपयोग का अधिकार होना चाहिए। लेकिन वे देखेंगे कि यह उद्देश्य अनुच्छेद 11 में अंतर्विष्ट प्रावधानों द्वारा बिल्कुल पूरा होता है जो विशेषतया अस्पृश्यता से संबंधित है- इसे अपराध घोषित किए जाने के लिए संसद या राज्य पर छोड़ने के बजाय यह अनुच्छेद स्वयं घोषणा करता है कि उनके अधिकारों में इस तरह का कोई भी हस्ताक्षेप कानून के तहत दंडनीय अपराध माना जायेगा। यदि उनका विचार यह है कि सामान्यतया उन कृत्यों, जो अनुच्छेद 9 में अंतर्विष्ट प्रावधानों में हस्तक्षेप करते हैं, से संबंधित एक प्रावधान संविधान में होना चाहिए तो मैं उनका ध्यान संविधान के अनुच्छेद 27 की ओर आकृष्ट करना चाहूँगा जो संसद के लिए इस प्रकार के हस्तक्षेपों को कानून के तहत अपराध घोषित करने के लिए कानून बनाने का कर्त्तव्य निर्धारित करता है। इस प्रकार की शक्ति संसद को क्यों दी गई है इसका कारण है क्योंकि यह महसूस किया गया कि कोई भी अपराध जो मूलाधिकारों से संबंधित है वह पूरे भारत के क्षेत्र में समान होना चाहिए और ऐसी स्थिति तब नहीं होती जब यह शक्ति विभिन्न राज्यों और प्रांतों को उनकी इच्छानुसार नियमित किए जाने के लिए दे दी गयी होती। इसलिए मेरा कहना यह है कि जहाँ तक इस बात का संबंध है संविधान में पर्याप्त प्रावधान है और इससे अधिक की वास्तव में आवश्यकता नहीं है।

प्रो. के.टी. शाह द्वारा प्रस्तावित संशोधन सं. 323 के संबंध में, जिसका उद्देश्य स्त्रियों और बच्चों के साथ 'अनुसूचित जाति' और 'अनुसूचित जनजाति' को जोड़ना है, मुझे डर है कि इसका ठीक प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

उद्देश्य जो हम सब के मस्तिष्क में है वह है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को आम जनता से अलग नहीं करना चाहिए।

उदाहरणार्थ, मेरे विचार से हममें से कोई भी नहीं चाहेगा कि अनुसूचित जाति के लिए एक आम विद्यालय खोला जाए जबकि गाँव में पूरे समाज के लिए एक आम विद्यालय खुला है। यदि ये शब्द जोड़े जाते हैं तो इससे राज्य को यह कहने का अवसर मिल जाएगा, "हम अनुसूचित जातियों के लिए विशेष प्रावधान कर रहे हैं।" मेरे विचार से इस अनुच्छेद के तहत शरण लेते हुए वे निश्चित रूप से ऐसा कर सकते हैं यदि इस अनुच्छेद को इस तरीके से संशोधित किया जाता है जैसा प्रोफेसर चाहते हैं। इसलिए मेरे विचार से यह एक वांछनीय संशोधन नहीं है।

इसके बाद, मैं अपने मित्र श्रीमान् नागप्पा के बारे में कहता हूँ। उन्होंने मुझसे इस अनुच्छेद में प्रयुक्त कुछ शब्दों को स्पष्ट करने की माँग की है। उनका पहला प्रश्न था कि क्या "दुकान" मे लौंड्री और हजामती सैलून भी शामिल हैं? जहाँ तक मेरा संबंध है मुझे तनिक भी संदेह नहीं है कि शब्द में लौंड्री और हजामत का स्थान शामिल है। 'दुकान' शब्द को सबसे सामान्य शब्दों में परिभाषित करने के लिए जो कहने की सोच सकता है वह यह है कि 'दुकान' एक ऐसा स्थान है जहाँ मालिक अपनी सेवा पेश करने के लिए तैयार है और कोई भी जो उसकी सेवा चाहता है ले सकता है । इसलिए ' लौंड्रीमैन' एक ऐसा व्यक्ति होगा जो अपनी दुकान में जनता की विशेष ढंग से सेवा करने के लिए बैठा है अर्थात् ग्राहकों के मैले कपड़े धोने के लिए। इसी प्रकार हजामती सैलून का मालिक किसी भी ऐसे व्यक्ति को अपनी सेवा पेश करने के लिए वहाँ बैठा होगा जो सैलून मे प्रवेश करता है।

माननीय श्री बी.जी. खेर (बम्बई - जनरल) : क्या इसमें डॉक्टर और वकील के कार्यालय भी शामिल हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : निश्चित रूप से इसमें ऐसा कोई भी शामिल नहीं होगा जो अपनी सेवाओं को पेश करता है। मैं व्यापक अर्थ में इसका प्रयोग कर रहा हूँ। इसलिए मैं यह बताना चाहूँगा कि यहाँ प्रयुक्त शब्द 'दुकान' सीमित अर्थ में प्रयुक्त नहीं किया गया है। यह सेवाओं की मांग, जब सेवा की शर्तो पर सहमति हो चुकी है, के व्यापक अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

दूसरा प्रश्न जो मेरे सामने रखा गया वह था कि क्या 'सार्वजनिक शरण का स्थान' में कब्रिस्तान भी शामिल है? मुझे सोच लेना चाहिए था कि बहुत कम लोगों की कब्रिस्तानों में रूचि होगी क्योंकि कोई भी यह जानने की परवाह नहीं करेगा कि मृत्यु के पश्चात् उसका क्या होता है? लेकिन, चूँकि मेरे मित्र श्रीमान् नागप्पा की इस बात मे रुचि है इसलिए मुझे कहना चाहिए कि मुझे कोई संदेह नहीं है कि एक सार्वजनिक शरण के स्थान में ऐसा कब्रिस्तान भी शामिल होगा जो पूर्णतया या अंशतः सार्वजनिक कोष के द्वारा कायम है। जहाँ ऐसे कब्रिस्तान नहीं हैं जो नगरपालिका, स्थानीय बोर्ड या तालुका

बोर्ड या प्रांत सरकार या ग्राम पंचायत द्वारा चलाये जा रहे हैं, किसी का, निस्संदेह, कोई अधिकार नहीं है क्योंकि वह कोई सार्वजनिक स्थल नहीं है जिसके बारे में प्रवेश का कोई दावा कर सके। लेकिन यदि कब्रिस्तान, राज्य कोष की मदद से राज्य द्वारा चलाया जा रहा है तो स्पष्टतया प्रत्येक व्यक्ति को उसमें अपना शरीर दफनाने का अधिकार है।

इसके बाद मेरे मित्र ने मुझसे पूछा कि क्या जलाशयों में तालाब भी शामिल हैं? जवाब स्पष्टतया हाँ में है। एक जलाशय एक तालाब से बड़ा होता है इसलिए यह उसमें आवश्यक रूप से शामिल है।

अन्य प्रश्न जो उन्होंने मुझसे पूछा, वह था कि क्या नदियों, नहरें, धारायें, और जल संशाधन अछूतों के लिए खुले होंगे। निस्संदेह कुआँ, नदी, धारायें और नहरें अनुच्छेद 9 के तहत आयेंगे लेकिन ये अनुच्छेद 11 के प्रावधानों द्वारा निश्चित रूप से शामिल कर लिए जायेंगे जो अछूतों के दूसरे जातियों के सदस्यों के साथ समान व्यवहार करने में उनके अधिकारों में हस्तक्षेप को अपराध मानता है। इसलिए मेरे मित्र नागप्पा के लिए मेरा जवाब यह है कि उन्हें नदियों, धाराओं, नहरों आदि के प्रयोग के संबंध में किसी प्रकार का भय पालने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि संसद के लिए अनुच्छेद 1 के तहत कानून बनाकर ऐसी असंगति यदि है, को दूर करना पूर्णतया संभव है।

श्री एस. नागप्पा : पानी के रास्तों के बारे में?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं इस चरण में इस अनुच्छेद में कुछ नहीं जोड़ सकता। लेकिन मुझे कोई संदेह नहीं है कि नदियों और नहरों के संबंध में कोई भी आवश्यक और पर्याप्त कार्यवाही अनुच्छेद 11 के तहत की जा सकती है।

श्री आर.के. सिधवा : 'सार्वजनिक' शब्द की व्याख्या के बारे में?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरे मित्र श्रीमान् सिधवा ने भारतीय दंड सहिता मे से 'सार्वजनिक' शब्द के बारे में एक परिभाषा पढ़ी थी और कहा था कि उसमें शब्द 'सार्वजनिक' बहुत सीमित अर्थ मे प्रयुक्त हुआ है जैसे कि यह एक वर्ग के लिए हो। मैं उनका ध्यान इस सच्चाई की ओर आकृष्ट करना चाहूँगा कि यहाँ शब्द 'सार्वजनिक' विशेष अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। एक स्थान सार्वजनिक शरण का स्थान है, यदि यह पूर्णतया या अंशतया राज्य कोष द्वारा चलाया जा रहा है। इसका भारतीय दंड संहिता में दी हुई परिभाषा से कुछ भी संबंध नहीं है।

श्री महावीर त्यागी (संयुक्त प्रांत - जनरल) : क्या मैं जान सकता हूँ कि उन संशोधनों का क्या होगा जिन्हें आपने शाब्दिक घोषित कर दिया है? उनमें से कुछ के बारे में, मुझे डर है, कि उनका संबंधित अनुच्छेद या धारा के अर्थ में वास्तव में सारपूर्ण परिवर्तन करने का उद्देश्य है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : इस मामले में अकेला मैं ही जज हूँ। आपने मुझे विवेक की शक्ति प्रदान कर रखी है और मैं इसका अपने तरीके से प्रयोग करने का प्रस्ताव करता हूँ।

श्री महावीर त्यागी : मैं जानकारी चाहता हूँ। मैं आपके निर्णय या अधिकार के बारे में विवाद नहीं कर रहा। मैं केवल यह जानना चाहता हूँ कि उन संशोधनों के संबंध में सदन की संवेदनाओं को स्थान दिया जायेगा या नहीं जो निकाल दिये गये हैं अथवा कि क्या इन संशोधनों पर प्रारुप समिति या कोई अन्य निकाय विचार करेगा? मेरा सुझाव यह है कि आप सदन का भला करेंगे यदि आप कृपया एक उपसमिति नियुक्त कर दें जो इन शाब्दिक संशोधनों का अध्ययन करेगी और पता लगायेगी कि उनमें से कुछ का कम से कम संबंधित धारा के अर्थ में परिवर्तन लाने का उद्देश्य है या नहीं। आपने जो कहा मैं उस पर विवाद नहीं करता। वे अनुचित हैं क्योंकि उनके बारे में आपने ऐसा फैसला किया है। परंतु अर्द्धविरामों, और पूर्णविरामों का भी कुछ महत्व होता है। मेरा आग्रह मात्र यह है ...

श्रीमान् उपाध्यक्ष : क्या मैं एक बेहतर तरीका सुझा सकता हूँ जो शायद आपको पसन्द आ जाए, एक ऐसा तरीका जो उपसमिति की नियुक्ति से बेहतर है? उन्हें जिन्हें लगता है कि उनके संशोधन किसी महत्व के हैं वे खुद सीधे प्रारुप समिति के पास पहुँच सकते हैं। यदि वे ऐसा करते हैं तो मुझे यकीन है कि उन पर समुचित विचार किया जाएगा।

श्री महावीर त्यागी : महोदय, अब मैं संतुष्ट हूँ।

श्रीमान् मोहम्मद ताहिर : क्योंकि माननीय डॉ. अम्बेडकर ने संशोधन 315 के संबंध में मेरी बातों का जवाब देकर मुझे संतुष्ट कर दिया है, मैं इसे वापस लेने की अनुमति माँगता हूँ।

संशोधन, सदन की अनुमति से, वापस ले लिया गया।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : अब मैं बचे हुए संशोधनों को सदन में मतदान के लिए रखूँगा। डॉ. अम्बेडकर ने प्रथम संशोधन स्वीकार कर लिया है।

[अधोलिखित अनुच्छेदों को डॉ. अम्बेडकर के सुझाव के अनुसार अपना लिया गया।]

(1) कि संशोधनों की सूची में संशोधन नं. 276 के लिए अधोलिखित को प्रतिस्थापित किया जाए–

'कि अनुच्छेद 9 की धारा (1) के दूसरे पैरे को नयी धारा (1-अ) के रूप में अंकित किया जाए और इस तरह बनी नयी धारा में से शब्द 'विशेषकर' निकाल दिया जाए।'

* * * *

श्रीमान् उपाध्यक्ष : अगला नं. 280 है, जिसे, मैं समझता हूँ, डॉ. अम्बेडकर ने स्वीकार कर लिया है। प्रश्न है–

(2) सं. 280–

"कि अनुचछेद 9 में 'लिंग' शब्द जहाँ कहीं भी आता है उसके बाद शब्द 'जन्म स्थान' अत्तर्विष्ट किए जाएँ।"

(3) सं. 286 (श्रीमान् सुब्रहमण्यम)

"कि अनुच्छेद की धारा 1 की उपधारा (अ) में, शब्दों 'रंस्टोरेण्ट्स, होटल' के बाद शब्द 'धर्मशाला, मुसाफिरखाना' अन्तर्विष्ट किये जाएं।"

(4) सं. 303 – (श्रीमान् गुप्तनाथ सिंह)

"कि अनुच्छेद 9 की धारा (1) के दूसरे पैरा की उपधारा (ब) में, शब्दों 'कुआँ, जलाशय' के बाद शब्द 'स्नान घाट' अन्तर्विष्ट किये जाएं।"

(5) सं. 314–

"कि अनुच्छेद 9 की धारा (1) के दूसरे पैरा की उपधारा (ब) में, शब्दों 'राज्य के राजस्व' के बाद शब्द 'राजकोष' अन्तर्विष्ट किए जाएं।"

[शेष संशोधन अस्वीकृत हुए।]

अनुच्छेद 9, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 10

*__श्रीमान् उपाध्यक्ष :__ क्या हम अगले अनुच्छेद पर आएं, नये अनुच्छेद 9-अ पर? ये संशोधन निदेशात्मक सिद्धांतों की तरह है। मैं इनकी अनुमति नहीं देता। तब अनुच्छेद 10 पर आते हैं।

श्री टी.टी. कृष्णामचारी (मद्रास - जनरल) : मेरे विचार से इसे रोकने का इरादा है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं आपसे इस अनुच्छेद को रोकने का अनुरोध करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : तब हम अगले अनुच्छेद 10(अ) पर आते हैं।

(संशोधन नं. 369 प्रस्तावित नहीं किया गया।)

अनुच्छेद 11

♣**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** – मैं श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद का संशोधन स्वीकार नहीं कर सकता।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : डॉ. अम्बेडकर, क्या आप श्रीमान् शाह के सुझाव का उत्तर देना चाहते हैं?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं अब संशोधन सं. 372 को मतदान के लिए रखता हूँ।

---

* सी.ए.डी., अंक VII, 29 नवम्बर, 1948, पृ. 664

♣ सी.ए.डी., अंक VII, 30 नवम्बर, 1948, पृ. 669

प्रश्न है–

"कि अनुच्छेद 11 के लिए अधोलिखित अनुच्छेद प्रतिस्थापित किया जाए–

'11. अपने धर्म और जाति के आधार पर कोई भी व्यक्ति 'अछूत' नहीं समझा जाएगा, और किसी भी रूप में ऐसा करना कानून के तहत दंडनीय बनाया जा सकता है'।"

[श्रीमान् नज़ीरुद्दीन का यह संशोधन अस्वीकृत हुआ।]

अनुच्छेद 11 स्वीकृत हुआ और संविधान में जोड़ दिया गया।

माननीय सदस्य : "महात्मा गांधी की जय"

[छह सदस्य इस अनुच्छेद पर बोले। डॉ. अम्बेडकर ने कोई भाषण नहीं दिया।]

अनुच्छेद 11 (क) और (ख)

श्रीमान् जैड. एच. लारी (संयुक्त प्रांत-मुसलमान) : श्रीमान् उपाध्यक्ष, मैं प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 11 के बाद अधोलिखित नया अनुच्छेद अन्तर्विष्ट किया जाए –

'11-अ – कर्ज के लिए कैद समाप्त की जाती है।

11-ख –हिंसक राजद्रोह के लिए मृत्युदण्ड के बदले मृत्युदण्ड समाप्त किया जाता है।"

महोदय, दोनों धारायें भिन्न हैं और इसलिए इन पर विचार करते हुए और अपनाते हुए सदन के लिए दोनों को एक साथ स्वीकार करना या अस्वीकार करना आवश्यक नहीं है। सदन को एक को स्वीकार करने या न करने या दोनों को स्वीकार करने की स्वतंत्रता है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष – इसे अलग से क्यों नहीं प्रस्तावित करते?

* * * *

[*]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) :** मैं संशोधन को स्वीकार नहीं करता।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं संशोधन को मतदान के लिए रखूँगा।

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 10

[#]**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** हम अनुच्छेद 10 पर वापस आ सकते हैं। सदन के समक्ष प्रस्ताव हैं–

कि अनुच्छेद 10 संविधान का हिस्सा हो चुका है।

* * * *

---

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 30 नवम्बर, 1948, पृ. 672

[#] वही, पृष्ठ 672

[%]**श्री एच.वी. कामथ :** स्पष्टीकरण के बारे में, महोदय, क्या मैं अपने मित्र माननीय अलादी कृष्णास्वामी अय्यर से पूछ सकता हूँ कि क्या यहाँ अभिव्यक्त शब्द "पहली सूची में अस्थायी रूप से उल्लिखित कोई राज्य" पहली अनुसूची के सभी चार भागों पर लागू होते हैं। प्रथम अनुसूची चार भागों से मिलकर बनी है। तीन भाग राज्यों से संबंधित हैं और आखिरी भाग अण्डमान निकोबार द्वीप समूहों से संबंधित है, और अनुच्छेद 1 को हमने पहले ही स्वीकार कर लिया है जो उपधारा (2) में कहता है कि "राज्यों" का अर्थ उन राज्यों से होगा जो प्रथम अनुसूची के भाग I, II और III में अस्थायी रूप से उल्लिखित हैं। क्या मैं उनसे पूछ सकता हूँ कि क्या "प्रथम अनुसूची में अस्थायी रूप से उल्लिखित कोई राज्य" का अर्थ प्रथम अनुसूची के चारों भागों में उल्लिखित सभी राज्यों और क्षेत्रों से है? उस स्थिति में इस संशोधन की भाषा में सुधार करना पड़ेगा। यह इस प्रकार होनी चाहिए "प्रथम अनुसूची के पहले भाग I, II III और IV के तहत कोई राज्य या क्षेत्र और यदि आप 'राज्य' को बनाये रखना चाहते हैं तब यह इस प्रकार होगी 'प्रथम अनुसूची के भागों I, II और III में उल्लिखित किसी राज्य के तहत।'

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह बिल्कुल स्पष्ट है कि हमने भागों का उल्लेख नहीं किया है। हमने केवल 'प्रथम अनुसूची' कहा है और प्रथम अनुसूची में, उल्लिखित सभी राज्य इसमें शामिल हैं।

श्री एच.वी. कामथ : अनुच्छेद 1 कहता है 'राज्य जो प्रथम अनुसूची के भाग I, II और III में अस्थायी रूप से उल्लिखित है'। भाग IV में उल्लिखित क्षेत्र हमारे संविधान के अनुसार राज्य नहीं हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : किसी प्रकार का भेद करने की कोई कोशिश नहीं होनी चाहिए।

श्री एच.वी. कामथ : यदि मेरी बात उत्तर देने के योग्य नहीं है तो मुझे कुछ भी नहीं कहना है।

श्री अलादी कृष्णास्वामी अय्यर : यदि आप केवल प्रथम अनुसूची का हवाला देते हैं, तो आप पायेंगे कि भाग I में उन क्षेत्रों का उल्लेख है जो इस संविधान के शुरू होने के ठीक पूर्व गवर्नर के प्रांतों के नाम से जाने जाते थे। भाग II उन क्षेत्रों से संबंधित है जो इस संविधान के शुरू होने के ठीक पूर्व दिल्ली, अजमेर - मारवाड़ इत्यादि के मुख्य कमिश्नर के क्षेत्रों के नाम से जाने जाते थे। भाग III भारतीय राज्यों से संबंधित है। ये सभी वर्ग अनुच्छेद 1 में 'राज्य' के तौर पर उल्लिखित हैं। प्रथम अनुसूची के भाग IV में अण्डमान निकोबार द्वीप समूह हैं। ये राज्य न होकर क्षेत्र हैं।

* * * *

[%] वही, पृष्ठ 678

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :__ श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, मैं शुरू से ही कह रहा हूँ, इससे पहले कि विशेष प्रश्नों पर विचार करूँ जो बहस के दौरान उठाये गये हैं, कि मैं श्रीमान् मिश्रा द्वारा प्रस्तावित संशोधन सं. 334 स्वीकार नहीं कर सकता, और न ही मैं अपने मित्र नज़ीरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तावित दो संशोधन सं. 336 और नं. 337 स्वीकार कर सकता हूँ। मैं श्रीमान् इमाम का संशोधन सं. 338 जैसा श्रीमान् अनन्तशयमन आयंगर द्वारा प्रस्तावित संशोधन सं. 77 द्वारा संशोधित किया गया, स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ। मैं श्रीमान् कपूर का संशोधन सं. 340, जैसा मेरे मित्र श्रीमान् मुंशी और श्रीमान् अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर द्वारा प्रस्तावित संशोधनों, सं. 81 और सं. 82 द्वारा संशोधित किया गया भी स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ। मेरे विचार से मुझसे संशोधन सं. 334, 336 और 337 के बारे में कुछ भी कहने की मांग नहीं की गयी है। जो टिप्पणियां मैं अपने भाषण के दौरान करूँगा, वे निवास के प्रश्न जिसके बारे में इतनी अधिक बहस हो चुकी है और अनुच्छेद 10 की धारा (3) में 'पिछड़ा' शब्द के प्रयोग तक सीमित होंगी। मेरे मित्र श्रीमान् टी.टी. कृष्णमाचारी ने प्रारुप समिति पर व्यंग्य किया है कि प्रारुप समिति ने सम्भवतया अपने कुछ सदस्यों के हितों में एक संविधान प्रस्तुत करने के स्थान पर अधिवक्ताओं के लिए एक स्वर्ग तैयार कर दिया है। मैं यह कहने के लिए तैयार नहीं हूँ कि यह संविधान ऐसे प्रश्नों को जन्म नहीं देगा जिनके लिए कानूनी व्याख्या या अदालती व्याख्या आवश्यक होगी। वास्तव में, मैं श्री कृष्णमाचारी से पूछना चाहूँगा कि क्या वह विश्व के एक भी ऐसे संविधान का उदाहरण दे सकेंगे जो अधिवक्ताओं के लिए स्वर्ग न हो? मैं उनसे विशेषकर संयुक्त राज्य, कनाडा और अन्य देशों के संविधानों से संबंधित कानूनी प्रतिवेदनों के विशाल भंडारगृह को देखने के लिए कहूँगा। इसलिए मुझे इस बारे में कोई शर्मिंदगी नहीं है यदि यह संविधान व्याख्या के उद्देश्य हेतु यहाँ से संघीय अदालत में ले जाया जाता है। प्रत्येक संविधान और प्रत्येक प्रारुप समिति का यही हश्र है। इसलिए मैं इस विषय को और कतई नहीं खीचूँगा।

अब, निवास के संबंध में। मामला वास्तव में बहुत सरल है और मैं नहीं समझ पा रहा कि मेरे मित्र श्रीमान् टी.टी. कृष्णमाचारी जैसे बुद्धिमान व्यक्ति इस संशोधन का मूल उद्देश्य क्यों नही समझ सके।

श्रीमान् टी.टी. कृष्णमाचारी : इसका भी वही कारण है जिस कारण मेरे माननीय मित्र इस शब्द को मूल अनुच्छेद में नहीं रख पाये।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं पूरी तरह नहीं समझ पाया। मैं इस संशोधन के उद्देश्य को स्पष्ट करूँगा। इस सदन में बहुत से व्यक्ति यह महसूस करते हैं कि, जब हमने भारतीय राज्यों और प्रांतों के स्थानीय न्याय क्षेत्र की परवाह किए बिना पूरे भारत में एक साझा नागरिकता स्थापित की है यह केवल सहवर्ती है कि किसी विशेष

* सी.ए.डी., अंक VII, 30 नवम्बर, 1948, पृ. 699-702

राज्य में विशेष पद पर बने रहने के लिए निवास-स्थान की अनिवार्यता नहीं होनी चाहिए क्योंकि, यदि निवास-स्थान को आप योग्यता बना देते हैं तो आप वास्तव में उस साझा नागरिकता के महत्व को कम कर रहे हैं जो हमने इस संविधान द्वारा स्थापित की है अथवा जिसका इस संविधान के द्वारा स्थापित करने का प्रस्ताव करते हैं। इसलिए मेरे फैसले से, यह तर्क कि किसी राज्य में पदों पर कार्य करने के लिए निवास-स्थान एक योग्यता नहीं होनी चाहिए पूर्णतया वैध है और एक मजबूत तर्क है। साथ ही, यह भी अवश्य महसूस करना चाहिए कि आप उन लोगों को जो एक प्रांत से दूसरे प्रांत में, एक राज्य से दूसरे राज्य में पक्षी की भांति किसी स्थायित्व के, उस विशेष प्रांत से किसी संबंध के बगैर विचरण करते रहें, इसकी अनुमति नहीं दे सकते कि वे आयें, पदों के लिए आवेदन करें, पंख फैलाकर चलते बनें। इसलिए कुछ पाबन्दियां जरूरी हैं। जब इस मामले की जांच की गई, तो यह पाया गया कि आज बहुत से प्रांतों में प्रांतीय सरकारों के द्वारा उस विशेष प्रांत में एक पद के लिए एक निश्चित अवधि के निवास को बतौर योग्यता निर्धारित करते हुए नियम बना दिए गए हैं। इसलिए संशोधन में यह प्रस्ताव कि, यद्यपि साझा नियम के बतौर निवास एक योग्यता नहीं होनी चाहिए तथापि कुछ अपवाद बनाये जा सकते हैं, पर उसे आम नियम नहीं बनाया जा सकता। हम मात्र एक प्रचलन का अनुसरण कर रहे हैं जो विभिन्न प्रांतों में पहले ही स्थापित हो चुका है। हालाँकि, हमने पाया वह, यह था कि जबकि विभिन्न प्रांत एक निश्चित अवधि निर्धारित कर रहे थे तब भी यह अवधि भिन्न थीं। कुछ प्रांतों ने कहा कि व्यक्ति को वास्तव में आवश्यक रूप से अधिवासी होना चाहिए। इसके क्या अर्थ है? कोई नहीं जानता? कुछ ने दस वर्ष और कुछ ने सात वर्ष आदि या कुछ और प्रावधान रखा। इसलिए यह महसूस किया गया कि, जबकि योग्यता की परीक्षा के लिए एक अवधि तय करना वांछनीय हो सकता है लेकिन यह परीक्षा पूरे भारत में एक-सी होनी चाहिए। परिणामस्वरूप, यदि उद्देश्य योग्यता की अवधि को समान बनाना हो, तो इसे केवल संसद को शक्ति देकर ही प्राप्त किया जा सकता है, न कि स्थानीय इकाइयों को शक्ति देकर, चाहे वे प्रांत हों या राज्य। इस संशोधन, जो निवास को बतौर योग्यता रख रहा है, का यही उद्देश्य है।

मेरे मित्र श्रीमान् कामथ के द्वारा उठाये गये विषय के बारे में, मैं इस पर विचार करने का प्रस्ताव नहीं करता क्योंकि इस पर श्रीमान् मुंशी व अन्य मित्र द्वारा पहले ही विचार किया जा चुका है। उन्होंने उन्हें बता दिया है कि इस अनुच्छेद की भाषा इस संविधान के अन्य प्रावधानों के पूर्णतया अनुरूप है।

अब, महोदय दूसरे प्रश्न पर आने के लिए जो इस सदन के सदस्यों को आन्दोलित कर रहा है, अर्थात् अनुच्छेद 10 की धारा (3) 'पिछड़ा' शब्द का प्रयोग, मैं अपने सामान्य अवलोकनों के साथ शुरू करना चाहूँगा ताकि सदस्य इस विशेष धारा में प्रयुक्त 'पिछड़ा' शब्द के अर्थ, महत्व और आवश्यकता को समझने की स्थिति में हो सकें। यदि सदस्य इस विषय पर कोशिश करें और अपने विचारों का आदान-प्रदान करें तो वे पायेंगे कि

हमारे सामने इस संबंध में तीन दृष्टिकोण हैं, और यदि हम एक ऐसा कारगर सिद्धांत प्रस्तुत करना चाहते हैं जो सर्वमान्य हो तो हमें इनमें सामंजस्य बिठाने की आवश्यकता होगी। इन तीन दृष्टिकोणों में से एक पहला यह है कि सभी नागरिकों के लिए अवसरों की समानता होगी। यह इस सदन के अधिकतर सदस्यों की इच्छा है कि प्रत्येक व्यक्ति जो उस विशेष पद के लिए योग्य है, उसे उस पद के लिए आवेदन करने, परीक्षा में बैठने, ताकि वह यह तय कर सके कि वह इसके योग्य है या नहीं, की स्वतंत्रता होनी चाहिए और कोई पाबंदी नहीं होनी चाहिए। एक अन्य विचार जिस पर सदन का एक लागू होने में कोई बाधा नहीं होनी चाहिए। एक अन्य विचार जिस पर सदन का एक भाग सहमत है वह यह, कि यदि इस सिद्धांत को अमल में लाना है – और उनके विचार में इसे पूरी तरह से अमल में लाना चाहिए – तो जहाँ तक लोक सेवाओं का संबंध है किसी भी वर्ग या जाति के लिए किसी भी प्रकार को आरक्षण नहीं होना चाहिए और सभी नागरिकों को, यदि वे योग्य हैं, समानता के समान धरातल पर रखा जाना चाहिए। यह दूसरा दृष्टिकोण है जो हमारे पास है। उसके बाद हमारे पास प्रभावशाली राय है जो यह आग्रह करती है कि, यद्यपि सैद्धांतिक रूप से अवसरों की समानता के सिद्धांत को अपनाना ठीक है तथापि इसी के साथ उन जातियों के प्रशासन में प्रवेश के लिए प्रावधान अवश्य करना चाहिए जो अभी तक प्रशासन से बाहर रही है। जैसा मैने कहा, प्रारुप समिति को ऐसा सूत्र तैयार करना पड़ा जो इन तीनों दृष्टिकोणों में सामंजस्य स्थापित कर सके, पहला, कि अवसरों की समानता होगी, दूसरा, कि कुछ विशेष समुदायों के पक्ष में आरक्षण होगा जिनका प्रशासन में अभी तक उचित प्रतिनिधत्व नहीं है। यदि माननीय सदस्य इन तथ्यों को ध्यान में रखेंगे – तीन सिद्धांत जिनमें हमें सामंजस्य स्थापित करना पड़ा – तो वे देखेंगे कि जो सूत्र अनुच्छेद 10 की धारा (3) में अंतर्घ्विट है उससे बेहतर और कोई सूत्र तैयार नहीं किया जा सकता था, वे पायेंगे कि उनका विचार जो यह विश्वास करते हैं और मानते हैं कि अवसरों की समानता होनी चाहिए अनुच्छेद 10 की धारा (1) में अंतर्विष्ट है। यह एक व्यापक सिद्धांत है। साथ ही, जैसा मैंने कहा, हमें कुछ जातियों की इस माँग पर इस सूत्र पर सहमत होना पड़ा कि जिस प्रशासन पर अब तक ऐतिहासिक कारणों के चलते एक या कुछ जातियों का नियंत्रण था, वह स्थिति अब समाप्त होनी चाहिए और दूसरी जातियों को लोक सेवाओं में आने का अवसर अवश्य ही मिलना चाहिए। उदाहरणार्थ, यह मान लें कि हमें उन जातियों की माँग पूर्णतया माननी पड़े, जो लोक सेवाओं में अब तक पूर्णतया नियुक्त नहीं किए गए हैं, तो वास्तव में जो होगा वह यह है हम पहले सिद्धांत को पूर्णतया नष्ट कर देंगे जिस पर हम सब सहमत हैं कि अवसरों की समानता होनी चाहिए। मुझे एक और दृष्टांत देने दें। उदाहरण के लिए, माने लें, 70 प्रतिशत पद एक जाति या कुछ जातियों के समूह के लिए आरक्षित कर दिए जाते हैं और केवल 30 प्रतिशत ही अनारक्षित रखें जाते हैं। कोई कहेगा कि 30 प्रतिशत पदों का आरक्षण बतौर सामान्य प्रतियोगिता उस पहले सिद्धांत अर्थात् अवसरों की समानता होनी चाहिए, को प्रभावी बनाने की दृष्टि से संतोषप्रद है? मेरे विचार से यह नहीं हो सकता। इसलिए यदि पदों का आरक्षण अनुच्छेद 10 की उपधारा (1) के अनुसार होता है तो यह अल्पसंख्या

में पदों तक सीमित होना चाहिए। केवल तब ही यह सिद्धांत संविधान में अपना स्थान पा सकता है और अमल मे प्रभावी हो सकता है। यदि माननीय सदस्य यह स्थिति समझते हैं कि अवसरों की समानात का सिद्धांत तथा उन जातियों की माँग को पूर करना जिनका राज्य में अभी प्रतिनिधित्व नहीं है, तो मुझे यकीन है कि वे इस बात पर सहमत होंगे कि जब तक आप अर्हकारी शब्द 'पिछड़ा' का प्रयोग नहीं करते तो जो अपवाद आरक्षण के पक्ष में है वह इस नियम को पूर्णतया नष्ट कर देगा। नियम जैसा कुछ नहीं बचेगा। यही, मेरे विचार से, यदि मैं ऐसा कह सकता हूँ, स्पष्टीकरण है जिस लिए प्रारुप समिति ने "पिछड़ा" शब्द शामिल करने की जिम्मेवारी अपने ऊपर स्वयं ली और यह शब्द, मैं स्वीकार करता हूँ, कि यह उस रूप में मूलाधिकार में मौजूद नहीं था जिस रूप में सभा द्वारा पारित किया गया है। लेकिन मैं सोचता हूँ माननीय सदस्यों को अहसास हो जायेगा कि प्रारुप समिति जिसका विभिन्न आधारों पर जैसे कभी प्रारुप को अशुद्ध बताकर और कभी कुछ बताकर मजाक उड़ाया गया, जो कि सही नहीं था अपने ऊपर और अधिक प्रहार किए जाने का अवसर दे दिया होता कि उसने ऐसा प्रारुप संविधान तैयार किया जिसमें अपवाद इतना बड़ा था कि इसने नियम के लागू होने के लिए कोई गुंजाइश नहीं छोड़ी। मेरे विचार से कि "पिछड़ा" शब्द क्यों प्रयुक्त किया गया है, यह बताने के लिए इतना पर्याप्त है।

अल्पसंख्यकों के संबंध में, अनुच्छेद 296 में विशेष उल्लेख है जहाँ यह निर्धारित किया गया है कि अल्पसंख्यकों के संबंध में कुछ प्रावधान किया जायेगा। निस्संदेह, हमने आयाम निर्धारित नहीं किया। यह भाग में स्वयं स्पष्ट है, लेकिन अल्पसंख्यकों को उन पर विचार किए जाने से पूर्णतया नहीं निकाला है। किसी ने मुझसे पूछा था – "पिछड़ी जाति क्या है?" तब कोई भी जो प्रारुप की भाषा पढ़ता है, स्वयं पता लेगा कि हमने यह प्रत्येक स्थानीय सरकार द्वारा तय किए जाने के लिए छोड़ दिया है। एक पिछड़ी जाति एक ऐसी जाति है जिसे सरकार पिछड़ा समझती है। मेरे माननीय मित्र श्रीमान् टी.टी. कृष्णमाचारी ने मुझसे पूछा था कि क्या यह नियम वाद योग्य होगा। इसका सैद्धांतिक उत्तर देना कुछ कठिन है। व्यक्तिगत रूप से मेरा मानना है कि यह वाद योग्य मामला है। यदि स्थानीय सरकार ने आरक्षण की इस श्रेणी में इतनी अधिक संख्या में सीटें शामिल कर ली हैं तो मैं समझता हूँ कोई भी संघीय अदालत या सर्वोच्च न्यायालय में जा सकता है और कह सकता है कि आरक्षण इतना अधिक है कि अवसरों की समानता का सिद्धांत नष्ट हो गया है और तब अदालत इस निष्कर्ष पर पहुँचेगी कि क्या स्थानीय सरकार या राज्य सरकार ने ठीक तथा विवेकपूर्ण ढंग से कार्य किया है। श्रीमान् कृष्णमाचारी ने पूछा था – "कौन ठीक व्यक्ति है और कौन विवेकी व्यक्ति है? ये तो वाद योग्य मामले हैं।" निस्सदेह ये वाद योग्य मामले हैं, लेकिन मेरे माननीय मित्र श्रीमान् कृष्णमाचारी समझेंगे कि शब्द "सही व्यक्ति और विवेकी व्यक्ति" बहुत से कानूनों में प्रयुक्त किए गए हैं और यदि वे केवल सम्पत्ति हस्तांतरण अधिनियम देख लें तो वे पायेंगे कि बहुत सारे मामलों में शब्द "सही व्यक्ति और विवेकी व्यक्ति" बहुत अच्छी तरह से परिभाषित किए गए हैं और

अदालत को इन्हें परिभाषित करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। मैं इसलिए आशा करता हूँ कि जिन संशोधनों को मैंने स्वीकार किया है, उन्हें सदन भी स्वीकार कर लेगा।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं अब संशोधनों को, एक के बाद एक, मतदान के लिए रखूँगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे दुख है, मैं यह कहना भूल गया कि मैं संशोधन संख्या 342 को स्वीकार करता हूँ।

[अधोलिखित संशोधन डॉ. अम्बेडकर के द्वारा स्वीकार कर लिए गए और सदन द्वारा स्वीकार कर लिए गए।]

"(i) कि अनुच्छेद 10 की धारा (1) में, शब्दों "रोजगार के मामलों में" के लिए शब्द 'रोजगार या पद पर नियुक्ति से संबंधित मामलों में' प्रतिस्थापित किए जाएं।"

(ii) कि अनुच्छेद 10 की धारा (2) में, शब्दों "इनएलिजेबल फॉर एनी" के बाद शब्द "इम्प्लायमेंट और" अन्तर्विष्ट किए जाएं।"

(iii) कि अनुच्छेद 10 की धारा (2) में, शब्द 'जन्म स्थान' के पहले शब्द 'भारत में' जोड़ा जाए।"

(iv) कि अनुच्छेद 10 की धारा (2) में, शब्द 'जन्म' के बाद शब्द 'निवास' अन्तर्विष्ट किया जाए।"

(v) कि अनुच्छेद 10 की धारा (2) में, शब्द 'अयोग्य' के बाद 'या के विरुद्ध भेदभाव बरता गया' अन्तर्विष्ट किया जाए।"

कि अनुच्छेद 10 की धारा (2) के बाद अधोलिखित नयी धारा अन्तर्विष्ट की जाए–

"(अ)। इस अनुच्छेद की कोई बात संसद को प्रथम अनुसूची में अस्थायी रूप से उल्लिखित किसी राज्य के तहत किसी पद पर किसी वर्ग या वर्गों की नियुक्ति या रोजगार के संबंध में या इसके क्षेत्र के अन्दर किसी स्थानीय या दूसरे प्राधिकारी के उस राज्य के अन्दर निवास के संबंध में इस प्रकार के रोजगार या नियुक्ति के पूर्व किसी आवश्कता को निर्धारित करने के लिए किसी कानून को बनाने से नहीं रोकेगी।"

[शेष 8 संशोधन अस्वीकृत हुए।]

अनुच्छेद 10, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 12

*[*]**श्री टी.टी. कृष्णामाचारी** – महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ –

"कि अनुच्छेद 12 की धारा (1) में, शब्द 'उपाधि' के बाद शब्द 'जो सैनिक या शैक्षिक विशिष्टता नहीं है' अन्तर्विष्ट किए जाएं।"

---

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 30 नवम्बर, 1948, पृ. 704

महोदय, अनुच्छेद 12 की धारा (1) संशोधन के पश्चात् इस प्रकार होगी –

"कोई उपाधि जो सैनिक या शैक्षिक विशिष्टता नहीं है राज्य द्वारा प्रदान नहीं की जाएगी।"

* * * *

#**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं अपने मित्र श्रीमान् टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तावित संशोधन को स्वीकार करता हूँ।

मेरे मित्र नज़ीरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तावित संशोधन के संबंध में, वे चाहते थे कि शब्दों 'स्वीकार की' को शब्दों 'मान्यता प्रदान की' से प्रतिस्थापित किया जाए। उनका तर्क था, मान लें कि नागरिक उपाधि स्वीकार कर ही लेता है तो संविधान में इस कार्य को निष्प्रभावी बनाने के लिए क्या दण्ड व्यवस्था है? इसके बारे में मेरा उत्तर बहुत ही सरल है – कि संविधान के तहत संसद को इसकी अवशिष्ट शक्तियों के तहत इस संदर्भ में ऐसा कानून बनाने की पूर्ण स्वतंत्रता होगी जो यह निर्धारित करेगा कि उस व्यक्ति के बारे में क्या किया जाना चाहिए जो इस अनुच्छेद के प्रावधानों के विपरीत उपाधि स्वीकार करता है। मुझे सोचना चाहिए था कि इस प्रकार के मामले का सामना करने के लिए यह पर्याप्त प्रावधान था। श्रीमान् कामथ की दूसरी बात के संबंध मे, यदि मैंने उन्हें सही समझा है, उन्होंने पूछा था कि क्या यह वाद योग्य अधिकार है?

इसके संबंध में मेरा जवाब बिल्कुल सरल है – यह वाद योग्य अधिकार नही है। उपाधियों को स्वीकार न करना नागरिकता के बने रहने की एक शर्त है; यह एक अधिकार नहीं है, यह व्यक्ति के लिए निर्धारित किया गया एक कर्त्तव्य है कि यदि वह देश का नागरिक बना रहना चाहता है तो उसे कुछ शर्तों का पालन करना होगा जिनमें से एक यह है कि उसे उपाधि बिल्कुल भी स्वीकार नहीं करनी चाहिए क्योंकि संसद को यह कहने की आजादी होगी, जब संसद कानून के द्वारा व्यवस्था करती है कि उन व्यक्तियों के बारे में क्या किया जाना चाहिए जो इस संविधान के प्रावधानों का उल्लंघन करते हैं, कि यदि कोई व्यक्ति अनुच्छेद 12(1) या (2) के प्रावधानों के विपरीत कोई उपाधि स्वीकार करता है तो उसे कुछ दण्ड दिये जा सकते हैं। एक दण्ड यह हो सकता है कि वह अपना नागरिकता का अधिकार खो दे। इसलिए, इस प्रावधान को समझने में कोई वास्तविक कठिनाई नहीं है, क्योंकि यह स्वयं नागरिकता से जुड़ी एक शर्त है, कि यह वाद योग्य अधिकार नहीं है।

श्री एच.वी. कामथ : मैं दी गई उपाधियों को राज्य द्वारा मान्यता प्रदान करने की बात कर रहा हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : जैसा मैंने अपने मित्र श्रीमान् नज़ीरुद्दीन को उत्तर देते हुए कहा, यह संसद पर निर्भर करता है कि वह अपनी इच्छानुसार कदम उठाये

वही, पृ. 708–09

और संसद जो कदम उठा सकती है उनमें एक यह कहना होगा कि हम इन उपाधियों को मान्यता नहीं देंगे।

श्री एच.वी. कामथ : मैं चाहता हूँ डॉ. अम्बेडकर सिद्धांत को स्वीकार कर लें। बाद में संसद जो चाहे कर सकती है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : निश्चित रूप से यह सामान्य बोध का प्रश्न है कि यदि संविधान कहता है कि कोई व्यक्ति उपाधि स्वीकार नहीं करेगा तो संसद का कर्त्तव्य यह देखना होगा कि कोई नागरिक इस प्रावधान का उल्लंघन न करे।

* * * *

*__श्रीमान् उपाध्यक्ष (डा. एच.सी. मुखर्जी)__ – हम सदन की इच्छाओं को पूरा करने की कोशिश करेंगे।

हमने अनुच्छेद 12 पर अपनी चर्चा पूरी कर ली है और डॉ. अम्बेडकर ने अपना जवाद दे दिया है। मुझे खेद है कि मैं उन सदस्यों की सहायता नहीं कर सकता जो इस पर पुनः चर्चा शुरू करना चाहते हैं। अब मैं विभिन्न संशोधनों को, एक के बाद एक, मतदान के लिए रखूंगा।

"कि अनुच्छेद 12 की धारा (1) में शब्द 'उपाधि' के बाद शब्दों 'जो सैनिक या शैक्षिक विशिष्टता नहीं है' अन्तर्विष्ट किए जाएं।"

श्रीमान् कृष्णमाचारी का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 12, यथासंशाधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

* * * *

अनुच्छेद 13

♣महबूब अली बेग साहिब बहादुर : मैं इस प्रश्न को प्रारुप समिति के अध्यक्ष के समक्ष रखता हूँ कि क्या इन परिस्थितियों में, अर्थात् जहाँ स्वयं संविधान में विधायिका या कार्यपालिका को धारा (1) में उल्लिखित अधिकारों को कम करने के लिए आदेश या कानून पारित करने के लिए एक प्रावधान अस्तित्व में है, अदालत उस आदेश या कानून के गुणों या अवगणों पर विचार कर सकती है और किसी कानून को अवैध या किसी अधिनियम को अनुचित घोषित कर सकती है? मेरे विचार में संविधान में यह स्पष्ट उल्लेख करके अदालत की न्याय शक्ति को वंचित कर दिया गया है कि सार्वजनिक व्यवस्था के हित में, ... राज्य के पास अभियोग पत्र, समिति या सभा से संबंधित कानून बनाने की शक्ति होगी।

---

* सी.ए.डी., अंक VII, 30 नवम्बर, 1948, पृ. 711

♣ सी.ए.डी., अंक VII, 1 दिसम्बर, 1948, पृ. 735

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) : महोदय, यदि मैं अपने माननीय मित्र को बीच में टोक सकता हूँ, मैं उनकी बात समझ चुका हूँ और मैं इसके लिए प्रशंसा करता हूँ और मैं उत्तर देने की और उन्हें इसके तात्पर्य के बारे में संतुष्ट करने की जिम्मेदारी लेता हूँ। इसलिए उनके लिए इसे और खींचना अनावश्यक होगा।

* * * *

[*]**पंडित ठाकुरदास भार्गव :** .... इसी तरह, अब आपके पास शांतिपूर्ण तरीके से बिना हथियारों के जमा होने का अधिकार है और 1947 में आपने कानून पारित किया था जिसके तहत शांतिपूर्ण ढंग से जमा होने पर भी बिना किसी चेतावनी के आकाश से बम गिराये जा सकते थे। हमारे पास आज बहुत से प्रावधान हैं जो लोगों के शांतिपूर्ण ढंग से जमा होने के विरुद्ध हैं। समितियों और संघों पर प्रतिबंध के संबंध में भी यही स्थिति है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : क्या मेरे माननीय मित्र के लिए सामान्य खण्डों पर भी बोलने की छूट है?

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं इसी ओर उनका ध्यान आकृष्ट करने का प्रयत्न कर रहा हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह सदन की प्रक्रिया का दुरुपयोग है। मैं यह कहने के लिए विवश हूँ। जब कोई सदस्य किसी संशोधन पर बोलता है तो उसे उस संशोधन तक ही सीमित रहना चाहिए। उसे इस अवसर की सुलभता नहीं हो जाती कि वे पूरे प्रकरण पर चर्चा करने लग जाए।

पंडित ठाकुरदास भार्गव : मैं संशोधन पर ही बोल रहा हूँ, लेकिन जिस ढंग से डॉ. अम्बेडकर बोलते हैं और अपनी बात कहते हैं, वह बहुत ही आपत्तिजनक है। डॉ. अम्बेडकर को उठकर धमकी भरे अंदाज में या धौंस जमाने वाले लहजे में नहीं बोलना चाहिए।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : ऐसा लगता है कि सभापीठ को छोड़कर प्रत्येक व्यक्ति अपना आपा खो चुका है। (हँसी)। मैने श्रीमान् भार्गव को एक चेतावनी दी थी और, मैं अभी फिर देने वाला था जब डॉ. अम्बेडकर खड़े हो गये। मुझे पूरा यकीन है कि वह अपनी भावना में बह गये। मुझे इतनी अधिक उत्तेजना का कोई कारण नहीं दिखता। वह कई दिनों से तनाव में रहे हैं। मैं उनकी स्थिति अच्छी तरह समझ सकता हूँ और आशा करता हूँ कि सदन मामले को यहीं समाप्त होने देगा।

अब, मैं आशा करता हूँ कि श्रीमान् भार्गव को स्थिति का अहसास हो गया होगा।

* * * *

[♣]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ -

"कि संशोधन नं. 454 के संदर्भ में ...."

---

[*] सी.ए.डी. (आधिकारिक प्रतिवेदन), अंक VII, 19 नवम्बर, 1948, पृष्ठ 477-78

[*] वही, पृ. 738

[♣] सी.ए.डी., अंक VII, 1 दिसम्बर, 1948, पृ. 740-42

श्री एच.वी. कामथ : नियमापत्ति पर, महोदय, क्या संशोधन सं. 454 प्रस्तावित किया जा चुका है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : कृपया जारी रखें।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : 'संशोधनों की सूची में संशोधन सं. 454 के संदर्भ में–

(i) अनुच्छेद 13 की धारा (3), (4) (5) और (6) में, शब्दों 'किसी प्रचलित कानून' के बाद शब्द 'जहाँ तक यह निर्धारित करता है' अन्तर्विष्ट किए जाएं, और

(ii) अनुच्छेद 13 की धारा (6) में, शब्द 'विशेषकर' के बाद शब्दों 'उक्त धारा की कोई बात किसी प्रचलित कानून के कार्यान्वयन को जहाँ तक यह कानून किसी प्राधिकारी को राज्य को कानून बनाने से रोकने या निर्धारित करने के लिए निर्धारित करता है या शक्ति देता है, प्रभावित नहीं करेगी' को अन्तर्विष्ट किया जाए।"

सईद अब्दुर राउफ (असम - मुसलमान) : नियमापत्ति पर, महोदय, मेरे विचार से डॉ. अम्बेडकर का संशोधन सं, 454 में संशोधन नहीं हो सकता। संशोधन सं. 454 धारा (2), (3), (4) (5) और (6) को समाप्त करने की माँग करता है जबकि डॉ. अम्बेडकर का संशोधन इन धाराओं के कुछ शब्द अन्तर्विष्ट करने का प्रयत्न करता है और इसलिए इसे संशोधन में संशोधन की तरह प्रस्तावित नही किया जा सकता है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मुझे ऐसा लगता है कि डॉ. अम्बेडकर वास्तव में जो करने का प्रयत्न कर रहे हैं वह मूल धाराओं को कुछ निश्चित योग्यताओं के साथ बनाये रखना है। इसलिए मैं फैसला देता हूँ कि वे नियम के अनुकूल हैं।

श्री एच.वी. कामथ : यह मूल संशोधन को नकार देने जैसा होगा।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : कृपया अपना स्थान ग्रहण करें।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : उन भाषणों जो अनुच्छेद 13 और अनुच्छेद 8 पर दिये गये हैं और शब्दों 'प्रचलित कानून' जो अनुच्छेद 13 के कुछ प्रतिबंधों में आते हैं, से मुझे यह लगता है कि इस विषय में बहुत ज्यादा गलतफहमी है कि प्रचलित कानून के संबंध में वास्तव में क्या किए जाने का इरादा है? अब मूल अनुच्छेद, अनुच्छेद 8 है जो, विशेष रूप से, बिना किन्हीं शर्तों के कहता है कि कोई प्रचलित कानून जो संविधान के इस भाग में अधिनियमित मूलाधिकारों के असंगत है, अमान्य है। यह एक मूल सिद्धांत है और मुझे इसके बारे में कोई संदेह नहीं है कि यदि किसी प्रशिक्षित अधिवक्ता से अनुच्छेद 13 की धाराओं मे आने वाले शब्दों 'प्रचलित कानून' की व्याख्या करने के लिए कहा जाए तो वह जहाँ तक ये मूलाधिकारों के असंगत नहीं है इन्हें प्रचलित कानून ही बतायेगा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि धाराओं में शब्दों 'प्रचलित कानून' की इसी ढंग से व्याख्या की जाएगी। अनुच्छेद 8 में कहे गये सिद्धांत को वाक्यांश 'प्रचलित कानून' के साथ हर बार दोहराने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि व्याख्या का एक नियम है कि किसी कानून की व्याख्या करते

समय सभी संबंधित भागों का ध्यान रखा जाए और इस तरह पढ़ा जाए कि एक भाग का दूसरे भाग से मेल बैठ जाए। इसलिए, प्रारुप समिति ने महसूस किया और अनुच्छेद 8 में एक पूर्ण सिद्धांत निर्धारित किया कि किसी भी प्रचलित कानून, जहाँ तक यह मूलाधिकारों के लिए अप्रासंगिक है, को रद्द समझा जाएगा। प्रारुप समिति ने उन विभिन्न धाराओं में वाक्यांश 'प्रचलित कानून' के प्रयोग में किसी योग्यता को शामिल करने की आवश्यकता महसूस नहीं की जिनमें यह वाक्यांश आता है। जैसा मैं देखता हूँ बहुत से लोग इस धारा को इस ढंग से पढ़ने में सफल नहीं हुए हैं। "प्रचलित कानून" को पढ़ते समय वे यह भूल गये लगते हैं जो अनुच्छेद 8 में पहले ही कहा जा चुका है। आम व्यक्ति के दिमाग में जो गलतफहमी हो सकती है उसे दूर करने के लिए ही मैं उपधाराओं (3), (4), (5) और (6) में यह संशोधन लाया हूँ। उदाहरण के लिए, ही मैं उपधारा (3) अपने संशोधन के साथ पढ़ूंगा। "उक्त धारा उपधारा (ब) की कोई बात जहाँ तक यह लागू होती है किसी प्रचलित कानून के कार्यान्वयन को प्रभावित करेगी अथवा राज्य को कोई ऐसा कानून जो सार्वजनिक व्यवस्था के हितों में लागू किया गया है बनाने से नहीं रोकेगी"

मैं श्रीमान् भार्गव का संशोधन स्वीकार कर रहा हूँ और इसलिए मैं शब्द 'उचित' भी जोड़ूंगा।

"उक्त उपधारा द्वारा प्रदत्त अधिकार के प्रयोग पर सार्वजनिक व्यवस्था के हितों में उचित पाबन्दियां लगाते हुए।"

अब शब्द 'जहां तक यह लागू होता है' मेरे विचार में बात को स्पष्ट कर देते हैं और किसी ऐसे संदेह से मुक्त कर देते हैं कि प्रचलित कानून केवल तभी तक सुरक्षित रह सकता है जहाँ तक यह उचित पाबंदियां लगाता है। मेरे विचार से इस संशोधन के साथ यह समझने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि प्रचलित कानून केवल एक सीमित मात्रा तक सुरक्षित है और यह केवल तभी तक सुरक्षित है जब तक यह मूलाधिकारों के विरोध में नहीं है।

उपधारा 6 के शब्द इसलिए भिन्न हैं, क्योंकि वे उपधाराओं (3), (4) और (5) में आने वाले शब्दों से भिन्न हैं। माननीय सदस्य स्वयं ही पढ़ें ताकि वे समझ सकें कि इसका सही अर्थ क्या है? अब, मेरे मित्र, पंडित ठाकुरदास भार्गव प्रारुप समिति के विरुद्ध उस पर प्रचलित कानूनों को सुरक्षित रखने में रास्ते से भटक जाने का आरोप लगाते हुए लम्बे भाषण देने पर उतर आये हैं। मुझे नहीं मालूम कि प्रारुप समिति से वे क्या कार्य कराना चाहते हैं? क्या वे हमसे साफ-साफ कहलवाना चाहते हैं कि सभी प्रचलित कानून उसी दिन रद्द हो जाएंगे जिस दिन यह संविधान अस्तित्व में आता है?

पंडित ठाकुरदास भार्गव : पूरी तरह से ऐसा नहीं है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हमने जो कहा है वह यह है कि ऐसे प्रचलित कानून जो इस संविधान के प्रावधानों के लिए अप्रासंगिक है, रद्द समझे जायेंगे। यकीनन इस देश का प्रशासन उन कानूनों के जारी रहने पर निर्भर करता है जो आज अमल में है। यदि प्रचलित कानूनों को पूर्णतया समाप्त कर दिया जाता है तो पूरा का पूरा प्रशांसन तहस-नहस हो जाएगा।

अब, मैं अनुच्छेद 307 लेता हूँ । उन्होंने कहा कि हमने प्रावधान किया है कि प्रचलित कानूनों को तब तक जारी रहना चाहिए जब तक उन्हें संशोधित नहीं किया जाता। अब, मेरे विचार में एक व्यक्ति जो कानून समझता है उसे इस सच्चाई का अहसास करने में सक्षम होना चाहिए कि जब संविधान अस्तित्व में आ जाएगा उसके बाद इस देश में संसद तथा कई स्थानीय विधायिकाओं को अपने संबंधित क्षेत्रों में कानून बनाने का विशेष अधिकार होगा। स्पष्ट है कि यदि आप इस सिद्धांत को प्रतिपादित करते हैं कि इसके बाद कोई भी कानून अमल में नहीं रहेगा या इसके पास शक्ति या अनुशास्ति नहीं होगी जब तक यह संसद द्वारा पारित नहीं किया गया है, तो क्या स्थिति होगी? स्थिति यह होगी कि वे सब कानून जो पूर्व विधायिका, केन्द्रीय विधानसभा या प्रांतीय विधानसभा द्वारा बनाये गये हैं टुकड़े-टुकड़े हो जाएंगे, क्योंकि उनके पास अनुशास्ति समाप्त हो जाएगी, चूंकि वे संसद द्वारा या स्थानीय विधायिकाओं द्वारा नहीं बनाये गए हैं और संविधान के तहत केवल ये निकाय ही कानून बनाने के लिए अधिकृत हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि संविधान में एक प्रावधान हो कि ऐसे कानूनों को जो पहले बनाये गये हैं केवल इसलिए रद्द नहीं माना जायेगा कि उन्हें संसद ने नहीं बनाया है। इसी वजह से अनुच्छेद 307 को इस संविधान में शामिल किया गया है। इसलिए, मैं कहता हूँ, महोदय, मेरा संशोधन, जो प्रचलित कानून के उस अंश को विशिष्टता प्रदान करता है जिसका जहाँ तक मूलाधिकारों से संबंध है अमल में रहेगा, उस कठिनाई का मुकाबला करता है जो कई सदस्यों ने इस सच्चाई के मद्देनजर महसूस की है कि वे अनुच्छेद 13 को अनुच्छेद 8 के साथ जोड़कर पढ़ने में कठिनाई पाते हैं। इसलिए मेरे विचार से मेरा यह संशोधन स्थिति को स्पष्ट कर देता है और मैं आशा करता हूँ कि सदन को इसे स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

[इस स्पष्टीकरण के बाद कई संशोधन प्रस्तावित नहीं किए गये।]

* * * *

[*]**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ –

"कि अनुच्छेद 13 की धारा 4 में, शब्दों 'आम जनता' के लिए शब्दों 'सार्वजनिक व्यवस्था या नैतिकता' को प्रतिस्थापित किया जाए।" इस धारा में ये शब्द अनुपयुक्त हैं।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : 477 समान रूप का है। 479, 480 और 486 समान अर्थ वाले हैं।

[संशोधन संख्या 479, 480 और 486 प्रस्तावित नहीं किए गए ।]

* * * *

---

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 1 दिसम्बर, 1948, पृ. 744

#**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 123 की धारा (5) में, शब्द 'आदिवासी' के लिए शब्द 'अनुसूचित' को प्रतिस्थापित किया जाए।"

जब प्रारुप समिति मूलाधिकारों पर विचार कर रही थी तब आदिवासी क्षेत्रों के लिए नियुक्त की गई समिति ने अपना प्रतिवेदन तैयार नहीं किया था परिणामस्वरूप जिस समय प्रारुप तैयार किया गया उस समय हमें 'आदिवासी' शब्द का प्रयोग करना पड़ा। बाद में हमने पाया कि आदिवासी क्षेत्रों के लिए नियुक्त समिति ने वाक्यांश 'अनुसूचित' जनजाति' का प्रयोग किया था और हमने उन अनुसूचियों में शब्द 'अनुसूचित जाति' का प्रयोग किया जो इस संविधान के संलग्न हैं। भाषा को एक जैसा रखने के लिए यह आवश्यक है कि शब्द 'अनुसूचित' को शब्द 'आदिवासी' के लिए प्रतिस्थापित किया जाए।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : हमारे पास, मैं समझता हूँ, इस संशोधन के लिए एक संशोधन है जो सूची में संशोधन सेख्या 56 है जो श्री फूल सिंह के नाम में है।

[सूची I का संशोधन संख्या 56 प्रस्तावित नहीं किया गया है।]

श्रीमान् उपाध्यक्ष : इसका अर्थ हुआ कि संशोधन सं. 491 जैसा का तैसा बना रहेगा।

तब हम संशोधन सं. 488 पर आते हैं।

[संशोधन नं. 488 प्रस्तावित नहीं किया गया।]

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ –

"कि अनुच्छेद 13 की धारा (6) में, शब्दों 'सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता या स्वास्थ्य' के लिए शब्दों 'आम जनता' को प्रतिस्थापित किया जाए।"

शब्द 'सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता या स्वास्थ्य' इस विशेष धारा में काफी अनुपयुक्त है।

* * * *

***श्री एम. अनन्थासयमन आयंगर :** .... अब, इसलिए उन संशोधनों के अलावा जो डॉ. अम्बेडकर को स्वीकार्य हैं अन्य को स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। वे आपत्तिजनक हैं और उन्हें संविधान में स्थान नहीं मिलना चाहिए।

श्री सत्यनारायण सिन्हा (बिहार - जनरल) : मैं प्रस्ताव करता हूँ कि प्रश्न अब रखा जाए।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मुझसे पूछा गया कि मैंने सदन की कार्यवाही किस प्रकार संचालित की। मैंने दस समय जानकारी देने से मना कर दिया था, क्योंकि मैंने सोचा था कि यह बताना मेरे विवेक पर छोड़ा जा सकता है कि मैं सदन की कार्यवाही किस

वही, पृष्ठ 746

*सी.ए.डी. अंक VII, 2 दिसम्बर, 1948 पृ. 779-83

प्रकार संचालित करता हूँ। मैं पाता हूँ कि मैं उन सब सदस्यों की इच्छाओं को संतुष्ट नहीं कर सका हूँ जिन्होंने बोलने की इच्छा प्रकट की थी। इस समय मेरे पास विभिन्न सज्जनों के 25 नोट हैं। ये सभी सज्जन बोलने के लिए उत्सुक हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इनमें से प्रत्येक चर्चा में कुछ न कुछ योगदान करने मे सक्षम होंगे। लेकिन चर्चा अनिश्चितकाल के लिए नहीं चल सकती। इस सूची में वे लोग शामिल नहीं हैं जो अपनी बात रखने के लिए हैं और इन लोगों ने खड़े होकर अपनी राय व्यक्त करने की कोशिश भी की थी, पर उन्हें अवसर नहीं मिल पाया। मैने पूरे सदन के विचार जानने की कोशिश की है। यदि कृपा करके माननीय सदस्य उन वक्ताओं की सूची पर गौर करेंगे जो पहले ही सदन को संबोधित कर चुके हैं तो वे पायेंगे कि प्रत्येक प्रांत को प्रतिनिधित्व मिला है और प्रत्येक प्रांत से प्रत्येक कथित अल्पसंख्यक को प्रतिनिधित्व मिला है। मेरे विचार में जो पंडित एल.के. मैत्रा कहते हैं कि बंगालियों का बहुमत है, उसके बावजूद मेरे विचार में, विषय पर पूरी तरह चर्चा हो चुकी है। लेकिन, हमेशा की तरह, मैं जानना चाहूँगा कि क्या यह सदन की इच्छा है कि हमें चर्चा बन्द कर देनी चाहिए?

माननीय सदस्य : हाँ, हाँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : तब मैं डॉ. अम्बेडकर से जवाब देने का अनुरोध करूँगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) : श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, इस अनुच्छेद 13 के लिए प्रस्तावित किए गए बहुत से संशोधनों में से, मैं संशोधन सं. 415, नं. 453 जैसा श्रीमान् मुंशी के संशोधन सं. 86 द्वारा संशोधित किया गया, और सूची I का संशोधन नं. 49, जैसा 'उचित' शब्द जोड़ने के लिए श्रीमान् ठाकुरदास भार्गव के संशोधन द्वारा संशाधित किया गया, को स्वीकार करने का प्रस्ताव करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : क्या कृपया आप हमें यह बतायेंगे कि संशोधन सं. 415 को किस रूप में स्वीकार करने का आपने प्रस्ताव किया है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : उस संशोधन के रूप में जो शब्दों 'इस अनुच्छेद के अन्य प्रावधानों के अधीन' को हटाने का प्रयत्न करता है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : और इसके बाद?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इसके बाद मैं 453 जैसा संशोधन सं. 86 द्वारा संशोधित किया गया, और सूची I के संशोधन सं. 49, जैसा पंडित ठाकुरदास भार्गव के संशोधन द्वारा शब्द 'उचित' जोड़ने के लिए संशोधित किया गया, को स्वीकार करता हूँ।

अब, महोदय, अन्य संशोधनों तथा वक्ताओं द्वारा अपने भाषणों में उठायी गयी बातों पर आते हुए, मैं पाता हूँ कुछ ही बातें हैं जिनका उत्तर देना आवश्यक है।

अनुच्छेद 13 की सामान्य आलोचना के संबंध में, जो धारा (1) की उपधाराओं पर केन्द्रित रहा है, मेरे विचार से, मैं कह सकता हूँ कि सदन अब यह महसूस करने की स्थिति में होगा कि यह अनुच्छेद अपने में संशोधनों के साथ इस रूप में उभरा है जो आमतौर पर संतोषप्रद है। अनुच्छेद 8 के महत्व के बारे में मेरा स्पष्टीकरण, वाक्यांश

'प्रचलित कानून' में मेरा संशोधन और "उचित" शब्द का जुड़ना मेरे विचार में उन कमियों को दूर कर देंगे जिनकी ओर माननीय सदस्यों ने इस अनुच्छेद पर दिए गए अपने भाषणों में इशारा किया था, और मेरे विचास से मेरे मित्र प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना और श्रीमान् टी.टी. कृष्णमाचारी तथा श्रीमान् अल्गूराय शास्त्री द्वारा दिए गए भाषण सदन को विश्वास दिला देंगे और यह अनुच्छेद अपने वर्तमान रूप में इन्हीं संशोधनों के साथ बिना कठिनाई के सदन द्वारा स्वीकार कर लिया जाएगा और इसलिए मेरे मित्रों ने अनुच्छेद के समर्थन में जो कहा है उसमें मैं कुछ भी नहीं जोड़ना चाहता। वास्तव में, मैं इस अनुच्छेद के समर्थन में उनके द्वारा अपने भाषणों में दिए गए तर्कों में सुधार करने में बड़ी कठिनाई पाता हूँ।

इसलिए मैं दूसरी बातें लूँगा। उनमें से अधिकांश मेरे मित्र, श्रीमान् एम. अनन्थाशयमन आयंगर ने विचार कर लिया है और यदि, महोदय, आपने कहा न होता तो मैं कहता कि उनका भाषण मेरा भाषण समझा जा सकता है, क्योंकि उन्होंने उन सभी बातों पर विचार किया है, जो नोट की थीं।

अब, जिस एक बात को मैने ध्यान में रखा था और जिसके बारे में मैंने अपने उत्तर के दौरान कुछ कहने के लिए सोचा था वह मेरे मित्र प्रो. के.टी. शाह द्वारा कही गई थीं कि मूलाधिकार प्रेस की आजादी का जिक्र नहीं करते। मेरी समझ में, मेरे मित्र श्रीमान् अनन्थाशयमन आयंगर दिया गया उत्तर पूर्ण है। प्रेस मात्र एक व्यक्ति या नागरिक द्वारा अपनी बात करने का एक तरीका है। प्रेस के पास कोई ऐसे विशेष अधिकार नहीं हैं जो नागरिक को नहीं दिये गये हैं या जो उसके द्वारा व्यक्तिगत क्षमता के तौर पर प्रयोग नहीं किए जाते हैं। एक प्रेस का सम्पादक या प्रबंधक सभी नागरिक हैं और इसलिए जब वे समाचार पत्रों में लिखना चुनते हैं तो वे केवल अपना अभिव्यक्ति का अधिकार प्रयोग कर रहे होते हैं, और इसलिए मेरे विचार से प्रेस की आजादी का कोई विशेष उल्लेख करना कतई आवश्यक नहीं है।

अब, हथियार रखने के प्रश्न पर, जिसके बारे में मेरे मित्र श्रीमान् कामथ इतना अधिक उत्तेजित थे, मेरे विचार से जो दृष्टिकोण हमने अपनाया है वह बिल्कुल स्पष्ट है। यह बिल्कुल सच है और प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि कांग्रेस पार्टी आन्दोलन कर रही थी कि हथियार रखने का अधिकार होना चाहिए। इससे कोई इंकार नहीं कर सकता। यह इतिहास है। साथ ही, मेरे विचार से, सदन को यह सच्चाई नहीं भूलनी चाहिए कि वे परिस्थितियां अब नहीं हैं जब ऐसे प्रस्ताव कांग्रेस द्वारा पारित किए गए थे।

श्री एच. वी. कामथ : यह एक बहुत ही सुविधाजनक तर्क है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह इसलिए है क्योंकि ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों को हथियार रखने की अनुमति देने से इंकार कर दिया था, शांति और व्यवस्था के आधार पर नहीं बल्कि इस आधार पर कि पराधीन लोगों को एक विदेशी सरकार के विरुद्ध हथियार रखने का अधिकार नहीं होना चाहिए जिससे कि सरकार का तख्ता पलटने

के लिए वे आपस में संगठित न हो सकें और परिणामस्वरूप वे मूल विचार जिनके आधार पर ये प्रस्ताव किए गये थे, मेरे विचार में, समाप्त हो चुके हैं। वर्तमान परिस्थितियों में, मैं व्यक्तिगत रूप से यह कल्पना नहीं कर सकता कि राज्य के लिए अपना प्रशासन चलाना कैसे संभव होगा यदि प्रत्येक व्यक्ति को राज्य की ओर से बिना किसी रुकावट या बाधा के बाजार से हमला करने के सभी प्रकार के हथियार खरीदने का अधिकार मौजूद हो।

श्री एच. वी. कामथ : स्पष्टीकरण की बात पर, महोदय, इस अधिकार पर रोक लगाने हेतु यह परन्तु कहें।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : परन्तुक से क्या होता है? परन्तुक क्या कहता है– परन्तुक केवल विनियमित कर सकता है और शब्द 'नियमन' की न्यायिक व्याख्या शर्तों को निर्धारित करने के रूप मे की गई है लेकिन शर्तें ऐसी कभी नहीं हो सकतीं कि वे नागरिकों के हथियार रखने के अधिकार को पूर्णतया समाप्त कर दें। इसलिए नियमन स्वयं एक नागरिक को हथियार रखने के अधिकार को प्रयोग करने से नहीं रोकेगा जो इस अधिकार का प्रयोग करना चाहता है। मैं सभी नागरिकों को बिना उनमें भेद करते हुए इस प्रकार के मूल अधिकार दिये जाने की नीति का ही विरोध करता हूँ। उदाहरण के लिए, यदि श्रीमान् कामथ का सिद्धांत स्वीकार कर लिया जाता, कि प्रत्येक नागरिक को हथियार रखने का अधिकार होना चाहिए तो उन हजारों–हजार नागरिकों को हथियार रखने की छूट मिल जाएगी जो आज अपराधी समुदाय के नाम से जाने जाते हैं। इस प्रकार के उन सभी लोगों को जो आदतन अपराधी हैं हथियार रखने के अधिकार का दावा करने की छूट मिल जाएगी। आप प्रतिबंध के तहत यह नहीं कह सकते कि अमुक व्यक्ति हथियार रखने का अधिकारी नहीं होगा क्योंकि वह एक अमुक वर्ग से संबंधित है।

श्री एच. वी. कामथ : यदि डॉ. अम्बेडकर परन्तुक को पूरी तरह और स्पष्ट रूप से समझते हैं तो वह देखेंगे कि संशोधन का इस तरह का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं अब नहीं मान सकता। मेरे पास अब अधिक समय नहीं बचा है। मैं उस रूख को स्पष्ट कर रहा हूँ जो प्रारुप समिति द्वारा अपनाया गया है। बात यह है कि इस अविवेकी अधिकार की अनुमति सम्भव नहीं है। दूसरी तरफ, मेरा कहना है, जहाँ तक हथियार रखने का संबंध है, हमें जिसका आग्रह करना चाहिए वह व्यक्ति का हथियार रखने का अधिकार नहीं बल्कि वह उसका हथियार रखने का कर्त्तव्य है। (एक माननीय सदस्य – सुनो सुनो।) वास्तव में हमें यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि जब आपातकालीन स्थिति पैदा होती है, जब युद्ध छिड़ जाता है, जब बगावत हो जाती है, जब राज्य की सुरक्षा और स्थिरता को खतरा पैदा हो जाता है तब राज्य अपने प्रत्येक नागरिक से राज्य की सुरक्षा में हथियार उठाने का आहवान करने का अधिकारी होगा। यही वह सिद्धांत है जिसके लिए हमें पहल करनी चाहिए और इस स्थिति को हमने अनुच्छेद 17 के प्रतिबंध द्वारा पूर्णतया सुरक्षित कर दिया है।

श्री एच. वी. कामथ : (बीच में बोलने के लिए उठे।)

श्रीमान् उपाध्यक्ष : श्रीमान् कामथ, आप टोकें नहीं। आप यह नहीं कह सकते कि मैंने आपको पर्याप्त स्वतंत्रता नहीं दी।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : वैयक्तिक कानून को बचाने के प्रश्न पर आते हुए, मेरे विचार से इस विषय पर पूरी और पर्याप्त चर्चा और बहस उस समय हो चुकी है जब हमने इस संविधान के उस एक निदेशात्मक सिद्धांत पर चर्चा की थी जो राज्य को समान नागरिक संहिता के लिए प्रयत्न करने का आदेश देता है और मेरे विचार से इसको बारे में आगे कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं है, लेकिन मैं इतना कहना चाहूँगा कि, यदि इस प्रकार की कोई बचाव संबंधी धारा संविधान में अंतर्विष्ट की जाती तो यह भारत में विधायिकाओं को कोई किसी भी प्रकार का सामाजिक मापदण्ड अधिनियमित करने में अक्षम बना देती। इस देश में धार्मिक अवधारणायें इतनी व्यापक हैं कि वे, जन्म से लेकर मृत्यु तक, जिन्दगी के प्रत्येक पहलू को शामिल कर लेती हैं। यहाँ ऐसा कुछ भी नहीं है जो धर्म न हो और वैयक्तिक कानून को बचाना है तो मुझे इसका यकीन है कि सामाजिक मामलों में हम ठहराव पर आ जायेंगे। मैं नहीं सोचता कि इस तरह के दृष्टिकोण को स्वीकार करना संभव है। यह कहने में कुछ भी असाधारण नहीं है कि हमें भविष्य में धर्म की परिभाषा को इस तरह से सीमित करने को प्रयत्न करना चाहिए कि हम आस्था तथा ऐसे धार्मिक कृत्यों से आगे न बढ़ें जो तत्वत: धार्मिक हैं। यह आवश्यक नहीं है कि इस प्रकार के कानून जैसे-काश्तकारी से संबंधित कानून या उत्तराधिकार से संबंधित कानून, धर्म द्वारा नियंत्रित किए जाएं। यूरोप में ईसाई धर्म है लेकिन ईसाई धर्म का यह अर्थ नहीं है कि विश्व के सभी ईसाइयों का या यूरोप के किसी भाग में जिसमें वे रहते हैं उन ईसाइयों की उत्तराधिकार के कानून की व्यवस्था एक हो। इस तरह की कोई बात नहीं है। व्यक्तिगत रूप से मुझे समझ नहीं आता कि धर्म को इतना बड़ा विस्तृत न्यायाधिकार किसलिए दिया जाना चाहिए जिससे कि यह जीवन के प्रत्येक पहलू पर निगरानी रखे और विधायिका को इस क्षेत्र का अतिक्रमण करने से रोके। आखिरकार, हम किसलिए यह आजादी ले रहे हैं? हम यह आजादी अपनी उस सामाजिक व्यवस्था को सुधारने के लिए ले रहे हैं जिसमें इतनी अधिक असमानतायें और भेदभाव और इसी तरह की अन्य बातें भरी पड़ी हैं जो हमारे मूलाधिकारों के विरुद्ध हैं। इसलिए किसी के लिए यह सोचना बिल्कुल आसान है कि वैयक्तिक कानून को राज्य के न्यायालय से बाहर रखा जाएगा। ऐसा कहने के बाद, मैं यह भी बताना चाहूँगा कि राज्य उसके मामले में जो कुछ मांग रहा है यह विधि-निर्माण की शक्ति है। राज्य का वैयक्तिक कानूनों को नष्ट करने का कोई दायित्व नहीं है। वह केवल शक्ति दे रहा है। इसलिए, किसी को इस सच्चाई के प्रति संशंकित होने की आवश्यकता नहीं है कि, यदि राज्य के पास शक्ति होगी तो वह उस शक्ति को इस ढंग से अमल में लाने या लागू करने के लिए तुरंत अग्रसर होगा जिसे मुसलमान, ईसाई या भारत का कोई समुदाय आपत्तिजनक हो सकता है।

हम सभी को यह अवश्य याद रखना चाहिए – इसमें मुस्लिम समुदाय के सदस्य भी शामिल हैं, यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति उनकी भावनाओं की कद्र करता है, – कि सम्प्रभुता सदैव सीमित होती है, चाहे आप दावे के साथ ही क्यों न कहें कि यह असीमित होती है, क्योंकि सम्प्रभुता की इस शक्ति के प्रयोग में राज्य को विभिन्न समुदायों की भावनाओं के साथ सामंजस्य बिठाना चाहिए। कोई सरकार इस शक्ति का प्रयोग इस ढंग से नहीं कर सकती जिससे कि मुसलमान विद्रोह करने के लिए भड़क उठें। मेरे विचार से वह एक पागल सरकार ही होगी यदि वह ऐसा करती है। लेकिन यह ऐसा मामला है जो शक्ति के प्रयोग से संबंधित है न कि स्वयं शक्ति से।

अब, महोदय, मेरे मित्र श्रीमान् जसपाल सिंह ने आदिवासियों के बारे में मुझसे कुछ प्रश्न पूछे हैं। मेरे विचार से यह प्रश्न उचित तरीके से उस समय उठाया जा सकता था जब हम पांचवीं और छठवीं अनुसूचियों पर चर्चा कर रहे थे, लेकिन उन्होंने अब इन प्रश्नों को उठा दिया है और जैसा उन्होंने मुझसे विशेषकर उन कठिनाइयों के बारे में स्पष्टीकरण देने के लिए कहा है जो उन्होंने पायीं, मैं मामले पर अब विचार कर रहा हूँ। सदन उस दृष्टिकोण के बारे में अनुभव करेगा जो हमने प्रारुप संविधान में आदिवासियों के बारे में निर्धारित किया है। हमारे पास दो प्रकार के क्षेत्र हैं – अनुसूचित क्षेत्र और जनजातीय क्षेत्र। जनजातीय क्षेत्र ऐसे क्षेत्र हैं जो केवल असम प्रान्त से संबंधित हैं जबकि अनुसूचित क्षेत्र वे क्षेत्र हैं जो असम के अलावा अन्य प्रांतों में छितरे पड़े हैं। उनका वास्तव में भिन्न नाम है जिनके लिए हमने भारतीय सरकार अधिनियम में 'अंशतः बहिष्कृत क्षेत्र' शब्दों का प्रयोग किया है। इससे अधिक कुछ नहीं है। अब, अनुसूचित जनजातियां दोनों ही क्षेत्रों मे निवास करती हैं, अर्थात् अनुसूचित क्षेत्रों में भी तथा जनजातीय क्षेत्रों में भी, और अनुसूचित क्षेत्रों में अनुसूचित जनजातियों की स्थिति तथा जनजाती क्षेत्रों में अनुसूचित जनजातियों की स्थिति के बीच यह अन्तर है – अनुसूचित क्षेत्रों की अनुसूचित जनजातियां पाँचवीं अनुसूची के पैरा 5 में निहित प्रावधानों द्वारा नियंत्रित होती हैं। इस अनुसूची के अनुसार, संसद द्वारा या स्थानीय विधायिका द्वारा पारित साधारण कानून स्वतः ही तब तक लागू होता है जब तक राज्यपाल यह घोषित नहीं करता कि यह कानून या इसका कोई भाग लागू नहीं होगा। जनजातीय क्षेत्रों की अनुसूचित जनजातियों के मामले में, स्थिति थोड़ी भिन्न है। इन क्षेत्रों में संसद द्वारा या असम की स्थानीय विधायिका द्वारा बनाया गया कानून तब तक लागू नहीं होगा जब तक कि राज्यपाल जनजातीय क्षेत्र तक इस कानून की सीमा नहीं बढ़ाता। पहली स्थिति में यह तब तक लागू होता है जब तक यह बहिष्कृत नहीं कर दिया जाता और दूसरी स्थिति में यह तब तक लागू नहीं होता जब तक कि यह बढ़ा नहीं दिया जाता। यह स्थिति है।

अब, अनुसूचित जनजातियों के प्रश्न पर आते हुए, और मैंने 'अनुसूचित' शब्द को 'आदिवासी' शब्द के लिए क्यों प्रतिस्थापित किया, इसका स्पष्टीकरण यह है। जैसा मैने कहा, शब्द अनुसूचित जनजाति का निश्चित अर्थ है क्योंकि यह जनजातियों का विवरण

देता है, जैसा कि आप दोनों अनुसूचियों में देखेंगे। शब्द 'आदिवासी' वास्तव में एक सामान्य शब्द है जिसका कोई विशेष कानूनी अर्थ नहीं है, कुछ "अछूतों" की तरह यह एक सामान्य शब्द है। कोई भी 'अछूत' शब्द में किसी को भी शामिल कर सकता है। इसका कोई निश्चित कानूनी अर्थ नहीं है। इसीलिए भारत सरकार अधिनियम, 1935 में, इसकी आवश्यकता महसूस की गई कि शब्द 'अछूत' को कुछ कानूनी अर्थ दिया जाए और ऐसा करने का जो एकमात्र सम्भाव्य तरीका था वह उन समुदायों का ब्यौरा देना था जो विभिन्न भागों और विभिन्न क्षेत्रों में स्थानीय लोगों द्वारा अस्पृश्यता की परीक्षा में उत्तीर्ण माने जाते हैं। यही प्रश्न 'आदिवासी' के संबंध में उठता है। आदिवासी कौन हैं? और यह प्रश्न प्रासंगिक होगा क्योंकि इस संविधान के द्वारा, हम इन आदिवासियों को विशेष रियायतें, विशेष अधिकार देने जा रहे हैं। यदि इस मामले को कानून की अदालत में ले जाया जाता है तो इसके लिए एक सर्तक परिभाषा होनी चाहिए कि ये आदिवासी कौन हैं, इस उद्‌देश्य हेतु, एक दूसरा शब्द 'अनुसूचित जाति' ईजाद करना तय किया गया और आदिवासियों का इस शीर्षक के तहत ब्यौरा दिया जाना तय किया गया। अब, मेरे विचार से यदि मेरे मित्र श्रीमान् जसपाल सिंह कुछ जातियों को लें जिन्हें अब सामान्यतया आदिवासी कहा जाता है और उन जातियों से इनकी तुलना करें जो अनुसूचित जनजाति के शीर्षक के तहत सूचीबद्ध की गई हैं तो वे मुश्किल से ही ऐसी स्थिति पायेंगे जिसमें एक जाति जिसे सामान्यतया आदिवासी की मान्यता प्राप्त है अनुसूची में सम्मिलित नहीं किया गया है। मेरे विचार से यह सम्भव है, कि जहाँ-तहाँ कोई भूल हो गई हो और कोई जाति जो आदिवासी नहीं है शामिल कर ली गई हो। ऐसा भी हो सकता है कि एक जाति जो वास्तव में एक आदिवासी जाति है शामिल न की गई हो, लेकिन यदि ऐसी कोई स्थिति है जहाँ एक जाति जो अब तक आदिवासी समझी जाती रही है, अनुसूचित जनजातियों की सूची में शामिल नहीं की गई हो, इसके लिए हमने, जैसा कि प्रारुप संविधान में देखा जा सकता है, एक प्रावधान जोड़ा है जिसके तहत स्थानीय सरकार को अधिसूचना द्वारा किसी ऐसी विशेष जाति को अनुसूचित जनजातियों की सूची में जोड़ने की अनुमति होगी जो अब तक सूची मे शामिल नहीं की गई है। मेरे विचार से अब मेरे मित्र श्रीमान् जसपाल सिंह को संतुष्ट हो जाना चाहिए।

उन्होंने मुझसे एक दूसरा यह प्रश्न पूछा था कि यह मानते हुए कि किसी अनुसूचित क्षेत्र में रहने वाला किसी अनुसूचित जनजाति का कोई सदस्य या किसी जनजातीय क्षेत्र में रहने वाला किसी अनुसूचित जनजाति का कोई सदस्य यदि भारत के किसी ऐसे अन्य क्षेत्र में स्थानान्तरण कर जाता है जो अनुसूचित क्षेत्र तथा जनजातीय क्षेत्र दोनो के बाहर है, क्या वह उस स्थानीय सरकार जिसके क्षेत्राधिकार में वह रह रहा है, से उन्हीं विशेष रियायतों का अधिकार जता सकता है जिनका वह तब अधिकारी होता जब वह अनुसूचित क्षेत्र या जनजातीय क्षेत्र के अन्दर रह रहा होता? मेरे लिए इस प्रश्न का उत्तर देना कठिन है। यदि यह मामला उन क्षेत्रों में उभरता है जहाँ इस तरह के मामले पर निर्णय टिका है तो हम निश्चित रूप से इस संविधान की किसी धारा के रूप में इस

प्रश्न का कोई उत्तर दे पायेंगे। लेकिन जहाँ तक वर्तमान संविधान की बात है, अनुसूचित क्षेत्र या जनजातीय क्षेत्र से बाहर जाने वाला किसी अनुसूचित जनजाति का कोई सदस्य अपने साथ उन विशेषाधिकारों और विशेष रियायतों को ले जाने का अधिकारी नहीं होगा जिनका वह तब अधिकारी है जब वह अनुसूचित क्षेत्र या जनजातीय क्षेत्र में रह रहा है। जहाँ तक मैं देख सकता हूँ जनजातीय क्षेत्रों या अनुसूचित क्षेत्रों में लागू होने वाले प्रावधानों को अन्य क्षेत्रों, सिवाय उनके जो इनमें सम्मिलित हैं में व्यावहारिक रूप से लागू करना असम्भव होगा। महोदय, मैं आशा करता हूँ कि मैंने उन सब बातों का उत्तर दे दिया है जो विभिन्न वक्ताओं द्वारा उस समय उठायी गयी थीं जब वे इस धारा में संशोधन पर बोले थे, और मुझे विश्वास है कि मेरे स्पष्टीकरण से वे संतुष्ट हो जाएंगे कि उनकी सभी बातों का जवाब दिया जा चुका है। मैं आशा करता हूँ कि अनुच्छेद, जैसा संशाधित किया गया है, सदन द्वारा स्वीकार कर लिया जायेगा।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं अब उन संशोधनों को एक-एक करके मतदान के लिए रखूँगा जो प्रस्तावित किए गए हैं और जिनकी संख्या 30 है।

[अधोलिखित संशोधन डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्वीकार किए गए और सदन द्वारा अपना लिये गये। शेष 28 संशोधन अस्वीकृत हुए।]

(i) "कि अनुच्छेद 13 की धारा (1) में, शब्दों "इस अनुच्छेद के अन्य प्रावधानों के अधीन" को निकाला जाए।"

(ii) "कि अनुच्छेद 13 की धारा (2) के लिए अधोलिखित को प्रतिस्थापित किया जाए।"

"(2) इस अनुच्छेद की धारा (1) की उपधारा (क) का कोई उपबंध किसी प्रचलित कानून के अमल को जहाँ तक यह इससे संबंधित है, प्रभावित नहीं करेगी अथवा राज्य को अभियोग पत्र, झूठी निन्दा, बदनामी या किसी ऐसे मामले के संबंध में जिससे नैतिकता और शालीनता का उल्लंघन होता है या जो राज्य की सुरक्षा को गुप्त रूप से नष्ट करता है या जो राज्य का तख्ता पलटने की कोशिश करता है, कोई कानून बनाने से नहीं रोकेगी।"

(iii) "कि संशोधनों की सूची के संशोधन नं. 454 के संदर्भ में -

(i) अनुच्छेद 13 की धारा (3), (4), (5) और (6) में, शब्दों "किसी प्रचलित कानून" के बाद शब्द "जहाँ तक यह लागू करता है" अंतर्विष्ट किए जाएं; और

(ii) अनुच्छेद 13 की धारा (6) में, शब्द 'विशेषकर' के बाद शब्द 'उक्त धारा की कोई बात किसी प्रचलित कानून के अमल को जहाँ तक यह निर्धारित करती है या किसी प्राधिकारी को निर्धारित करने की शक्ति देती है प्रभावित नहीं करेगी अथवा राज्य को कोई कानून बनाने से नहीं रोकेगी" सन्निविष्ट किए जाएं।

(iv) "कि अनुच्छेद 13 की धारा (3), (4), (5) और (6) में, शब्द "पाबंदियों" के पहले शब्द "उचित" अन्तर्विष्ट किया जाए।"

(v) "कि अनुच्छेद 13 की धारा (4) में, शब्दों "आम जनता" के लिए शब्द "सार्वजनिक व्यवस्था या नैतिकता" प्रतिस्थापित किए जाएं।"

(vi) "कि अनुच्छेद 13 की धारा (5) में, शब्दों "आदिवासी" के लिए शब्द "अनुसूचित" प्रतिस्थापित किए जाएं।"

[अनुच्छेद 13 को संविधान में जोड़ दिया गया।]

* * * *

अनुच्छेद 14

[*]**श्री टी.टी. कृष्णाचारी (मद्रास - जनरल) :** श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, सदन के समक्ष जो बात मुझे रखनी है वह अपेक्षाकृत संकीर्ण है ....

मैं स्वीकार करता हूँ कि संशोधन प्रस्तावित करने के लिए निश्चय ही मुझे अब देर हो चुकी है। मैं यह चाहता हूँ कि खण्ड में इस प्रकार शब्द विन्यास हो 'किसी भी व्यक्ति पर उसी अपराध के लिए एक से अधिक बार मुकदमा नहीं चलाया जायेगा और न ही उसे दंडित किया जायेगा।' यदि मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर शब्दों 'न ही उसे दंडित किया जायेगा' के पहले शब्दों 'मुकदमा नहीं चलाया जायेगा और' का जोड़ा जाना स्वीकार कर लेते हैं और यदि, महोदय, आप और यह सदन उन्हें ऐसा करने की अनुमति देंगे तो यह न केवल एक बुद्धिमानी होगी बल्कि भविष्य में सरकारों को बहुत बड़ी कठिनाई से बचा लेगी। इस सुझाव को मैं सदन के समक्ष रखने का साहस करता हूँ। सदन, जिस रूप में उचित समझे इस पर विचार करे।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : क्या सदन श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने जो अनुरोध किया है उसकी अनुमति देता है?

माननीय सदस्य : हाँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : अब, मैं डॉ. अम्बेडकर से श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा सुझाये गये संशोधन को प्रस्तावित करने का अनुरोध करूँगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, इस अनुच्छेद के प्रति प्रस्तावित किए गये संशोधनों के संबंध में, मैं कह सकता हूँ कि मैं श्रीमान् टी. टी. कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तावित संशोधन को स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ। वास्तव में संशोधन की आवश्यकता नहीं है लेकिन क्योंकि कुछ संदेह व्यक्त किए गये हैं कि शब्दों 'दण्डित करना' की विभिन्न प्रकार से व्याख्या की जा सकती है, मेरे विचार से, शब्दों "मुकदमा चलाना और दंडित करना" को जोड़ना वांछनीय हो सकता है।

---

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 2 दिसम्बर, 1948, पृ. 795-97

मेरे मित्र श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद द्वारा प्रस्तावित संशोधन नं. 506 और 509 के संबंध में...................

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : यह संख्या 510 है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : जो भी हो, मैंने स्थिति पर कल पूरे दिन विचार किया और मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि इन संशोधनों को स्वीकार करने से कुछ भी भला नहीं होगा। हालाँकि, मैं श्रीमान् करीमुद्दीन द्वारा प्रस्तावित संशोधन सं. 512 को स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ। मेरे विचार से यह एक उपयोगी प्रावधान है और हमारे संविधान में स्थान पा सकता है। इसमें नया कुछ भी नहीं है क्योंकि यह पूरा का पूरा अनुच्छेद जैसा उन्होंने सुझाया है अपराध प्रक्रिया संहिता में है, इसलिए एक तरह से यह कहा जा सकता है कि यह पहले से ही देश का कानून है। यह पूर्णतया सम्भव है कि भविष्य की विधायिकाएँ उनके संशोधन में उल्लिखित प्रावधानों को रद्द कर दें लेकिन जहाँ तक वैयक्तिक स्वतंत्रता का संबंध है ये इतने अधिक महत्वपूर्ण हैं कि इन प्रावधानों को विधायिका की पहुँच से दूर रखना बहुत वांछनीय है और इसलिए मैं उनके संशोधन को स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ।

मेरे मित्र श्रीमान् कक्कड़ द्वारा प्रस्तावित संशोधन नं. 513 के संबंध में ....

एक माननीय सदस्य : यह प्रस्तावित नहीं किया गया।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : संशोधन सं. 505 और 506 के बारे में?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मैं संशोधन से. 506 और 510 को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : क्या संशोधन सं. 505 का भाग 2 जो सूची V के संशोधन सं. 92 द्वारा संशोधित किया गया, के बारे में आपके पास कहने के लिए है? शायद आपने इस पर ध्यान नहीं दिया है। यह पंडित ठाकुरदास भार्गव के नाम में है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं उनके द्वारा प्रस्तावित संशोधन को स्वीकार करता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं संशोधनों को एक-एक करके मतदान के लिए रख रहा हूँ।

संशोधन सं. 505, जैसा सूची V के संशोधन सं. 92 द्वारा संशोधित किया गया, मैं समझता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर ने इसे स्वीकार कर लिया है। प्रश्न है –

"कि अनुच्छेद 14 की धारा (1)में, शब्दों 'नियुक्ति के समय कानून के तहत' के लिए शब्द 'नियुक्ति के समय अमल में कानून के तहत' प्रतिस्थापित किए जाएं।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

[दो संशोधन अस्वीकृत हुए।]

* * * *

श्रीमान् उपाध्यक्ष : श्रीमान् काज़ी सईद करीमुद्दीन द्वारा प्रस्तावित तथा डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्वीकृत संशोधन सं. 512 प्रश्न है – कि अनुच्छेद 14 में, बतौर धारा (4) अधोलिखित को जोड़ा जाए –

"(4) लोगों के अपने व्यक्तिगत स्वरूप, मकानों, कागजातों और प्रभावों के विरुद्ध अनुचित तलाशी और जब्ती से सुरक्षित रहने के अधिकार का उल्लंघन नहीं होगा और कोई भी वारंट संभावित कारण जो शपथ या प्रतिज्ञापन द्वारा समर्थित है और जो तलाशी के स्थान और हिरासत में लिए जाने वाले व्यक्तियों और जब्त की जाने वाली चीजों का ब्यौरेवार उल्लेख करता है के अतिरिक्त जारी नहीं किया जायेगा।"

मैं समझता हूँ कि बहुमत 'हाँ' के पक्ष में है।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी : बहुमत इसके विरोध में है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं इसे पुनः मतदान के लिए रखूँगा। मेरे विचार से इसके पक्ष में बहुमत है।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी : नहीं, महोदय, विरोध पक्ष का बहुमत है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं सबसे पहले हाथ उठाने के लिए कहूँगा।

[विभाजन के लिए घंटी बजाई गई।]

श्री महावीर त्यागी (संयुक्त प्रांत - जनरल) : क्या मैं प्रस्ताव कर सकता हूँ कि इस प्रश्न को फिलहाल स्थगित किया जाए और सदस्यों को आपस में सलाह करने का एक अवसर दिया जाए ताकि वे किसी निर्णय पर पहुँच सकें। ब्रिटेन का हाउस ऑफ कामन्स भी कभी-कभी स्वयं को समिति में रूपान्तरित कर लेता है ताकि विभिन्न पार्टियों को सलाह करने का एक मौका मिल सके और वे एक सर्वसम्मत हल निकाल सकें।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं मतदान स्थगित करने के लिए तैयार हूँ बशर्ते कि सदन मुझे अपेक्षित अनुमति देता हो। मैं सदन से शांत रहने का निवेदन करता हूँ। निर्णयों पर पहुँचने का यह तरीका नहीं है। उन पर सह-प्रयत्नों तथा अच्छी भावना के द्वारा ही पहुँचा जा सकता है। क्या सदन मुझे इस पर मतदान स्थगित करने की आवश्यक शक्ति देता है?

माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरू : श्रीमान् उपाध्यक्ष महोदय, क्योंकि प्रत्यक्ष रूप से बहुत से सदस्यों को इस प्रश्न पर भ्रम हो गया है, मेरे विचार से, महोदय, दिया गया सुझाव अत्यंत वांछनीय है, कि हम इस मामले को थोड़ी देर के बाद ले सकते हैं और हम अभी दूसरी बातों पर चर्चा कर सकते हैं। निश्चय ही, जो इस सदन की इच्छा होगी, वही होगा। महोदय, मैं आपको और सदन को सुझाव दूँगा कि आपका सुझाव मान लिया जाए।

डॉ. बी.वी. केसकर (संयुक्त प्रांत - जनरल) : क्या ऐसा विभाजन की घंटी बज जाने के बाद किया जा सकता है?

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं तकनीकी कारणों में नही जाता। जब तक मैं यहाँ हूँ मैं सामान्य बोध का प्रयोग करता रहूँगा। मुझे तकनीकी कारणों के बारे में बहुत कम ज्ञान है लेकिन मुझे मानव के स्वभाव का कुछ ज्ञान है। मैं जानता हूँ अन्त में अच्छे बोध, सामान्य बोध, अच्छी भावना का ही महत्व होता है। मैं मतदान स्थगित करने के लिए सदन की अनुमति माँगता हूँ।

माननीय सदस्य : हाँ।

अनुच्छेद 16

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :__ श्रीमान् उपाध्यक्ष, श्रीमान् सुब्रह्मण्यम की बात को जैसा मैं समझ पाया हूँ, यदि मैंने उसे सही समझा है तो उन्हें अनुच्छेद 16 पर आपत्ति नहीं है बल्कि उन्हें आपत्ति अनुच्छेद के स्थान को लेकर है। वह होते हैं जहाँ तक इस अनुच्छेद का संबंध है यद्यपि इसकी उपयोगिता और आवश्यकता हो सकती है तथापि इसे मूलाधिकारों में नहीं रखा जाना चाहिए। और उनकी दूसरी बात, यदि मैं सही समझा हूँ तो वह यह है कि चूँकि इस अनुच्छेद को अनुच्छेद 244 के अधीन कर दिया गया है इसलिए अनुच्छेद 16 पूर्णतया रद्द हो सकता है और उनके अपने शब्दों में, इसका कुछ भी शेष नहीं बचेगा यदि अनुच्छेद 244 के तहत दी गई शक्तियों का प्रयोग किया जाता है। मैं सोचता हूँ उन्होंने जो कहा उसको सारबद्ध करके मैंने सही किया है।

अब, मैं इस तर्क की कद्र करता हूँ कि अनुच्छेद 16 मूलाधिकारों की सूची में सही स्थान पर नहीं है और कुछ हद तक मैं श्रीमान् सुब्रह्मण्यम से सहमत हूँ। लेकिन मैं उन्हें स्पष्ट करूँगा कि क्यों इसे मूलाधिकारों में शामिल करने की आवश्यकता हुई? मेरे मित्र श्रीमान् सुब्रह्मण्यम याद करेंगे जब संविधान सभा शुरू हुई थी तब हमने कुछ सीमाओं के तहत शुरूआत की थी। एक सीमा यह थी कि भारतीय राज्य संघ से केवल तीन विषयों के आधार पर जुड़ेंगे – विदेशी मामले, सुरक्षा और संचार। वे किसी अन्य मामले के आधार पर केन्द्रीय संसद को विधि-निर्माण और कार्यकारी न्यायक्षेत्र को आगे बढ़ाने की अनुमति देने पर सहमत नहीं होंगे। इसलिए वे अनुभव करेंगे कि संविधान सभा, और साथ ही प्रारुप समिति भी एक गंभीर सीमा में थी। एक ओर, यह महसूस किया गया कि यदि व्यापार और वाणिज्य सम्पूर्ण भारत में स्वतंत्र नहीं है तो अखिल भारतीय संघ बनाने से कोई लाभ नहीं होगा और न ही इससे कोई उद्देश्य पूरा होगा। यह एक आम विचार था। दूसरी ओर, यह पाया गया कि जहाँ तक राज्यों की स्थिति का संबंध था, जिसके बारे में मैं पहले ही कह चुका हूँ, वे व्यापार और वाणिज्य को सम्पूर्ण भारत में संसद के वैधानिक प्राधिकारी के अधीन करने की अनुमति देने को तैयार नहीं थे। यदि हमारे लिए व्यापार और वाणिज्य को सूची I में शामिल करना सम्भव होता, जिसका अर्थ है कि संसद को सम्पूर्ण भारत में व्यापार और वाणिज्य के संबंध में कानून बनाने का कार्यकारी अधिकार होगा, तो हमारे लिए व्यापार और वाणिज्य को मूलाधिकारों में अनुच्छेद 16 के तहत लाने की आवश्यकता न होती। लेकिन क्योंकि यह रास्ता बन्द हो चुका था, उन बुनियादी सोच विचारों के आधार पर जो संविधान सभा के आरंभ में क्रियाशील थे सम्पूर्ण भारत में व्यापार और वाणिज्य के मामले में समानता के उद्देश्य के लिए, किसी शीर्षक के तहत हमें कोई स्थान खोजना पड़ा। काफी मात्रा में प्रवीणता का प्रयोग करने के बाद हमारे अधिसंख्य लोगों की इस इच्छा

---

* सी.ए.डी., अंक VII, 3 दिसम्बर, 1948, पृ. 802-03

को प्रभावी बनाने के लिए कि व्यापार और वाणिज्य सम्पूर्ण भारत में स्वतंत्र होना चाहिए जो एकमात्र तरीका हमें मिला वह व्यापार और वाणिज्य को मूलाधिकारों के तहत लाने का था। इसी कारण को, चाहे यह बात बेढ़ंगी लगे, हमने सोचा कि व्यापार और वाणिज्य को मूलाधिकारों के तहत लाने के अलावा हमारे पास अन्य कोई रास्ता नहीं है। मेरे विचार से अब मेरे मित्र श्रीमान् सुब्रह्मण्यम की सूची में यह स्थान क्यों दिया यद्यपि, सैद्धांतिक रूप से, मैं मानता हूँ कि यह विषय मूलाधिकारों की विषय-वस्तु के सुसंगत नहीं है।

दूसरे तर्क के संबंध में, कि जब व्यापार और वाणिज्य अनुच्छेद 244 के अधीन कर दिये गये हैं, हमने वास्तव में मूलाधिकार को नष्ट कर दिया है, मेरे विचार से, मैं निष्पक्ष रूप से कह सकता हूँ कि मेरे मित्र श्रीमान् सुब्रह्मण्यम ने या तो अनुच्छेद 244 पढ़ा नहीं है या फिर उसे गलत पढ़ा है। अनुच्छेद 244 का कार्यक्षेत्र बहुत सीमित है। यह केवल इतना करता है कि प्रांतीय विधायिकाओं को अन्तर्राज्जीय वाणिज्य और व्यापार के संबंध में शक्तियां देता है, एक दूसरे राज्य से वाहित या निर्मित वस्तुओं के प्रवेश पर निश्चित पाबन्दियां लगाता है, बशर्ते कि विधि-निर्माण इस प्रकार का है कि यह राज्य के भीतर निर्मित वस्तुओं और राज्य के बाहर से आयातित वस्तुओं में कोई असमानता या भेदभाव नहीं थोपता। अब मुझे विश्वास है कि वह सहमत होंगे कि यह बहुत ही सीमित कानून है। यह निश्चय ही व्यापार और वाणिज्य का और सम्पूर्ण भारत में परस्पर व्यवहार का अधिकार जिसको स्वतंत्रता की आवश्यकता है, नहीं छीनता है।

श्री सी. सुब्रह्मण्यम : धारा कहती है कि किसी राज्य के लिए व्यापार, वाणिज्य या परस्पर व्यवहार की स्वतंत्रता पर कानून द्वारा ऐसी उचित पाबंदिया लगाना जो सार्वजनिक हितों में हो सकती हैं कानून सम्मत होगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : हाँ, लेकिन उचित पाबंदियों का यह अर्थ नहीं है कि पाबंदियां व्यापार की स्वतंत्रता और समानता को पूर्णतया नष्ट करने वाली हों। इसका यह बिल्कुल भी अर्थ नहीं है। महोदय, इसलिए मैं कहता हूँ कि अनुच्छेद अपने वर्तमान रूप में पूर्णतया उचित है और मैं इसे सदन में प्रस्तुत करता हूँ।

अनुच्छेद 16 स्वीकृत हुआ और संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 17

*[*]**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** अब हम अनुच्छेद 17 पर आते हैं।

सदन के समक्ष प्रस्ताव यह है कि अनच्छेद 17 संविधान का हिस्सा बन गया है।

इस अनुच्छेद के प्रति कई संशोधन हैं जिन पर अब हम विचार करेंगे। मेरी सूची में पहला संशोधन 543 है। यह नकारात्मक है, इसलिए यह निकाला जाता है।

---

* सी.ए.डी., अंक VII, 3 दिसम्बर, 1948, पृ. 803

इस संशोधन में एक संशोधन है, यह सूची में नं. 93 श्री रामचन्द्र उपाध्याय के नाम में है।

(श्री कामथ द्वारा व्यवधान)

* * * *

#**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** श्रीमान् उपाध्यक्ष, मुझे शुरू में ही कह देना चाहिए कि कौन से संशोधनों को मैं स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ और कौन से संशोधनों को मैं स्वीकार नही कर सकता। प्रस्तावित किए गये संशोधनों में से मैं केवल प्रो. के.टी. शाह का संशोधन सं. 559 स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ जो अनुच्छेद 17 की धारा (2) में शब्दों 'भेदभाव इस आधार पर' के स्थान पर शब्दों 'भेदभाव केवल इस आधार पर' को प्रतिस्थापित करता है। शेष संशोधनों को, मैं स्वीकार करने की स्थिति में नही हूँ।

उन संशोधनों के संबंध में, जिन्हें जैसा मैने कहा मैं स्वीकार नहीं कर सकता उनमें से एक प्रो. के.टी. शाह का शब्द 'देवदासी' अंतर्विष्ट करने वाला संशोधन है। अब मैं समझता हूँ कि 'देवदासी' को शामिल करने के संबंध में उनके तर्कों का उन अन्य सदस्यों द्वारा उत्तर दिया जा चुका है जिन्होंने बहस में भाग लिया है और मैं नहीं सोचता कि उन तर्कों में मेरे द्वारा कुछ जोड़ने से कोई उपयोगी लक्ष्य प्राप्त होगा जिन पर पहले ही बल दिया जा चुका है।

मेरे माननीय मित्र, श्रीमान् एच.बी. कामथ के उस संशोधन के संबंध में, वे शब्द 'जनता' के स्थान पर शब्द 'सामाजिक और राष्ट्रीय' चाहते हैं। मैंने सोचा होगा कि शब्द 'जनता' काफी विस्तृत है जो राष्ट्रीय और सामाजिक दोनों ही शब्दों को शामिल कर लेता है और इसलिए दो शब्दों का प्रयोग करना अनावश्यक है जब एक शब्द के प्रयोग से ही उद्देश्य पूरा हो सकता है और मेरे विचार से अब यह सहमत होंगे कि यही रुख अपनाना उचित है।

मेरे मित्र दामोदर स्वरूप सेठ के संशोधन के संबंध में मुझे यह संशोधन अनावश्यक प्रतीत होता है और इसलिए मैं इसे स्वीकार नही करता। सरदार भूपिन्दर सिंह मान का संशोधन जिसमें वे चाहते हैं कि जहाँ कहीं भी राज्य द्वारा अनुच्छेद 17 की धारा (2) के प्रावधानों के तहत अनिवार्य श्रम लागू किया गया है वहाँ एक प्रतिबंध रखा जाना चाहिए कि इस प्रकार के श्रम का राज्य द्वारा सदैव दाम चुकाया जायेगा। अब, मैं नहीं सोचता कि राज्य के प्राधिकार पर जो अनिवार्य सेवा मांग रहा है उस पर इस तरह की कोई पाबंदी लगाना वांछनीय है। यह बिल्कुल सम्भव हो सकता है कि राज्य द्वारा मांगी गई अनिवार्य सेवा को ऐसे घंटों तक सीमित किया जाए कि यह उस नागरिक को अपनी जीविकोपार्जन के लिए समय निकाल पाने से वंचित न करे जिस पर यह धारा लागू होती है और यदि उदाहरण के लिए, यह अनिवार्य सेवा अवकाश के घंटों तक सीमित कर दी जाती है जब वह अपनी जीविका कमाने में व्यस्त नहीं है तब राज्य के लिए यह कहना पूर्णतया न्यायसंगत होगा कि वह कोई मुआवजा नहीं देगा।

सी.ए.डी., अंक VII, 3 दिसम्बर, 1948, पृ. 812-13

इस धारा में यह देखा जा सकता है कि मुआवजे का भुगतान न करना हमले का आधार नहीं हो सकता, क्योंकि उपधारा (2) में प्रतिवादित मूलभूत सिद्धांत यह है - कि जब कभी भी अनिवार्य श्रम या अनिवार्य सेवा की मांग की जाएगी तो यह सभी से मांगी जाएगी और यदि सभी से सेवायें मांगी जाती हैं और कुछ भी दाम नहीं चुकाता है तो मैं नहीं समझता राज्य कोई भारी अन्याय कर रहा है। महोदय, मैं महसूस करता हूँ कि निश्चित को ऐसे ही अनिश्चित छोड़ दिया जाए जैसी यह अनुच्छेद के वर्तमान रूप में छोड़ दी गई है।

श्री एच.बी. कामथ : महोदय, क्या मेरे संशोधन पर सूचना के प्रश्न पर डॉ. अम्बेडकर की आपत्ति केवल इस आधार पर है कि यह एक शब्द के स्थान पर दो शब्दों से मिलकर बना है? उस स्थिति में, मैं खुश होऊँगा यदि शब्द रचना 'जनता' के स्थान पर या तो 'सामाजिक' या 'राष्ट्रीय' हो।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : एक विस्तृत वाक्य-रचना जिसमें ये दोनों शामिल हैं, का प्रयोग करना बेहतर है।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी (असम -जनरल) : महोदय क्या मैं जान सकता हूँ कि क्या माननीय सदस्य संशोधन सं. 548 को स्वीकार करते हैं जो वेश्यावृति से संबंधित है, और जो ज्ञानी गुरुमुख सिंह मुसाफिर द्वारा प्रस्तावित किया गया है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं समझता हूँ कि यह प्रस्तावित नहीं किया गया।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : यह प्रस्तावित नहीं किया गया।

मैं अब संशोधनों को एक-एक करके मतदान के लिए रखूँगा।

श्रीमान् काज़ी सईद करीमुद्दीन का संशोधन 544 अस्वीकृत हुआ।

श्रीमान् दामोदर स्वरूप सेठ का संशोधन सं. 545 अस्वीकृत हुआ।

प्रो. के.टी. शाह का संशोधन सं. 546 अस्वीकृत हुआ।

सरदार भूपिन्दर सिंह मान का संशोधन सं. 560 वापस ले लिया गया।

[श्रीमान् कामथ का संशोधन सं. 556 अस्वीकत हुआ।]

संशोधन सं. 559 जो प्रो. के.टी. शाह के नाम में है, डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्वीकार कर लिया गया और यह स्वीकृत हुआ।

"कि अनुच्छेद 17 की धारा (2) में, शब्दों 'भेदभाव इस आधार पर' के लिए शब्दों 'भेदभाव केवल इस आधार पर' को प्रतिस्थापित किया जाए।"

अनुच्छेद 17 यथासंशोधित स्वीकृत हुआ और संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 18

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :__ मैं श्रीमान् दामोदर स्वरूप सेठ द्वारा प्रस्तावित संशोधन नं. 564 को स्वीकार नहीं करता।

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 16 स्वीकृत हुआ और संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 19

#**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** संशोधन सं. 596, डॉ. अम्बेडकर।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) : महोदय, मैं प्रस्ताव करने की प्रार्थना करता हूँ–

"कि अनुच्छेद 19 की धारा (2) में, शब्द 'प्रतिबाधित करना' के लिए शब्द 'रोकना' प्रतिस्थापित किया जाए।"

हमने अन्य अनुच्छेदों में जिस भाषा का उपयोग किया है उसी के अनुरूप भाषा में एकरूपता बनाये रखने के उद्देश्य से ऐसा किया गया है।

* * * *

♥**माननीय श्री के. सन्थानम :** महोदय, हमने एक निदेश स्वीकार किया है जिसमें हमने राज्य को एक समान नागरिक संहिता बनाने का प्रयास करने को कहा है और यह विशेष संशोधन उस निदेश का सीधा-सीधा प्रतिवाद है। उस आधार पर भी, मैं सोचता हूँ कि यह इस संबंध में पूर्णतया अनुपयुक्त है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : डॉ. अम्बेडकर, क्या आप इस मामले में कुछ कहना चाहेंगे? श्रीमान् सन्थानम द्वारा समाने रखे गये तर्कों के आधार पर इस संशोधन के उचित होने या न होने के बारे में मैं आपकी राय जानना चाहता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मैं श्रीमान् रंगा के साथ किसी दूसरे संशोधन पर चर्चा कर रहा था और इसलिए ....

माननीय श्री के. सन्थानम : वैयक्तिक कानून के बारे में संशोधन संख्या 612 प्रस्तावित किया जाना है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : इस मुद्दे को पहले ही निपटाया जा चुका है जब हमने निदेशात्मक सिद्धांतों पर चर्चा की थी, और तब भी जब हमने उस दिन एक अन्य संशोधन पर चर्चा की थी।

---

* सी.ए.डी., अंक VII, 3 दिसम्बर, 1948, पृ. 815

\# सी.ए.डी., अंक VII, 3 दिसम्बर, 1948, पृ. 826

♥ वही, पृ. 629-30

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मेरे पास सूची में 15 संशोधन हैं जिनमें से अधिकतर सदन में प्रस्तावित किए जा चुके हैं। मेरे विचार से, विभिन्न कोणों से इस विशेष अनुच्छेद पर विचार रखे गये हैं। हमारे पास सात और आठ वक्ता थे जिन्होंने अपने विचार व्यक्त किए। मेरे विचार से इस अनुच्छेद पर पर्याप्त बहस हो चुकी है। मैं डॉ. अम्बेडकर से उत्तर देने का अनुरोध करता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान् उपाध्यक्ष महोदय, मैं उन वक्ताओं के विचारों में कुछ नहीं जोड़ सकता जो इस अनुच्छेद के समर्थन में बोले हैं। मैं जो कहना चाहता हूँ वह यह है कि एकमात्र संशोधन जिसे मैं स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ वह संशोधन सं. 609 है।

श्री एच.बी. कामथ : क्या मैं पूछ सकता हूँ कि क्या यह पर्याप्त होगा यदि डॉ. अम्बेडकर कहते हैं – "मैं विरोध करता हूँ, मेरे पास कहने के लिए कुछ भी नहीं है"? मेरे विचार से सदन के भले के लिए उन्हें संशोधनों में उठाये गये मुद्दों और बहस के दौरान उठे मुद्दे का उत्तर देना चाहिए।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : यदि मैं गलत नही हूँ, तो हम विभिन्न संशोधनों को अस्वीकार करने के कारणों को बताने के लिए डॉ. अम्बेडकर को मजबूर नहीं कर सकते।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद (प. बंगाल – मुसलमान) : श्रीमान् उपाध्यक्ष महोदय, क्या मैं कह सकता हूँ कि संशोधन सं. 609 जो डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्वीकार कर लिया गया है, मात्र एक शाब्दिक संशोधन है?

श्रीमान् उपाध्यक्ष : यह कार्यवाहियों में दर्ज किया जाएगा। अब हम एक के बाद एक संशोधन पर विचार करेंगे।

[अधोलिखित संशोधन डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्वीकार कर लिया गया और सदन द्वारा स्वीकृत हुआ। सब मिलाकर 12 संशोधन अस्वीकृत हुए और एक वापस ले लिया गया।]

"कि अनुच्छेद 19 की धारा (2) में, शब्दों 'प्रतिबाधित करना' को शब्द 'रोकना' से प्रतिस्थापित किया जाए।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

* * * *

***श्रीमान् उपाध्यक्ष :** प्रश्न है–

"कि अनुच्छेद 19 की धारा (2) की उपधारा (ख) में शब्दों "किसी वर्ग या प्रवर्ग" के लिए शब्दों "सभी वर्ग या प्रवर्ग" को प्रतिस्थापित किया जाए।"

क्या आपने इसे स्वीकार कर लिया है, डॉ. अम्बेडकर?

---

* सी.ए.डी., अंक VII, 3 दिसम्बर, 1948, पृ. 836

* सी.ए.डी., अंक VII, 6 दिसम्बर, 1948, पृ. 839

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर – हाँ, महोदय।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : डॉ. अम्बेडकर ने संशोधन स्वीकार कर लिया है।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

[अनुच्छेद 19 संशोधन सं. 596 और 609 यथासंशोधित रूप मे स्वीकृत हुआ और संविधान में जोड़ दिया गया।]

अनुच्छेद 14 (क्रमागत)

#**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** हम अनुच्छेद 14 पर वापस जाएंगे। जहाँ तक मुझे याद है – मुझे खेद है, मैंने अपने नोट गलत जगह रख दिए हैं – अनुच्छेद 14 के प्रति कई संशोधन थे, जो एक के बाद एक मतदान के लिए रखे गये थे और केवल दो संशोधनों पर ही विचार हो पाया था जब उन कारणों से जिन्हें सदन पहले ही जानता है, इन पर विचार स्थगित कर दिया गया था। एक काज़ी करीमुद्दीन द्वारा प्रस्तावित संशोधन सं. 512 था और दूसरा एक सुझाव था जो श्रीमान् टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा दिया गया था? श्रीमान् टी.टी. कृष्णाचारी क्या आप कृपया करके मुझे समझाएंगे? क्या यह एक सुझाव भर था या यह एक अल्प सूचना संशोधन था?

श्रीमान् टी.टी. कृष्णमाचारी : यह एक अल्पसूचना आधारित संशोधन था।

श्रीमान् उपाध्यक्ष – यह एक अल्पसूचना संशोधन था जिसे मैंने स्वीकार कर लिया था। केवल यही दो संशोधन मतदान के लिए रखे जाने के लिए बचे थे।

* * * *

♣**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** हम श्रीमान् कृष्णमाचारी के संशोधन पर आते हैं जिसे डॉ. अम्बेडकर ने स्वीकार कर लिया था।

श्री एच.बी. कामथ : क्या हर बार यह कहना आवश्यक है कि डॉ. अम्बेडकर ने स्वीकार कर लिया है या अस्वीकार कर दिया है?

श्रीमान् उपाध्यक्ष – कभी-कभी यह कहना आवश्यक है। हमेशा नहीं। मैं अब संशोधन को मतदान के लिए रखता हूँ।

प्रश्न है –

"कि अनुच्छेद 14 की धारा (2) में शब्द 'शैल बी' के बाद शब्द 'प्रोसिक्युटेड' अन्तर्विष्ट किए जाएं।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 14, यथासंशोधित रूप में संविधान में जोड़ दिया गया।

वही, पृष्ठ 840

♣ सी.ए.डी., अंक VII, 6 दिसम्बर, 1948, पृ. 842

अनुच्छेद 15 (क्रमागत)

*[*]**श्रीमान् उपाध्यक्ष (डॉ. एच.सी. मुखर्जी) :** अब हम अनुच्छेद 15 पर आम चर्चा फिर से शुरू कर सकते हैं।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) : महोदय, क्या मैं आपसे निवेदन कर सकता हूँ कि इस मामले को थोड़ी देर के लिए स्थगित किया जाए?

श्रीमान् उपाध्यक्ष : क्या सदन की यही इच्छा है?

माननीय सदस्य : हाँ।

अनुच्छेद 20

श्रीमान् उपाध्यक्ष : तब हम अगले अनुच्छेद पर आते हैं अर्थात् अनुच्छेद 20 पर।

सदन के समक्ष प्रस्ताव है–

"कि अनुच्छेद 20 संविधान का हिस्सा बन गया है।"

मेरे पास संशोधनों की एक श्रृंखला है जिसे मैं पढ़ूंगा। संशोधन सं. 613 की अनुमति नहीं है क्योंकि यह नकारात्मक प्रभाव वाला है। सं. 614 और सं. 618 लगभग एक जैसे हैं, सं. 614 प्रस्तावित किया जा सकता है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ –

"कि अनुच्छेद 20 में शब्द "सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य के अधीन" अन्तर्विष्ट किए जाएं।"

महोदय, यह मात्र एक त्रुटि थी। माननीय सदस्य देखेंगे कि ये शब्द अनुच्छेद 19 को भी नियंत्रित करते हैं, सच्चाई के तौर पर इन्हें अनुच्छेद 20 को भी नियंत्रित करना चाहिए था क्योंकि धर्म से संबंधित इन मामलों में पूर्ण अधिकार देने का उद्देश्य नहीं है। राज्य इन सभी संस्थाओं और इनके कार्यकलापों को नियमित करने का अधिकार अपने पास सुरक्षित रख सकता है जब कभी भी सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता या स्वास्थ्य को इसकी आवश्यकता होती है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : यदि अनुच्छेद सं. 616 पर जोर दिया जाता है तो मैं इसको मतदान के लिए रख सकता हूँ। क्या किसी सदस्य को इस मामले में कुछ कहना है?

* * * *

[संशोधन सं. 616 प्रस्तावित नहीं किया गया।]

---

[*] सी.ए.डी., अंक VIII, दिसम्बर, 1948, पृष्ठ 859

#**श्रीमान् तजामुल हुसैन** –

"प्रत्येक धर्म सम्प्रदाय या इसके किसी भाग को (अ) धार्मिक और पुण्यार्थ उद्देश्यों के लिए संस्थानों को स्थापित करने और चलाने का अधिकार होगा;"

ठीक यही शब्द अनुच्छेद में है। मैं इन शब्दों को वही बनाये रखना चाहता हूँ जहाँ ये हैं। मैं नहीं चाहता कि इन्हें निकाल दिया जाए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मुझे कुछ नहीं कहना है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं अब संशोधनों को एक-एक करके मतदान के लिए रखूँगा।

प्रश्न है-

"कि अनुच्छेद 20 में शब्दों ''सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य के अधीन" को अन्तर्विष्ट किया जाए।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

[अन्य चार संशोधन अस्वीकृत हुए।]

अनुच्छेद 20, यथासंशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

नया अनुच्छेद 20-क

♦**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** मैं संशोधन सं. 632 या 633 को स्वीकार नहीं करता।

श्री एच.जे. खाण्डेकर (सी.पी. और बेरार - जनरल) : महोदय, मैं बोलना चाहता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मुझे खेद है कि अब बहुत देर हो चुकी है। मैं अब संशोधनों को मतदान के लिए रखूँगा।

[अधोलिखित दोनों संशोधन अस्वीकृत हुए।]

(1) "कि अनुच्छेद 21 में, शब्द, 'जो के बाद शब्द पूर्णतः या अंशत' को अन्तर्विष्ट किया जाएं।"

(2) "कि अनुच्छेद 21 में शब्दों "दि प्रोसीड्स ऑफ व्हिच आर" के लिए शब्दों "आन एनी इनकम व्हिच इज" को प्रतिस्थापित किया जाए।"

अनुच्छेद 21 संविधान में जोड़ दिया गया।

#सी.ए.डी., अंक VII, 7 दिसम्बर, 1948, पृ. 863

♦सी.ए.डी., अंक VII, 7 दिसम्बर, 1948, पृ. 866

अनुच्छेद 22

[*]**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** डॉ. अम्बेडकर के नाम में, संशोधन सं. 645।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर – महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ –

"कि अनुच्छेद 22 की धारा (1) में, शब्द "राज्य के द्वारा" निकाल दिये जाएं।"

इस संशोधन का उद्देश्य उस संदेह की सम्भावना को दूर करना है जो उत्पन्न हो सकता है। यदि शब्द "राज्य के द्वारा" प्रारुप में बने रहते हैं जैसे कि ये अभी हैं तो उनका यह अर्थ लगाया जा सकता है कि यह अनुच्छेद राज्य के अलावा अन्य संस्थानों को धार्मिक शिक्षण देने की अनुमति देता है। इस अनुच्छेद के मूल में जो सिद्धांत है वह यह है कि कोई भी संस्थान जो पूर्णतया या अंशतः राज्य कोष द्वारा सम्पोषित है धार्मिक शिक्षण के उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जायेगा। इस बात को महत्व दिये बिना कि धार्मिक शिक्षण राज्य द्वारा दिया जा रहा है या किसी अन्य निकाय द्वारा।

* * * *

[#]**श्रीमान् उपाध्यक्ष :** हालाँकि मैं अन्य सदस्यों को भी अवसर देना पसंद करूंगा, जिनकी राय का मैं सम्मान करता हूँ लेकिन मैं पाता हूँ कि कई वक्ता पहले ही अपनी राय व्यक्त कर चुके हैं। 12 संशोधन मतदान के लिए रखे जाने हैं। नौ संशोधन पहले ही प्रस्तावित किए जा चुके हैं और मेरे विचार से छह वक्ता पहले ही बोल चुके हैं। मैं महसूस करता हूँ कि इस अनुच्छेद पर पर्याप्त चर्चा हो चुकी है। अब मैं डॉ. अम्बेडकर से बोलने का अनुरोध करता हूँ।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रा (प. बंगाल – जनरल) : महोदय, मैं चाहता हूँ कि एक या दो बातों को स्पष्ट किया जाए। मैं भाषण देने नहीं जा रहा हूँ। मैं केवल चाहता हूँ कि एक या दो बातों को स्पष्ट कर दिया जाए।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं अपना फैसला पहले ही सुना चुका हूँ। मैं और भाषणों की अनुमति नहीं दे सकता, विशेषकर क्योंकि आप और मैं एक ही प्रांत से हैं।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रा – एक ही प्रांत का होने से यहाँ कोई संबंध नही है। मैं केवल एक बात के बारे में स्पष्टीकरण चाहता हूँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मेरा निर्णय अन्तिम है, पंडित जी। डॉ. अम्बेडकर।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, प्रस्तावित किए गये संशोधनों में से केवल श्रीमान् कपूर द्वारा प्रस्तावित संशोधन सं. 661 को स्वीकार कर सकता हूँ जो अनुच्छेद में से उपधारा (3) को निकालता है और मुझे खेद है कि मैं अन्य संशोधनों को स्वीकार नहीं कर सकता।

---

[*] वही, पृष्ठ 871

#सी.ए.डी., अंक VII, 7 दिसम्बर, 1948 पृ. 882-86

शायद उन विचारों की बहुलता की दृष्टि से इस अनुच्छेद के उद्देश्य को विस्तार से समझाना वांछनीय है जो सदन में व्यक्त किए गए हैं। विभिन्न संशोधन जो प्रस्तावित किए गये हैं उनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि तीन विभिन्न दृष्टिकोण हैं। एक दृष्टिकोण मेरे मित्र श्रीमान् इस्माइल का है जो मद्रास से हैं। उनकी राय में धार्मिक शिक्षण दिये जाने पर कोई प्रतिबंध नहीं होना चाहिए। जिस एकमात्र प्रतिबंध के वह पक्षधर हैं वह है कि किसी को इसे ग्रहण करने के लिए बाध्य नहीं किया जाना चाहिए।

यदि मैंने उन्हें सही समझा है तो यही वह विचार है जिसके वह पक्षधर हैं। एक और दृष्टिकोण है जिसका प्रतिनिधित्व मेरे मित्र श्रीमान् मान और श्रीमान् तजामुल हुसैन करते हैं। उनके अनुसार, धार्मिक शिक्षण बिल्कुल भी नहीं होना चाहिए, ऐसे संस्थानों में भी नहीं जो शैक्षणिक हैं। उसके बाद तीसरा दृष्टिकोण है और वह प्रो. के.टी. शाह द्वारा व्यक्त किया गया है। वह कहते हैं कि न केवल उन संस्थानों में जो पूर्णतया राज्यकोष द्वारा सम्पोषित हैं बल्कि ऐसे शैक्षणिक संस्थानों में भी जो आंशिक रूप से राज्यकोष द्वारा सम्पोषित हैं, किसी प्रकार के धार्मिक शिक्षण की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

अब मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि प्रारुप जैसा यह है कि मध्य मार्ग अपनाता है, जो मैं आशा करता हूँ, सदन को स्वीकार्य होगा। मेरे विचार से तीन कारण हैं जो श्रीमान् इस्माइल के इस विचार को स्वीकार करने का विरोध करते हैं कि धार्मिक शिक्षण पर कोई प्रतिबंध नहीं होना चाहिए, बल्कि धार्मिक शिक्षण उपलब्ध कराया जाना चाहिए; और मैं इन कारणों का संक्षेप में उल्लेख करूँगा।

पहला कारण चह है कि हमने अनुच्छेद 21 में निहित यह सिद्धांत स्वीकार कर लिया है कि करों द्वारा अर्जित कोष को किसी विशेष समुदाय के लाभार्थ प्रयोग में नही लाया जाएगा। उदाहरण के लिए, यदि हम किसी विशेष धार्मिक शिक्षण की अनुमति देते हैं, यदि एक स्थानीय या जिला बोर्ड द्वारा स्थापित कोई विद्यालय इस आधार पर धार्मिक शिक्षण देता है कि उसमें पढ़ने वाले बहुसंख्यक विद्यार्थी हिन्दू हैं तो इसका प्रभाव यह होगा कि इस प्रकार का कृत्य अनुच्छेद 21 के प्रावधानों के विपरीत होगा। जिला बोर्ड अपने क्षेत्र में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति से कर वसूल रहा होगा। यह एक आम कर होगा और यदि दिये जाने वाला धार्मिक शिक्षण बहुसंख्यक समुदाय के बच्चों तक सीमित हैं तो यह अनुच्छेद 21 का दुरुपयोग होगा, क्योंकि मुस्लिम समुदाय के बच्चे या किसी अन्य समुदाय के बच्चे जो इस धार्मिक शिक्षण को ग्रहण करने की परवाह नहीं करते फिर भी वे स्थानीय जिला बोर्ड के कृत्य से स्थानीय बोर्ड कोष में योगदान करने के लिए मजबूर होंगे।

दूसरी कठिनाई पहली से अधिक वास्तविक है, यथा, हमारे देश में धर्मों की बहुलता है। उदाहरण के लिए, एक शहर बम्बई लें जिसमें विभिन्न पंथों में विश्वास रखने वाली विविध प्रकार की जनसंख्या है। मान लें, इस शहर में नगरपालिका द्वारा सम्पोषित एक

विद्यालय है। स्पष्टतया, ऐसे विद्यालय में हिन्दू धर्म में विश्वास रखने वाले हिन्दुओं के बच्चे होंगे, इसमें ईसाई समुदाय, यहूदी समुदाय या जरतुश्ती समुदाय से संबंधित शिष्य भी होंगे। यदि कोई और आगे जाये, और मेरे विचार से, हमें इससे आगे जाना चाहिए, तो हिन्दू फिर विभिन्न किस्मों मे बँटे मिलेंगे; वहाँ सनातनी हिन्दू होंगे, वैदिक धर्म में विश्वास रखने वाले वैदिक हिन्दू होंगे, वहाँ बौद्ध होंगे, वहाँ जैन होंगे, – हिन्दुओं में भी शैव होंगे, वैष्णव होंगे। क्या शैक्षणिक संस्थानों से सभी बच्चों के साथ समान व्यवहार करने की और सभी समुदायों में धार्मिक शिक्षण उपलब्ध कराने की अपेक्षा की जानी चाहिए? मुझे यह लगता है कि राज्य को यह काम सौंपना उससे असम्भव को करने के लिए कहने जैसा होगा।

तीसरी बात जिसका मैं इस संबंध में उल्लेख करना चाहूँगा वह है कि दुर्भाग्य से जो धर्म इस देश में प्रचलित हैं वे मात्र असामाजिक ही नहीं हैं; जहाँ तक उनके परस्पर संबंधों की बात है वे समाज–विरोधी भी है; प्रत्येक धर्म यह दावा करता है कि केवल उसकी शिक्षायें ही मुक्ति का सही रास्ता है, और अन्य सभी धर्म गलत हैं। मुसलमान विश्वास करते हैं कि कोई भी व्यक्ति जो इस्लाम के सिद्धांत में विश्वास नहीं रखता वह काफिर है जिसे मुसलमानों से भ्रातृतुल्य व्यवहार का हक नहीं है। ईसाइयों का भी ऐसा ही विश्वास है। इस दृष्टिकोण से मुझे यह लगता है कि हम एक संस्थान के शांतिपूर्ण वातावरण में बहुत अधिक हलचल पैदा कर देंगे यदि किसी विशेष धर्म के सच्च चरित्र और किसी अन्य धर्म के गलत चरित्र के जैसे विवाद विद्यालय में ही साथ–साथ ला देते हैं। इसलिए मैं कहता हूँ कि अनुच्छेद 22(1) को निर्धारित करने के साथ कि राज्य के संस्थानों में धार्मिक शिक्षण नहीं दिया जाएगा, मेरे विचार से हमने एक पूर्णतया सुरक्षित रास्ता तय कर लिया है।

अब, दूसरी धारा के संबंध में, मेरे विचार से इसे पर्याप्त रूप से नहीं समझा गया है। हमने एक ऐसे समुदाय के इस दावे के साथ सामंजस्य स्थापित करने की कोशिश की है जिसने अपने स्वयं के बच्चों की शिक्षा या सांस्कृतिक मामलों में उन्नति के लिए शैक्षणिक संस्थानों को शुरू किया है कि वह इस सच्चाई में धार्मिक शिक्षण देने की अनुमति देता है। राज्य, निस्संदेह, सहायता देने, न देने के लिए स्वतंत्र है; मात्र एक पाबंदी जो हमने रखी है वह है, कि राज्य ऐसे संस्थानों को सहायता के हक से मात्र इस आधार पर वंचित नहीं कर सकता कि वे एक समुदाय द्वारा सम्पोषित हैं, न कि एक सार्वजनिक निकाय द्वारा। हमने आगे भी एक योग्यता का प्रावधान किया है, कि जबकि संस्थान में धार्मिक शिक्षण दिये जाने की स्वतंत्रता है और राज्य द्वारा दिया गया अनुदान इस प्रकार के शिक्षण दिये जाने पर प्रतिबंध नहीं होगा, तब भी यह अन्य सुमदायों के बच्चों को यह शिक्षण नहीं देगा और न ही यह उनके लिए अनिवार्य करेगा जब तक कि ये संस्थान उन बच्चों के अभिभावकों की स्वीकृति प्राप्त नहीं कर लेते। यह, मेरे विचार से, एक हितकारी प्रावधान है यह दो कार्य करता है ....

श्री एच.बी. कामथ : स्पष्टीकरण की बात पर, किसी एक समुदाय या एक अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा अपने स्वयं के शिष्यों के लिए चलाये जाने वाले विद्यालय

के बारे में – ऐसा विद्यालय नहीं जहाँ सभी समुदाय मिले-जुले हैं, बल्कि ऐसे विद्यालय के बारे में जो उस समुदाय द्वारा अपने स्वयं के शिष्यों के लिए चलाया जाता है?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यदि मेरे मित्र श्रीमान् कामथ दूसरा अनुच्छेद पढ़ेंगे तो वह देखेंगे कि जब एक बार एक संस्थान को चाहे वह समुदाय द्वारा सम्पोषित है या नहीं, अनुदान मिलता है तो उसकी शर्त यह है कि वह विद्यालय को सभी समुदायों के लिए खुला रखेगा। वह प्रावधान उन्होंने नहीं पढ़ा है।

इसलिए उपधारा (2) के द्वारा हम वास्तव में दो उद्देश्यों को प्राप्त कर रहे हैं। एक यह कि हम उस एक समुदाय को विद्यालय में इस प्रकार का शिक्षण देने की अनुमति दे रहे हैं जिसने अपनी धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन की तरक्की के लिए अपने संस्थान स्थापित किए हैं। हमने इसकी भी व्यवस्था की है कि अन्य समुदायों के बच्चे जो उस विद्यालय में आते हैं, उनको इस प्रकार के शिक्षणों को ग्रहण करने के लिए मजबूर नहीं किया जायेगा जब तक कि अभिभावक इसकी स्वीकृति नहीं देते क्योंकि ये शिक्षण निस्संदेह और स्पष्टतया उस विशेष समुदाय के धर्म के बारे में होंगे। जैसा कि मैं कहता हूँ, हमने यह दोहरा उद्देश्य पा लिया है और जो धार्मिक शिक्षण देना चाहते हैं वे अपने संस्थान स्थापित करने तथा राज्य से सहायता मांगने के लिए और धार्मिक शिक्षण देने के लिए स्वतंत्र हैं, लेकिन वे इस धार्मिक शिक्षण को अन्य समुदायों पर थोपने की स्थिति में नहीं होंगे। इसलिए यह कहना उचित नहीं होगा कि इस अनुच्छेद के माध्यम से हमने धार्मिक शिक्षण पर पूर्णतया रोक लगा दी है। प्रत्येक समुदाय को कुछ शर्तों के अधीन अपने उद्देश्यों के अनुसार धार्मिक शिक्षण के पठन-पाठन की स्वतंत्रता दी गई है। पाबंदी इस बात पर है, कि राज्य पूर्णतया सार्वजनिक कोष द्वारा सम्पोषित संस्थानों में धार्मिक शिक्षण देने के लिए स्वतंत्र नहीं होगा।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रा : क्या मैं माननीय सदस्य से एक प्रश्न पूछ सकता हूँ? उदाहरण के लिए, संस्कृत महाविद्यालय कलकत्ता की तरह का एक शैक्षणिक संस्थान है जिसका प्रबंध पूर्णतया सरकारा द्वारा किया जाता है। वहाँ वेद, स्मृति, गीता, और उपनिषद् पढ़ाये जाते हैं। इसी तरह बंगाल के कई भागों में संस्कृत संस्थान हैं जहाँ इन विषयों पर शिक्षा दी जाती है। आप अनुच्छेद 22(1) में व्यवस्था करते हैं कि उस संस्थान द्वारा कोई धार्मिक शिक्षण नहीं दिया जा सकता जो पूर्णतया राज्य के कोष से संचालित हैं। ये पूर्णतया राज्य कोष द्वारा सम्पोषित है। मेरा प्रश्न है, क्या इसकी इस तरह व्याख्या की जायेगी कि वेदों, या स्मृतियों, या शास्त्रों, या उपनिषदों का शिक्षण धार्मिक शिक्षण के तहत आता है? उस स्थिति में इन सभी संस्थानों को बंद करना पड़ेगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरे मित्र श्रीमान् मैत्रा ने जिन संस्थानों का जिक्र किया है उनके चरित्र के बारे में मुझे उचित जानकारी नहीं है और इसलिए यह मेरे लिए काफी कठिन है।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रा : उदाहरण के लिए, सरकारी संस्कृत महाविद्यालयों और विद्यालयों में गीता, उपनिषद, वेद तथा इसी तरह के विषयों की शिक्षा को लें।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरा अपना विचार यह है कि धार्मिक शिक्षण को अनुसंधान या अध्ययन से भिन्न किया जाए। ये बहुत भिन्न बातें हैं। धार्मिक शिक्षण का अर्थ यह है। उदाहरण के लिए, जहाँ इस्लाम धर्म का संबंध है, इसका अर्थ है कि आप एक ईश्वर में विश्वास रखते हैं, कि आप विश्वास करते हैं कि पैगम्बर संत ही आखिरी संत हैं और आगे इसी प्रकार, दूसरे शब्दों में जिसे हम धर्म सिद्धांत कहते हैं। एक धर्म , सिद्धांत अध्ययन से बिल्कुल भिन्न है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : क्या मैं एक मिनट के लिए बीच में बोल सकता हूँ। कलकत्ता विश्वविद्यालय के महाविद्यालयों में निरीक्षक के रूप में, मैं संस्कृत महाविद्यालय में निरीक्षण किया करता था, जहाँ जैसा कि पंडित मैत्रा को ज्ञात होगा, विद्यार्थियों को केवल विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम की पुस्तकें ही नहीं पढ़नी पड़ती हैं बल्कि इसके बाहर संस्कृत साहित्य की पुस्तकें, वास्तव में संस्कृत की पवित्र पुस्तकें, भी पढ़नी पड़ती हैं, लेकिन इसे कभी धार्मिक शिक्षण नहीं माना गया; इसे संस्कृति के एक पाठयक्रम की तरह ही माना गया।

पंडित लक्ष्मीकांत मैत्रा : मेरा प्रश्न यह है। यह अनुसंधान की बात नहीं है। यह मात्र धर्म या धार्मिक शाखाओं के शिक्षण की है।

मैं पूछता हूँ कि गीता और उपनिषदों पर भाषण देने को धार्मिक शिक्षण देना माना जाएगा? उपनिषदों का प्रतिपादन अनुसंधान का मामला नहीं है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : यह विद्यार्थियों को शिक्षा देने का प्रश्न है और मैं कम से कम एक उदाहरण ऐसा दे सकता हूँ जहाँ संस्कृत महाविद्यालय में एक मुसलमान विद्यार्थी था।

श्री एच.बी. कामथ : स्पष्टीकरण के प्रश्न पर, क्या मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर कहना चाहते हैं कि उन विद्यालयों में जो एक समुदाय द्वारा विशेषकर केवल अपने समुदाय के शिष्यों के लिए चलाये जा रहे हैं उनमें धार्मिक शिक्षण अनिवार्य नहीं होना चाहिए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : यह उन पर छोड़ दिया गया है। यह उसी समुदाय पर इसे अनिवार्य करने या न करने के लिए छोड़ दिया गया है। हमने जो किया है वह यह निर्धारित किया है कि उस समुदाय को उन समुदायों के बच्चों के लिए इसे अनिवार्य करने का अधिकार नहीं होगा जो उस समुदाय से संबंधित नहीं है जो विद्यालय चला रहा है।

प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना : जिस तरीके से आपने शब्द 'धार्मिक शिक्षण' को समझाया है उसे संविधान में स्थान मिलना चाहिए।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरे विचार से अदालतें ही इस मामले को तय करेंगी, जब यह मामला उनके समक्ष जाएगा।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : माननीय सदस्य ने धारा (3) के विलोपन को स्वीकार करने का प्रस्ताव रखा है। यह एक व्याख्यात्मक नोट है। मैं पूछता हूँ कि क्या इसका विलोपन इसमें निहित सिद्धांत के प्रयोग को विलोपन के अलावा भी रद्द कर देगा।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : मेरा विचार है कि धारा (3) वास्तव में अनावश्यक है। यह एक समुदाय द्वारा सम्पोषित विद्यालय से संबंधित है। विद्यालय की समयावधि के पश्चात् समुदाय इसका इच्छानुसार प्रयोग करने के लिए स्वतंत्र है। संविधान में बिल्कुल भी कोई प्रावधान नहीं होना चाहिए।

अब, महोदय, एक दूसरा प्रश्न है जिसके बारे में मैं उल्लेख करना चाहूँगा और वह प्रश्न प्रो. के.टी. शाह द्वारा रखा गया है और इस प्रकार है कि प्रतिबंध राज्य को ऐसे संस्थानों में धार्मिक शिक्षण देना जारी रखने की अनुमति देता है जिनकी न्यासिता राज्य ने स्वीकार कर ली है। मैं नहीं समझता कि वास्तव में प्रो. के.टी. शाह द्वारा उठाया गया प्रश्न कुछ अधिक अर्थपूर्ण है। मेरे विचार से उन्हें अहसास होगा कि ऐसे भी मामले रहे हैं जहाँ इतिहास के शुरू के दौर में संस्थानों को धार्मिक शिक्षण देने के उद्देश्य से स्थापित किया गया और कुछ कारणों के चलते उनके पास प्रबंध करने के लिए लोग नहीं थे और उनके न्यासी के रूप में राज्य ने उन्हें अपने नियंत्रण में ले लिया। अब यह स्पष्ट है कि जब आप एक न्यास को स्वीकार करते हैं तो उस न्यास की आपको हर प्रकार से पूर्ति करनी चाहिए। यदि राज्य ने इन संस्थानों को पहले ही अपने नियंत्रण में ले लिया है और स्वयं को न्यासी की स्थिति में रख लिया है तब, स्पष्टतया, आप सरकार से यह नहीं कह सकते कि इस सच्चाई के बावजूद आप इन संस्थानों में धार्मिक शिक्षण दे रहे हैं, भविष्य में आप ऐसा शिक्षण नहीं देंगे। मैं समझता हूँ कि यह केवल राज्य को विश्वास भंग की अनुमति प्रदान करना ही नहीं होगा बल्कि उसे विश्वास भंग करने के लिए मजबूर करना होगा। इसलिए स्थिति को स्पष्ट करने के लिए, हमने सोचा कि ऐसे प्रतिबंध को शामिल करना आवश्यक और वांछनीय था जो निस्संदेह कुछ सीमा तक अनुच्छेद 20 की उपधारा (1) में निहित मूल सिद्धांत के संगत नहीं है। महोदय, मैं आशा करता हूँ, सदन पाएगा कि यह अनुच्छेद जैसा है, संतोषप्रद है और इसे स्वीकार किया जा सकता है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं अब एक के बाद एक, संशोधनों को मतदान के लिए रख रहा हूँ।

[कुल मिलाकर, 12 संशोधन अस्वीकृत हुए। केवल श्रीमान् कपूर का संशोधन जैसा नीचे दिखाया गया है डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्वीकार किया गया और अपना लिया गया।]

प्रश्न है–

"कि अनुच्छेद 22 की धारा (3) को निकाल दिया जाए।"

[अनुच्छेद 22, जैसा कि संशोधित किया गया, अपना लिया गया और संविधान में जोड़ दिया गया है।]

अनुच्छेद 22-अ (नया अनुच्छेद)

*[*]***प्रो. के.टी. शाह :** महोदय, मैं प्रस्ताव करने की प्रार्थना करता हूँ -

"कि अनुच्छेद 22 के बाद, अधोलिखित नया अनुच्छेद अन्तर्विष्ट किया जाए-

'22 अ। धार्मिक संगठनों के प्रमुखों के सभी विशेषाधिकार, निरापदतायें या विमुक्तियां समाप्त कर दी जाएंगी।"

* * * *

♣**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, यह संशोधन अपने उद्देश्य के लिए काफी प्रशंसनीय है लेकिन मैं नहीं जानता कि क्या यह संशोधन कतई आवश्यक है। प्रथम तो, ये सभी उपाधियों जो धार्मिक पदाधिकारियों के पास होती हैं भविष्य में राज्य द्वारा प्रदान नहीं की जा सकती क्योंकि हमने मूलाधिकारों में पहले ही शामिल कर लिया है कि कोई भी उपाधि प्रदान नहीं की जाएगी और स्पष्टतया इस प्रकार की कोई भी उपाधि, राज्य द्वारा प्रदान नहीं की जा सकती। दूसरे, जैसा कि शायद मेरे माननीय मित्र जानते हैं, किसी निश्चित उपाधि जिसे एक व्यक्ति स्वयं के लिए चुनता है को लागू करने के लिए कोई याचना स्वीकार्य नहीं हो सकती। यदि कोई व्यक्ति स्वयं को शंकराचार्य कहता है तो याचना का कोई अधिकार स्वीकार्य नहीं हो सकता। नागरिक प्रक्रिया संहिता के भाग 9 में यह पूर्णतया स्पष्ट कर दिया गया है कि जिसे आप प्रतिष्ठा कह सकते हैं आज उसको लागू करने के लिए कोई याचना स्वीकार्य नहीं हो सकती। यदि प्रतिष्ठा के साथ किसी प्रकार की सम्पत्ति या कुछ परिलाभ जुड़े हैं तो वह एक अलग किस्म का मामला है, लेकिन मात्र प्रतिष्ठा इस कार्यवाही का आधार कतई नहीं हो सकती।

सुख-सुविधाओं के बारे में जिनका शायद उनमें से कुछ लोग उपभोग करते हैं, यह निश्चित रूप से कार्यपालिका और विधायिका की शक्ति के अंतर्गत है कि ये उन्हें वापस ले सकती हैं। यह बिल्कुल सच है, जैसा कि मेरे माननीय मित्र श्रीमान् चौधरी ने कहा कि कुछ मामलों में मजिस्ट्रेट द्वारा सम्मन भेजे जाते हैं। दूसरे मामले में जब संबंधित व्यक्ति जीवन में बड़े पद पर पहुँच जाता है, तो सम्मन भेजने के बजाय वह उसे पत्र भेजता है। कुछ व्यक्ति, जब अदालतों में उपस्थित होते हैं तो उन्हें खड़ा रखा जाता है और कुछ को कुर्सियां पेश की जाती हैं। ये सभी मामले प्रतिष्ठा के हैं जो पूर्णतया सरकार और विधायिका के क्षेत्र में हैं। यदि किसी नागरिक के प्रति कोई अनियमितता, भेदभाव या असमानता बरती जाती है तो इन अनियमितताओं को दूर करने के लिए विधायिका और कार्यपालिका निश्चय ही स्वतंत्र हैं। इसलिए मैं समझता हूँ कि इस संशोधन की बिल्कुल भी आवश्यकता नहीं है।

[प्रो. शाह का प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।]

---

[*] सी.ए.डी., अंक VII, 7 दिसम्बर, 1948, पृ. 888

♣ सी.ए.डी., अंक VII, 7 दिसम्बर, 1948, पृ. 891

अनुच्छेद 23 (जारी)

*__श्रीमान् उपाध्यक्ष (डॉ. एच.सी. मुखर्जी) :__ हम अनुच्छेद 23 पर पुनः चर्चा आरंभ करेंगे जिसके प्रति दो संशोधन प्रस्तावित किए गये हैं। संशोधन सं. 677 राष्ट्रभाषा और लिपि से संबंधित है अतः स्थगित किया जाता है। संशोधन सं. 678, 679, 680 और 681 साथ-साथ लिए जाएंगे क्योंकि ये एक जैसे अर्थ वाले हैं। मैं संशोधन सं. 678 को प्रस्तावित करने की अनुमति दे सकता हूँ।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) : महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूँ -

"कि अनुच्छेद 23 की धारा (1) में, शब्दों 'लिपि और संस्कृति' के लिए शब्दों 'लिपि या संस्कृति' को प्रतिस्थापित किया जाए।"

परिवर्तन केवल 'और' से 'या' का है और परिवर्तन की आवश्यकता इतनी स्पष्ट है कि मैं नहीं सोचता कि मुझे इसके बारे में कुछ कहने की आवश्यकता है।

* * * *

#**श्रीमान् उपाध्यक्ष** - संशोधन नं. 679-

श्री एच.बी. कामथ (सी.पी. एवं बेरार - जनरल) : मुझे डॉ. अम्बेडकर ने पहले से ही रोक दिया है। इसलिए मैं संशोधन सं. 679 को प्रस्तावित नहीं करता।

श्रीमान् उपाध्यक्ष - क्या आप संशोधन सं. 680 के लिए अनुरोध करना चाहते हैं-

मोहम्मतद इस्माइल साहिब (मद्रास - जनरल) : हाँ।

श्रीमान् उपाध्यक्ष - क्या आप चाहते हैं कि 681 प्रथम भाग को मतदान के लिए रखा जाना चाहिए?

प्रो. के.टी. शाह (बिहार - जनरल) : प्रथम भाग का डॉ. अम्बेडकर के संशोधन द्वारा समावेश कर लिया गया है। मैं दूसरे भाग का प्रस्ताव करना चाहूँगा।

* * * *

@**श्री जयपाल सिंह (बिहार - जनरल) :** श्रीमान् उपाध्यक्ष, महोदय, मुझे इस संशोधन का स्वागत करते हुए बहुत अधिक खुशी है, अधिक इसलिए क्योंकि डॉ. अम्बेडकर के द्वारा इसे उपयुक्त ढंग से संशोधित कर दिया गया है और मैं आशा करता हूँ कि यह संशोधन सदन द्वारा स्वीकार कर लिया जाएगा। महोदय, मेरे विचार से, यह अनुच्छेद भारत के लिए एक नये युग का सूत्रपात करता प्रतीत होता है ....

* * * *

* सी.ए.डी., अंक VII, 8 दिसम्बर, 1948, पृ. 895

\# वही, पृष्ठ 895

@ सी.ए.डी., अंक VII, 8 दिसम्बर, 1948, पृ. 907

***श्रीमान् उपाध्यक्ष :** डॉ. अम्बेडकर।

प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना (संयुक्त प्रांत - जनरल) : महोदय, मुझे कुछ कहना है, और ....

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं चर्चा को और अधिक समय तक जारी रखने की अनुमति नहीं दे सकता और इस संबंध में मेरा फैसला अन्तिम है।

प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना : कुछ लोगों को अनुमति दे देना और दूसरों को न देना, उचित नहीं है।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : मैं जानता हूँ कि यह अनुचित माना जाता है। डॉ. अम्बेडकर।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : महोदय, अनुच्छेद 23 के प्रति प्रस्तावित किए गये संशोधनों में से, मैं पंडित ठाकुर दास भार्गव द्वारा संशोधन सं. 26 से लेकर संशोधन सं. 687 तक स्वीकार कर सकता हूँ। मैं संशोधन सं. 31 से संशोधन सं. 690 तक, पंडित ठाकुरदास भार्गव द्वारा ही प्रस्तावित स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ। अन्य प्रस्तावित संशोधनों में से मेरे विचार से केवल दो ही संशोधनों का उत्तर देने की आवश्यकता है, वे श्रीमान् लारी द्वारा प्रस्तावित संशोधन सं. 676 और सं. 714 हैं। मैं सोचता हूँ कि यह वांछनीय होगा, यदि मैं अपने उत्तर के दौरान इन संशोधनों से उत्पन्न प्रश्नों को अलग-अलग कर देता हूँ।

संशोधन सं. 676 अल्पसंख्यकों के सांस्कृतिक अधिकार से संबंध रखता है, जबकि दूसरा संशोधन, सं. 714 प्रश्न उठाता है कि क्या किसी अल्पसंख्यक को संविधान में निहित आरंभिक अवस्था में शिक्षा को मातृभाषा में प्राप्त करने का मूलाधिकार नहीं होना चाहिए?

प्रथम प्रश्न के बारे में, मेरे मित्र श्रीमान् लारी और मेरे मित्र श्रीमान् मौलाना हसरत मोहानी दोनों ही ने प्रारुप समिति पर इस सदन द्वारा मूलाधिकार में निहित मूल सिद्धांत को बदलने का आरोप लगाया है। यह बिल्कुल सही है कि पैरा 8 की मूलाधिकारी समिति की भाषा प्रारुप समिति द्वारा बदल दी गई है, लेकिन मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि प्रारूप समिति के पास भाषा में फेरबदल करने के लिए पर्याप्त आधार था।

पहली बात जो मैं सदन में पेश करना चाहता हूँ कि प्रारुप समिति ने मूलाधिकारों के पैरा 18 की मात्रा को बदलना क्यों जरूरी समझा, वह यह है कि मौलिक मूलाधिकारों में निहित पैरा को पढ़ने पर यह मालूम पड़ जाएगा कि उसमें प्रयुक्त शब्द 'अल्पसंख्यक' अपने उस पारिभाषिक अर्थ में प्रयुक्त नहीं हुआ है जिस अर्थ में हम 'अल्पसंख्यक' शब्द का प्रयोग कुछ राजनीतिक सुरक्षाओं के उद्देश्य जैसे - विधायिका में प्रतिनिधित्व, सेवाओं में प्रतिनिधित्व आदि के लिए करने के आदी हैं। यह शब्द अल्पसंख्यक के लिए न केवल शब्द के पारिभाषिक अर्थ को दर्शाने के लिए किया जाता है बल्कि यह उन अल्पसंख्यकों को भी शामिल करने के लिए प्रयुक्त होता है जो पारिभाषिक अर्थ में 'अल्पसंख्यक' नहीं हैं;

* वही, पृष्ठ 922-25

लेकिन फिर भी वे सांस्कृतिक और भाषाई अर्थ में अल्पसंख्यक हैं। उदाहरणार्थ, इस अनुच्छेद 23 के उद्देश्य हेतु, यदि निश्चित संख्या में लोग मद्रास से आते हैं और किन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बम्बई में बस जाते हैं तो यद्यपि ये पारिभाषिक अर्थ में 'अल्पसंख्यक' नहीं होंगे, पर वे सांस्कृतिक अल्पसंख्यक होंगे। इसी तरह, यदि निश्चित संख्या में मराठी महाराष्ट्र से जाकर बंगाल में बस जाते हैं तो यद्यपि वे पारिभाषिक अर्थ में अल्पसंख्यक नहीं भी हो सकते हैं लेकिन वे सांस्कृतिक और भाषाई अर्थ में बंगाल में अल्पसंख्यक होंगे। यह अनुच्छेद संस्कृति, भाषा और लिपि के मामलों में केवल उन अल्पसंख्यकों को ही सुरक्षा देने का इरादा नहीं रखता जो पारिभाषिक अर्थ में अल्पसंख्यक हैं बल्कि उन अल्पसंख्यकों को भी सुरक्षा देंगे का इरादा रखता है जो व्यापक अर्थ में अल्पसंख्यक हैं जैसा मैंने अभी स्पष्ट किया है। यही कारण है जिसकी वजह से हमने 'अल्पसंख्यक' शब्द को निकाल दिया क्योंकि हमने महसूस किया कि शब्द की संकुचित अर्थ में व्याख्या की जा सकती थी कि जब इस सदन का इरादा जब इसने अनुच्छेद 18 पारित किया शब्द 'अल्पसंख्यक' को कहीं अधिक व्यापक अर्थ में प्रयोग करना था ताकि उन लोगों को सांस्कृतिक सुरक्षा दी जा सके जो पारिभाषिक अर्थ में अल्पसंख्यक थे पर थे फिर भी अल्पसंख्यक। यह महसूस किया गया कि यह सुरक्षा इसलिए जरूरी थी और इसका सीधा सा यह कारण था कि जो लोग एक प्रांत से दूसरे प्रांत में जाते हैं और वहाँ बस जाते हैं, वे वहाँ हमेशा के लिए नहीं बसते। वे स्वयं को उस प्रांत से उखाड़ते नहीं हैं, जहाँ से वे स्थानांतरित हुए हैं बल्कि वे उसके साथ अपने संबंध रखते हैं। वे शादी के उद्देश्य से अपने प्रांत में वापस जाते हैं। वे अपने प्रांत में और भी विभिन्न कारणों से वापस चले जाते हैं, और यदि यह सुरक्षा उन्हें नहीं दी जाती है जब वे स्थानीय विधायिका के अधीन होते हैं और वह स्थानीय विधायिका उनको अपनी संस्कृति संरक्षित रखने का अवसर नहीं देती है तो इन सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों को अपने प्रांतों में वापस जाने में और स्वयं को मूल जनसंख्या जिससे वे संबंधित हैं में सम्मिलित करने में कठिनाई होगी। एक प्रांत से दूसरे प्रांत में स्थानांतरण की स्थिति का सामना करने के लिए हमने महसूस किया कि यह वांछनीय है कि इस तरह का कोई प्रावधान संविधान में शामिल किया जाना चाहिए।

मेरे विचार से एक अन्य बात जो हमें अनुच्छेद 23 पढ़ते समय ध्यान में रखनी चाहिए वह यह है कि राज्य के लिए कर्त्तव्य या भार निर्धारित नहीं करता। यह नहीं कहता कि, उदाहरण के लिए, जब मद्रास के लोग बम्बई आते हैं तब बम्बई की सरकार को तमिल भाषा या आन्ध्र की भाषा या किसी अन्य भाषा में शिक्षा देने की परियोजना के लिए अर्थप्रबंध करना होगा। राज्य के ऊपर कोई बोझ नहीं डाला गया है। एकमात्र प्रतिबंध जो अनुच्छेद 23 द्वारा लगाया गया है वह है कि यदि वहाँ कोई सांस्कृतिक अल्पसंख्यक हैं जो अपनी भाषा, लिपि और संस्कृति को संरक्षित रखना चाहते हैं तो राज्य कानून द्वारा उनके ऊपर कोई स्थानीय या कोई अन्य संस्कृति नहीं थोपेगा। इसलिए इस अनुच्छेद को वास्तव में कहीं अधिक व्यापक अर्थ में पढ़ना चाहिए और यह केवल उन्हीं अल्पसंख्यकों पर ही लागू नहीं होता जिन्हें मैं पारिभाषिक अल्पसंख्यक कहता

हूँ जैसा कि हम संविधान में प्रयोग करते हैं। इसी कारण हमने मूल धारा में से शब्द 'अल्पसंख्यक' निकाल दिया है।

लेकिन जबकि शब्द 'अल्पसंख्यक' को निकाल दिया गया है मेरे मित्र श्रीमान् लारी यह देखना भूल गये कि हमने उस सुरक्षा में बहुत बड़ा सुधार कर दिया है जो उस मूल अनुच्छेद में दी गई थी जो मूलाधिकारों में था। मूल अनुच्छेद जिस रूप में यह मूलाधिकारों में था, ने राज्य के लिए केवल एक प्रकार का कर्त्तव्य निर्धारित कर दिया कि राज्य उनकी संस्कृति, उनकी भाषा, और उनकी लिपि की रक्षा करेगा। मूल अनुच्छेद ने इन विभिन्न समुदायों को कोई मूलाधिकार नहीं दिया था। इसने केवल कर्त्तव्य कर दिया और एक धारा जोड़ दी कि जबकि राज्य को भाषा, संस्कृति और लिपि के इन अधिकारों पर पाबंदियां लगाने का अधिकार हो सकता है लेकिन राज्य ऐसे कानून नहीं बनायेगा जिन्हें दमनकारी कहा जा सके। यद्यपि ऐसी बात नहीं है कि राज्य को इन मामलों को प्रभावित करने वाले किसी कानून को बनाने का अधिकार नहीं है, लेकिन कानून दमनकारी नहीं होगा। अब मुझे इसके बारे में पूरा यकीन है कि मूल अनुच्छेद में अनुदत्त सुरक्षा बहुत असुरक्षित थी। यह राज्य की सदिच्छा पर निर्भर थी। वर्तमान स्थिति जैसी आप पाते हैं, अनुच्छेद 23 में बतलायी गई है कि हमने इसे मूलाधिकार में बदल दिया है, ताकि यदि कोई राज्य ऐसा कानून बना देता है जो इस अनुच्छेद के प्रावधानों के अप्रासंगिक है तो वह कानून अनुच्छेद 8, जिसे हम पहले ही पारित कर चुके हैं वे आधार पर अमान्य हो जायेगा।

इसलिए, मेरे मित्र श्रीमान् लारी और मौलाना देखेंगे कि उनके दृष्टिकोण में मूल अनुच्छेद में जो कुछ था उससे बेहतर सुधार किया गया है। प्रारुप समिति द्वारा बदलाव के फलस्वरूप निश्चित रूप से स्थिति बदतर नहीं हुई है।

दूसरे प्रश्न पर आते हुए, अर्थात्, कि क्या इस संविधान में इतने अधिक शब्दों में स्पष्ट रूप से यह सम्मिलित नहीं करना चाहिए कि मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार एक मूलाधिकार है – मैं एक बात कहना चाहता हूँ और वह है कि मैं नहीं समझता कि विवेकशील व्यक्तियों के बीच कोई विवाद इस बात को लेकर हो सकता है कि यदि प्राथमिक शिक्षा लाभप्रद है और इसे वास्तविकता प्रदान करनी है तो यह शिक्षा बच्चे को उसकी मातृभाषा में दी जानी चाहिए। अन्यथा प्राथमिक शिक्षा महत्वहीन और अर्थहीन होगी। मुझे विश्वास है कि इस विषय में कोई विवाद नहीं है और यह कहने के लिए मैं नही समझता कि मुझे उस सरकार की प्रामाणिकता की आवश्यकता है जिससे मैं संबंध रखता हूँ। यह एक सर्वमान्य सिद्धांत है और यह इतना तर्कसंगत है कि इस पर विवाद हो ही नहीं सकता। प्रश्न है कि क्या हमें इसे कानून में शामिल करना चाहिए या संविधान में। मैं निःसंकोच कहना चाहता हूँ कि इस मामले को संविधान के विशेष अनुच्छेद में रखने में कठिनाई है। यह सच है, जैसा कि मेरे मित्र पंडित कुँजरू ने अवलोकन किया, कि इस प्रकार के मूलाधिकार को लागू करने में जो कठिनाई महसूस की जा सकती थी वह कुछ हद तक मेरे मित्र श्रीमान् करीमुद्दीन के द्वारा प्रस्तावित इस संशोधन से कम या दूर हो गई है कि इस प्रकार का सिद्धांत उसी स्थिति में लागू होना चाहिए जहाँ एक पर्याप्त संख्या ऐसे

विद्यार्थियों की उपलब्ध है। मैं अपने मित्र श्रीमान् करीमुद्दीन का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहूँगा कि उनका संशोधन वास्तव में उस कठिनाई को दूर नहीं करता है जो उनके सिद्धांत को स्वीकार करने में है। पहली, यह कौन तय करेगा कि पर्याप्त संख्या यह है? मुझे एक उदाहरण देने दें। मान लीजिए कि मामले को कार्यपालिका पर छोड़ा जाना है, जैसा कि यह अवश्य छोड़ा जाना चाहिए, और कार्यपालिका ने एक नियम बना दिया कि जब एक प्राथमिक विद्यालय में शिक्षा चाहने वाले ऐसे 49 प्रतिशत बच्चे होंगे तब और केवल तब इसे एक पर्याप्त संख्या माना जायेगा। क्या यह उन्हें संतुष्ट कर देगा यदि इस प्रकार का प्राधिकार कार्यपालिका के लिए छोड़ दिया जाता है? उसके बाद, मान लीजिए, आप इस मामले को वाद योग्य मामला बना देते हैं, क्या निस्संदेह यह होगा जब आप इसे मूलाधिकार के तौर पर शामिल कर रहे हैं और कोई मूलाधिकार तब तक मूल नहीं है जब तक यह वाद योग्य नहीं है, क्या यह सही है, क्या यह वांछनीय है कि यह मामला कि किसी विद्यालय में एक पर्याप्त संख्या उपलब्ध थी या नहीं कानून की अदालत में घसीटा जाये अदालत द्वारा तय किए जाने के लिए? मैं कठिनाई से बाहर निकलने का और कोई उपाय नहीं देखता। या तो आपको शब्द 'पर्याप्त' की व्याख्या आवश्यक रूप से कार्यपालिका पर छोड़ देनी चाहिए या फिर न्यायपालिका पर और मेरे विचार में अल्पसंख्यक के लिए अपना उद्देश्य पाने के लिए इनमें से कोई भी तरीका सुरक्षित नहीं होगा। इसलिए मेरा कहना है कि हमें इस सच्चाई से संतुष्ट होना चाहिए कि यह एक ऐसा सर्वमान्य सिद्धांत है कि कोई प्रांतीय सरकार जनसंख्या के एक बहुत बड़े भाग के शैक्षणिक अधिकारों को क्षति पहुँचाये बगैर इसे न्यायसंगत ढंग से रद्द नहीं कर सकती। इसलिए, मैं अनुरोध करता हूँ कि अनुच्छेद, यथासंशोषत रूप में सदन द्वारा स्वीकार कर लिया जाना चाहिए।

* * * *

[अधोलिखित 3 संशोधनों को स्वीकार कर लिया गया। 6 संशोधन अस्वीकृत हुए।]

(1) "कि अनुच्छेद 23 की धारा (1) में, शब्दों 'लिपि और संस्कृति' के लिए शब्दों 'लिपि या संस्कृति' को प्रतिस्थापित किया जाए।"

(2) "कि अनुच्छेद 23 की धारा (3) में, शब्द 'समुदाय' जहाँ कहीं भी यह आया है निकाल दिया जाए।"

(3) "कि अनुच्छेद 23 की धारा (2) के लिए अधोलिखित को प्रतिस्थापित किया जाए–

"किसी नागरिक को राज्य द्वारा सम्पोषित किसी शैक्षणिक संस्थान या ऐसे किसी शैक्षणिाक संस्थान जो राज्य कोष से सहायता प्राप्त करता है, में केवल धर्म, प्रजाति, जाति, भाषा या इनमें से किसी के आधार पर प्रदेश से वंचित नहीं किया जायेगा, और अनुच्छेद 23 की उपधाराओं (अ) और (ब) को पुनः अनुच्छेद 23-अ की संख्या दी जाए।"

[अनुच्छेद 23, यथासंशाधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।]

अनुच्छेद 24

*श्री टी. टी. कृष्णमाचारी (मद्रास - जनरल) :** इस सदन के बहुत से माननीय सदस्यों की इच्छा है कि इस अनुच्छेद को अभी नहीं लिया जाना चाहिए बल्कि बाद में लिया जाना चाहिए, क्योंकि हम वास्तव में इसके प्रति विभिन्न संशोधनों पर एक समझौते पर पहुँचने के लिए विचार कर रहे हैं और डॉ. अम्बेडकर मुझसे सच्चाई के मद्देनजर सहयोग करेंगे।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बम्बई - जनरल) : हाँ, महोदय, मैं निवेदन करता हूँ कि अनुच्छेद 24 को पीछे रख दिया जाए।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : क्या सदन की यही इच्छा है?

माननीय सदस्य : हाँ।

श्री जेड.एच. लारी (संयुक्त प्रांत - मुसलमान) : तब अनुच्छेद 15 के बारे में, महोदय?

श्रीमान् उपाध्यक्ष : उस अनुच्छेद पर विचार फिलहाल स्थगित कर दिया गया है।

* * * *

अनुच्छेद 25

♣**माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** महोदय, मैं नहीं सोचता कि क्योंकि यह अनुच्छेद उन अन्य अनुच्छेदों के प्रावधानों के अधीन है जिनका मेरे माननीय मित्र श्रीमान् करीमुद्दीन ने हवाला दिया है, हमारे लिए इस अनुच्छेद पर अभी विचार करना सम्भव नहीं है, क्योंकि, जैसा देखा जाएगा, मान लें कि हम अनुच्छेद 285 में या इस मामले से संबंधित अन्य अनुच्छेद में परिवर्तन करते है, तो हम आसानी से अनुच्छेद 25 में परिणामी परिवर्तन कर सकते हैं। इसलिए यह एक रोक नहीं होगी। इसलिए हमारे लिए अनुच्छेद 25 पर इसमें किये जाने वाले किसी परिणामी परिवर्तन के प्रति बिना किसी पूर्वाग्रह के अभी विचार करना बिल्कुल सम्भव है। मान लें, कुछ परिवर्तन उन अनुच्छेदों में किए जाते हैं जो ....

काजी सईद करीमुद्दीन : तब क्यों न इसे स्थगित कर दें?

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : नहीं।

श्रीमान् उपाध्यक्ष : प्रश्न है -

"कि इस अनुच्छेद पर विचार तब तक के लिए स्थगित कर दिया जाए जब इस प्रारुप संविधान के भाग XI पर विचार किया जाएगा।

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

* * * *

* सी.ए.डी., अंक VII, 9 दिसम्बर, 1948, पृ. 930

♣ वही, पृष्ठ 931

#**श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद :** शायद यहाँ कोई मुद्रण–दोष है, मैं नही जानता। यदि यहाँ कोई मुद्रण–दोष नहीं है तो यह निश्चित रूप से टिप्पणी के लिए खुला है कि यह अस्पष्ट है।

एक मात्र प्रश्न जो मेरे मस्तिष्क में था वह सही कार्य विवरण द्वारा सर्वोच्च न्यायालय में कारवाई करने के अधिकार की गारंटी था। मैं लोगों को दूसरी अदालतों में भी कार्रवाई करने की अनुमति देना चाहता हूँ। यदि यहाँ एक मूलाधिकार अनुदत्त है और यदि कोई गरीब व्यक्ति सर्वोच्च न्यायालय में कार्रवाई करने के लिए मजबूर होता है ....

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : उपधारा (3) देखें।

श्रीमान् नज़ीरुद्दीन अहमद : वह उपधारा विशेष रूप से उल्लिखित कुछ अन्य अदालतों को ही इस विषय पर विचार करने की शक्ति देती है, लेकिन मैं इसे और सामान्य बनाना चाहता था, कि मूलाधिकार किसी भी अदालत में प्रावेदन द्वारा लागू किये जा सकते हैं..................

सी.ए.डी., अंक VII, 9 दिसम्बर, 1948, पृ. 931

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
DR. AMBEDKAR FOUNDATION

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय

MINISTRY OF SOCIAL JUSTICE AND EMPOWERMENT

भारत सरकार

GOVERNMENT OF INDIA

☎ 23320571
23320589
23320576
FAX : 23320582

निदेशक
DIRECTOR

15, जनपथ,
15, JANPATH
नई दिल्ली - 110001
NEW DELHI-110001

दिनांक – 31.10.2019

रियायत नीति (Discount Policy)

सक्षम प्राधिकारी द्वारा यह निर्णय लिया गया है कि पहले के नियमों के अनुसार CWBA वॉल्यूम के संबंध में रियायत नीति (Discount Policy) जारी रखें। तदनुसार, CWBA इंग्लिश वॉल्यूम (डिलक्स संस्करण–हार्ड बाउंड) के एक पूर्ण सेट की कीमत और CWBA हिंदी वॉल्यूम (लोकप्रिय संस्करण–पेपर बाउंड) के एक पूरे सेट की कीमत निम्नानुसार होगी :

क्र.सं.	सीडब्ल्यूबीए सेट	रियायती मूल्य प्रति सेट
	अंग्रेजी सेट (डिलक्स संस्करण) (वॉल्यूम 1 से वॉल्यूम 17)– 20 पुस्तकें।	रू 2,250/–
	हिंदी सेट (लोकप्रिय संस्करण) (खंड 1 से खंड 40 तक)– 40 पुस्तकें।	रू 1073/–

2. एक से अधिक सेट के खरीदारों को सेट की मूल लागत (Original Rates) यानी रू 3,000/–(अंग्रेजी के लिए) और रू 1,430/–(हिंदी के लिए) पर छूट मिलेगी जो कि निम्नानुसार है।

क्र.सं.	विशेष	मूल लागत पर छूट का प्रतिशत
	रू 1000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	10%
	रू 1001–10,000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	25%
	रू 10,001–50,000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	33.3%
	रू 50,001–2,00,000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	40%
	रू 2,00,000/– से ऊपर की पुस्तकों की खरीद पर	45%

3. इच्छुक खरीदार प्रतिष्ठान की वेबसाइट : www.ambedkarfoundation.nic.in पर विवरण के लिए जा सकते हैं। संबंधित CWBA अधिकारी / पीआरओ को स्पष्टीकरण के लिए दूरभाष नंबर 011–23320588, पर कार्य दिवसों में पूर्वाह्न 11:30 बजे से शाम 5:30 बजे तक संपर्क किया जा सकता है।

(देबेन्द्र प्रसाद माझी)
निदेशक, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय (भाग-II)

ISBN (सेट) : 978-93-5109-129-5

रियायत नीति के अनुसार
सामान्य (पेपरबैक) खंड 01-40
के 1 सेट का मूल्य : ₹ 1073/-

प्रकाशक :

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार
15, जनपथ, नई दिल्ली – 110 001
फोन : 011–23320571
जनसंपर्क अधिकारी फोन : 011–23320588
वेबसाइट : http://drambedkarwritings.gov.in
ईमेल : cwbadaf17@gmail.com